# साहित्य अमृत

मासिक

वर्ष-२२ अंक-१० ❖ पृष्ठ ८४ | बैसाख-ज्येष्ठ, संवत्-२०७४ | मई २०१७



*संस्थापक संपादक*

**स्व. पं. विद्यानिवास मिश्र**

❖

*पूर्व संपादक*

**स्व. डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी**

❖

*संपादक*

**त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी**

❖

*प्रबंध संपादक*

**श्यामसुंदर**

❖

*संयुक्त संपादक*

**डॉ. हेमंत कुकरेती**

❖



*कार्यालय*

४/१९, आसफ अली रोड,
नई दिल्ली-११०००२

फोन : २३२८९७७७ • फैक्स : २३२५३२३३

इ-मेल : sahityaamrit@gmail.com

❖

**शुल्क**

एक अंक —₹ ३०

वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ ३००

वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ ४००

*विदेश में*

एक अंक—चार यू.एस. डॉलर (US$4)

वार्षिक—पैंतालीस यू.एस. डॉलर (US$45)

❖

प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी श्यामसुंदर द्वारा ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२ से प्रकाशित एवं ग्राफिक वर्ल्ड, १६८६, कूचा दखनीराय, दरियागंज, नई दिल्ली-२ द्वारा मुद्रित।



❖

साहित्य अमृत में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।


## इस अंक में

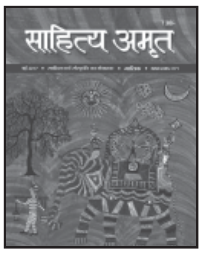



**संपादकीय**

**राजनीति के रंग, न्यायपालिका…** ४

**प्रतिस्मृति**

**यादों के घेरे**/ *शंकरदयाल सिंह* १०

**कहानी**

**ठीकरे का मोल**/ *उषा यादव* १२

**नागफनी का जंगल**/ *महेश चंद्र द्विवेदी* २०

**सहचरी**/ *मंजु मधुकर* २८

**जीवन की सार्थकता**/ *गोपाल नारायण आवटे* ३८

**बिरयानी**/ *ललित सिंह राजपुरोहित* ४४

**दरवाजा खोलो**/ *उपासना सियाग* ५६

**माँ बनने की चाह**/ *विजय कुमार सिंह* ६२

**आलेख**

**औपनिवेशक मानसिकता का साहित्य पर प्रभाव**/ *कमल किशोर गोयनका* १७

**कामागाटा मारू की दुखांत यात्रा**/ *ऊषा निगम* ३२

**विश्वास में बसा है विश्व**/ *शिवनंदन कपूर* ६०

**निबंध**

**सूरा सो पहचानिए**/ *रमेश नैयर* २४

**लघुकथा**

**पापी पेट**/ *हरदर्शन सहगल* २६

**परिवर्तन**/ *अभिषेक अवस्थी* ३१

**ऐजी, सुनते हो**/ *रितेंद्र अग्रवाल* ४०

**लड़खड़ाते कदम**/ *रीता गुप्ता* ५१

**कविता**

**हम पुरइन के पात हो गए**/ *बलवीर सिंह करुण* २७

**बोले यही कबीर**/ *घमंडीलाल अग्रवाल* ४१

**आज और कल**/ *राजेंद्र टेलर 'राही'* ४३

**इतिहास हँस रहा था**/ *रामकुमार आत्रेय* ५५

**सूरत नानी की लगे भली**/ *राजेंद्र निशेश* ७४

**ललित-निबंध**

**लोकोत्तर या लोकायित काव्य**/ *ओमप्रकाश सारस्वत* ४८

**व्यंग्य**

**फाइल मिल गई**/ *रमेशचंद्र* ४२

**राम झरोखे बैठ के**

**बड़े साहित्यकार का संकट**/ *गोपाल चतुर्वेदी* ३५

**साहित्य का भारतीय परिपार्श्व**

**जी गांधी**/ *कंनाडिना नारायणा* ५२

**लोक-साहित्य**

**मेरे गाँव की अद्‌भुत परंपरा—रासोत्सव**/ *प्रकाश उद्धव उपासनी* ६४

**साहित्य का विश्व परिपार्श्व**

**जो है अभी भी युवा**/ *बर्टोल्ट ब्रेष्ट* ५९

**यात्रा-संस्मरण**

**रे ना मोनेगा! तो जै ले राधाजी की गुलेल!**/ *स्मिता मिश्र* ६८

**बाल-संसार**

**धरती के सितारे, अंतरिक्ष में उतारे**/ *प्रेमकिशोर पटाखा* ७०

**मन में कोई गाँठ न पालो**/ *ओमप्रकाश बजाज* ७५

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ ७६

वर्ग-पहेली ७८

साहित्यिक गतिविधियाँ ७९

संपादकीय

# राजनीति के रंग, न्यायपालिका और कॉलेजियम तथा कुछ अन्य समस्याएँ

हमारे लोकतंत्र के तीन मुख्य स्तंभ हैं—विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका। तीनों अपने-अपने अधिकार-क्षेत्र में स्वायत्तापूर्वक कार्य करें, एक-दूसरे के क्षेत्र में अनावश्यक हस्तक्षेप न हो और तीनों मिल-जुलकर जनहित में कार्य करें। संविधान निर्माताओं का मंतव्य यही था कि तीनों में टकराव की स्थिति पैदा नहीं होनी चाहिए। संविधान में पारस्परिक-संतुलन की व्यवस्था है, ताकि इनमें से कोई संस्था अपने वैधानिक दायित्वों से विमुख न हो। उच्च न्यायपालिका को एक अधिकार संविधान ने यह अवश्य दिया है कि किसी कानून, आदेश या कार्य का वह पुनर्निरीक्षण कर सकती है कि वह संविधान के प्रावधान या मंशा का अतिक्रमण तो नहीं कर रहा है। न्यायपालिका को नागरिकों के आपसी विवादों के अतिरिक्त यदि नागरिक को कार्यपालिका या प्रशासन के विरुद्ध कोई शिकायत, अभाव, अभियोग है तो उसका समाधान करने का अधिकार उसके पास है। इसलिए न्यायपालिका को नागरिक अधिकारों का संरक्षक भी कहा जाता है। कहने का तात्पर्य यह है कि संविधान के प्रावधानों की व्याख्या करने का अंतिम अधिकार न्यायपालिका को है। यही नहीं, न्यायालय के प्रत्येक आदेश के कार्यान्वयन का दायित्व कार्यपालिका का है।

सामाजिक, आर्थिक, तकनीकों और वैज्ञानिक विकास के कारण नागरिक समाज में नई अपेक्षाएँ, आकांक्षाएँ भी पैदा होती हैं। उनका संविधान के अंतर्गत ही समाधान होना चाहिए, इसलिए संविधान में कुछ लचीलापन आवश्यक होता है, ताकि समयानुकूल हल भी निकले, किंतु संविधान के दायरे में। इसीलिए निष्पक्ष और स्वतंत्र न्यायपालिका की आवश्यकता होती है। संस्थाएँ व्यक्तित्वों द्वारा चलती हैं, स्वचालित नहीं होती हैं, अतएव जिनको इन संस्थाओं को चलाने का दायित्व मिला है, वे योग्य हों और उनमें भी आत्मनियंत्रण आवश्यक होता है, ताकि संविधान की आत्मा को चोट न पहुँचे। उभरती हुई समस्याओं और परिस्थितियों को जानते हुए, आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए संविधान में करीब सौ से अधिक संशोधन हुए हैं। उनमें से ज्यादातर परिवर्तन सर्वोच्च न्यायालय या किसी उच्च न्यायालय के निर्णयों के कारण हुए हैं। १९४९ में संविधान बना और २६ जनवरी, १९५० में लागू, उसी संविधान के अंतर्गत भारत का लोकतंत्र कार्यशील है। इसी काल में जब हम पड़ोसी देशों में होनेवाली उलटफेर पर दृष्टि डालते हैं तो पता चलता है कि अपने मुख्य उद्देश्यों की रक्षा करते हुए भारत का संविधान कितना गतिशील और संवेदनशील है।

ऐसा नहीं है कि भारत में कभी तनाव की स्थिति नहीं आई। आपातकाल में संविधान की प्रस्तावना में श्रीमती गांधी की सरकार ने समाजवाद और सेक्यूलरिज्म शब्द जोड़े, यद्यपि प्रथम प्रधानमंत्री जवहार लाल नेहरू ने संविधान सभा में विचार व्यक्त किए थे कि ये शब्द ऐसे हैं, जिनको अलग-अलग ढंग से व्याख्यायित किया जाता है, अपने दृष्टिकोण से लोग अलग-अलग अर्थ लगाते हैं, अतएव इनकी आवश्यकता नहीं है। जो मूल भावना इन शब्दों के पीछे है, वह हमारे समूचे संविधान में निहित है और परिलक्षित भी होती है। कुछ और दीर्घगामी परिवर्तन किए गए थे, पर उनमें से जनता सरकार के समय कुछ को छोड़कर अधिकतर को निरस्त किया गया, क्योंकि उनको संविधान की मूलभावना के विपरीत माना गया, किंतु प्रस्तावना में समाजवाद और सेक्यूलरिज्म को रहने दिया गया, यद्यपि कांग्रेस सरकार, जो मनमोहन सिंह के नेतृत्व में बनी, वह सोशलिज्म को तो भूल ही गई। उसके बाद निजीकरण व वैश्वीकरण का दौर शुरू हुआ और अब भी जारी है। खैर, यहाँ इस प्रकरण के विवरण में नहीं जाना है।

अदालतों में काफी पुराने मुकदमे लंबित हैं। सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालय में भी दशकों से मुकदमे लंबित पड़े हैं, जितने मुकदमों का फैसला होता है, उतने ही नए मुकदमे दाखिल हो जाते हैं। आँकड़ों में नहीं जाना चाहते हैं। समय-समय पर उनका आकलन होता है। विधि आयोग ने अपनी कई रिपोर्टों में जल्दी निर्णय हो सकें, इस विषय में अपने सुझाव भी दिए हैं, पर कोई हल अभी तक नहीं निकल सका है। भाषणों में सरकार के प्रतिनिधि और न्यायाधीश भी दोहरा देते हैं कि न्यायिक निर्णय में देरी होने का मतलब है कि न्याय नहीं मिला। अकसर न्यायपालिका माँग करती है कि अदालत में न्यायाधीशों की संख्या में वृद्धि हो। अलग-अलग तर्क दिए जाते हैं, उनके काट भी प्रस्तुत होते हैं। बहरहाल स्थिति ज्यों की त्यों बनी रहती है। अखबारों में लेख आते हैं, टी.वी. पर जोर-शोर से बहस होती है, फिर भी वांछित बदलाव नहीं आता है। अबकी बार सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश ने यह अच्छा कदम उठाया है कि कुछ संवैधानिक मामलों को सुनने के

लिए सर्वोच्च न्यायालय ने तीन बैंचों का प्रावधान किया है, जो गरमियों के अवकाश में मामलों को निपटाने की कोशिश करेंगे। एक शिकायत रही है कि अंग्रेजी हुकूमत के जमाने की छुट्टियों की प्रथा अभी भी चल रही है, जबकि उच्च न्यायालयों में छुट्टियों को कम करने की जरूरत है। जिलों में, नीचे की अदालतों में तो हालत और भी खराब है। आवश्यकता है कि सरकार के प्रतिनिधि और न्यायालय के प्रतिनिधि, साधनों की सीमाओं को देखते हुए अदालतों में आवश्यक इंफ्रास्ट्रक्चर मुहैया कराया जाए। आज की टेक्नोलॉजी भी मुकदमों के जल्दी फैसलों में सहायक हो सकती है। प्रधानमंत्री मोदी ने इस पर कई बार जोर दिया है। जितने स्वीकृत पद न्यायपालिका में विभिन्न स्तरों के हैं, उनमें भरती होनी चाहिए। विशेषतया उच्च न्यायालयों और सर्वोच्च न्यायालय में पद भरने में देरी हो, यह उचित नहीं है। सर्वोच्च न्यायालय के पूर्व मुख्य न्यायाधीश तीर्थराज ठाकुर ने यह मामला कई अवसरों पर उठाया, सरकार ने अपना पक्ष स्पष्ट किया कि विलंब के लिए केवल सरकार ही उत्तरदायी नहीं है। इस पर व्यर्थ का विवाद उत्पन्न हो गया और फिर मीडिया को मामले को और उछालने का मौका मिल गया।

संविधान में स्पष्ट शब्दावली है कि राष्ट्रपति उच्च न्यायालयों और सर्वोच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्ति करेंगे। कुछ वर्ष पहले सर्वोच्च न्यायालय ने व्याख्या की कि सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश समेत पाँच वरिष्ठ न्यायाधीश राष्ट्रपति को सिफारिश करेंगे कि किन-किन को उच्च न्यायालय अथवा सर्वोच्च न्यायालय में नियुक्त किया जाए। यदि राष्ट्रपति और कार्यपालिका को कोई एतराज हो तो कॉलेजियम को कारण बताया जाए, पर यदि कॉलेजियम अपनी पुरानी सिफारिश को फिर दोहराए तो उसको मानना होगा। इस प्रकार संविधान की भाषा की नई व्याख्या कर न्यायपालिका ने न्यायाधीशों की नियुक्ति के पूरे अधिकार स्वयं ले लिये। तर्क यही है कि इस प्रकार न्यायपालिका की स्वायत्तता अक्षुण्ण रहेगी। दुनिया में भारत ही एक ऐसा देश है, जहाँ न्यायपालिका ही अपने सदस्यों या न्यायाधीशों का चुनाव करती है। कहानी लंबी है, विवरण में जाना संभव नहीं है।

कॉलेजियम प्रणाली आने के पहले शायद ही कोई बड़ा विवाद उठा हो। भारत सरकार के विधि मंत्रालय के न्याय विभाग के सचिव रहने के आधार पर हम कह सकते हैं कि सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की ही सिफारिशों को अधिकतर माना जाता रहा है। कभी-कभी कुछ स्पष्टीकरण जरूरी होते थे। उस समय कभी किसी टकराव की नौबत नहीं आई। बातचीत द्वारा स्थिति साफ हो जाती थी। विवाद का सवाल नहीं था। कॉलेजियम प्रणाली आने के कुछ दिनों के बाद बार एसोसिएशनों आदि के द्वारा शिकायत आने लगी कि कॉलेजियम के माध्यम से न्यायपालिका में परिवारवाद और भाई-भतीजावाद पनप रहा है। उदाहरण दिए गए, यही नहीं, जाति व क्षेत्रीय दृष्टिकोण भी घर करता जा रहा है। इस प्रणाली में पारदर्शिता का सर्वथा अभाव है। बहुत लोगों ने विकल्प स्वरूप राष्ट्रीय ज्यूडिकल कमीशन का सुझाव दिया। किस प्रकार के लोग हों, ताकि न्यायाधीशों की नियुक्ति में पारदर्शिता आ सके। अतएव सरकार ने एक नेशनल ज्यूडिकल कमीशन की कल्पना को बिल का रूप दिया, जिसके अध्यक्ष सर्वोच्च न्यायालय के चीफ जस्टिस होंगे। कमीशन के सदस्यों में विविधता लाने की कोशिश की गई, ताकि जनता को जजों के बारे में आवश्यक जानकारी हो। बिल में प्रावधान रखा गया कि न्यायाधीशों के विरुद्ध अभाव अभियोग में क्या काररवाई हो, वह भी कमीशन तय करेगा। महाभियोग का जो संवैधानिक प्रावधान था, वह अभी तक असफल रहा। एक मामले में राजनीतिक दवाब के कारण वह संसद् में गिर गया, क्योंकि इसके पास होने के लिए जितने सदस्यों के समर्थन की आवश्यकता थी, उतना समर्थन नहीं मिला। दो अन्य मामलों में महाभियोग से बचने के लिए न्यायपालिका ने इस्तीफा दे दिया। अतएव उनको इसके बाद पेंशन आदि की सभी सुविधाएँ मिलती रहेंगी। संभावित काररवाई से वे बच गए। नेशनल ज्यूडिशल कमीशन बिल संसद् द्वारा सर्वसम्मति से पारित हो गया, किंतु आज के चीफ जस्टिस श्री केहर की अध्यक्षता वाले पाँच न्यायाधीशों की संविधान बेंच ने उसे बहुमत से अवैध करार कर दिया। एक जस्टिस चलमेश्वर ने बहुमत की राय के विरुद्ध अपना अलग निर्णय दिया और कमीशन की व्यवस्था को उचित ठहराया। दिलचस्प बात यह है कि संवैधानिक बेंच के हर सदस्य ने कॉलेजियम प्रथा में पारदर्शिता की कमी को माना, पर उनका कहना था कि इस अभाव को सरकार और चीफ जस्टिस मेमोरेंडम ऑफ प्रोसीजर के द्वारा दूर कर सकते हैं, पर अभी तक मेमोरेंडम स्वीकृत नहीं हुआ है। चीफ जस्टिस ठाकुर के कार्यकाल और चीफ जस्टिस केहर के कार्यकाल में भी नेशनल सिक्योरिटी के आधार पर नियुक्ति न हो, इसको कॉलेजियम ने नहीं माना और कहा कि सरकार के पास जो सूचना हो, वह लिखित रूप में दे। पर अंतिम निर्णय की सुविधा कॉलेजियम को होगी। इसके अलावा कॉलेजियम के लिए सेक्रेटरिएट बनाना, जो सब सूचना रखे और वह कहाँ स्थापित हो तथा किस रूप में हो, इसकी भी सहमति नहीं बन सकी। यह कहना उचित होगा कि जस्टिस चलमेश्वर ने अपने को कॉलेजियम से अलग कर लिया था। उनका कहना था कि हर सदस्य को अपनी लिखित राय देनी चाहिए कि किस आधार पर नियुक्ति की सिफारिश है और अगर नहीं तो क्यों नहीं, तभी कॉलेजियम प्रणाली में पारदर्शिता आएगी और उसकी विश्वसनीयता बढ़ेगी। चीफ जस्टिस ठाकुर की कोशिशों के बाद भी वे उस समय नहीं माने। इस पर भी मीडिया में बड़ी चर्चा रही। खैर, अब विधिमंत्री ने कहा है कि मेमोरेंडम पर सहमति न होते हुए भी सरकार कॉलेजियम की सिफारिशों को जल्दी से प्रोसेस करेगी, ताकि खाली पद भरे जा सकें। प्रक्रिया शुरू हो गई है। यह अच्छा शगुन है। सरकार का भी कहना है कि वह निरपेक्ष और स्वतंत्र न्यायपालिका की आवश्यकता को समझती है और उसमें विश्वास करती है।

एक और पक्ष है, जिसकी ओर इशारा जरूरी है। एक समय था, जब उच्च न्यायालयों और सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के बारे में, उनकी ईमानदारी के बारे में कोई उँगली नहीं उठाता था। पिछले कुछ वर्षों से स्थिति में बदलाव आया है। सर्वोच्च न्यायालय के प्रसिद्ध

एडवोकेट और पूर्व विधिमंत्री शांति भूषण व उनके पुत्र प्रशांत भूषण ने एक मामले में एक बंद लिफाफे में एक पत्र सर्वोच्च न्यायालय में प्रस्तुत किया था, जिसमें सर्वोच्च न्यायालय के छह पूर्व मुख्य न्यायाधीशों के विषय में कुछ आरोप और संदेह प्रस्तुत किए गए थे। यद्यपि लिफाफा गोपनीय था, फिर भी एक पत्रिका ने वे नाम प्रकाशित कर दिए थे। उस मामले का क्या हुआ, पता नहीं है। समय-समय पर ये आरोप भी समाचार-पत्रों में आए कि परिवार के एक सदस्य के जज होने का फायदा अन्य नाते-रिश्तेदार, जो अदालतों में प्रैक्टिस करते हैं, उठाते हैं। पत्र-पत्रिकाओं में यदाकदा समाचार आते हैं, जिनमें किसी मामले के संबंध में किसी न्यायाधीश का नाम आ जाता है। एक मैगजीन 'कैरवाँ' में एक ऐसा ही लेख था, पर उसका कोई संतोषजनक स्पष्टीकरण नहीं दिखा। पिछले दिनों एक उत्तर-पूर्व राज्य अरुणाचल के मुख्यमंत्री पुल को पद से इस्तीफा देना पड़ा था। उन्होंने आत्महत्या कर ली और उनके शव के पास एक परचा पाया गया, जिसमें उन्होंने आज के कुछ न्यायाधीशों पर आरोप लगाए। उनकी पत्नी ने भारत के मुख्य न्यायाधीश को अरजी दी कि इस मामले की एडमिनिस्ट्रेटिव साइड से जाँच की जाए, पर सर्वोच्च न्यायालय ने उसे ज्यूडिशल साइड या न्यायिक रूम में ले लिया, अतएव उनके वकील ने वह अरजी वापस ले ली। उनके वकील ने एक सनसनीखेज बात यह कही कि सर्वोच्च न्यायालय के एक सेवानिवृत्त जज इस मामले में उनसे मिलने आए थे। ऐसी बातों से भ्रम तो उत्पन्न हो ही जाता है। जो कीचड़ उछलता है, वह कहीं न कहीं थोड़ा-बहुत चिपक ही जाता है। इस तरह के संदेह का वातावरण अवांछनीय है। एक कठिनाई यह है कि पारदर्शिता को न्यायपालिका और सबके लिये तो आवश्यक बताती है, पर अपने संबंध में ऊहापोह की स्थिति पैदा करती है। चीफ विजिलेंस कमिशनर ने न्यायपालिका के विषय में कहा, वह केवल प्रशासनिक पक्ष के बारे में पारदर्शिता उचित मानती है और दिल्ली हाई कोर्ट उसको उचित ठहराता है, पर सर्वोच्च न्यायालय उस पर रोक का आदेश करता है। मामला ठंडे बस्ते में पड़ जाता है। पारदर्शिता यदि एंटीसेप्टिक अन्यों के लिए है तो वह न्यायपालिका के लिए भी होनी चाहिए। यह विश्वसनीयता के लिए आवश्यक है।

कॉलेजियम के होते हुए भी कभी-कभी कैसे लोग नियुक्त हो जाते हैं, उसका एक उदारहण कलकत्ता (कोलकाता) हाई कोर्ट के जज जस्टिस करनान का है। वे एक अनुसूचित जाति से आते हैं। वे पहले मद्रास हाईकोर्ट में थे। उनको एक मानसिक भूत यह लग गया कि उनके अन्य सहयोगी उनसे भेदभाव करते हैं, उचित व्यवहार नहीं करते। वे अपने सहयोगियों के विरुद्ध भ्रष्टाचार की शिकायतें भी करते रहते थे। मद्रास उच्च न्यायालय में एक विचित्र स्थिति उत्पन्न हो गई। उनका स्थानांतरण कोलकाता उच्च न्यायालय में हो गया। अपने स्थानांतरण पर स्वमेव एक उच्च न्यायालय के न्यायाधीश होने की हैसियत से रोक लगा दी। गतवर्ष तत्कालीन सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश को आश्वासन दिया कि अब वे सौहार्द का वातावरण बनाए रखेंगे। उन्होंने खेद भी प्रकट किया कि उनका आदेश गलत था, कुछ मानसिक संतुलन बिगड़ गया था। कलकत्ता हाईकोर्ट में जाने के बाद भी उनमें कोई वांछित परिवर्तन नहीं आया। पर कलकत्ता उच्च न्यायालय में जाने के बाद भी उनके मन का वह भूत कि उनके अनुसूचित जाति से होने के कारण भेदभाव होता है, उनके मन से गया नहीं, यही नहीं, उन्होंने कुछ जजों के विरुद्ध प्रधानमंत्री को एक पत्र भेजा। पत्र में तरह-तरह के आरोप लगाए गए बताए जाते हैं। उन्होंने अनुसूचित जातियों के कमीशन से भी शिकायत की। सर्वोच्च न्यायालय ने इस अनुचित व्यवहार या कदाचार का संज्ञान लिया। सर्वोच्च न्यायालय ने उन्हें बुलाया। जस्टिस करनान ने सम्मन लेने और सर्वोच्च न्यायालय में पेश होने से इनकार कर दिया। पुलिस के द्वारा उन पर सम्मन सर्व हुआ। डीजीपी पश्चिम बंगाल और अन्य पुलिस अधिकारी उनके घर गए। सर्वोच्च न्यायालय को पुलिस अधिकारियों ने सूचित कर दिया कि करनान को सर्वोच्च न्यायालय के आदेश की जानकारी हो गई है। अंत में वे ३१ मार्च को सर्वोच्च न्यायालय में हाजिर हुए और उनको चार सप्ताह का समय दिया गया कि वे सर्वोच्च न्यायालय के मानहानि के बारे में स्पष्टीकरण दें। सर्वोच्च न्यायालय ने उनके न्यायिक और प्रशासनिक दोनों अधिकार छीन लिये हैं। एक उच्च न्यायालय के जज द्वारा सर्वोच्च न्यायालय की मानहानि या अवमानना का मामला है।

पूर्व चीफ जस्टिस बाला कृष्णनन, जिनके कार्यकाल में वे नियुक्त हुए थे, ने एक बयान में कहा कि वे उन्हें व्यक्तिगत रूप से नहीं जानते थे। पुलिस से घिरे जस्टिस करनान की फोटो टी.वी. और समाचार-पत्रों में आती है। करनान अपने मत पर दृढ हैं कि सर्वोच्च न्यायालय की सब काररवाई उनके खिलाफ अवैध है। जस्टिस करनान ने इसके बाद सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश और सर्वोच्च न्यायालय के छह अन्य न्यायाधीशों, जो उस संवैधानिक बेंच के सदस्य थे, जिन्होंने उनको सर्वोच्च न्यायालय में पेश होने के आदेश दिए थे, के विरुद्ध आदेश दिया है कि वे उनके घर की अदातल में अमुक दिन पेश हों। उनका कहना है कि अस्पृश्यता विरोधक कानून का उन्होंने उल्लंघन किया है, उनका मानसिक और शरीरिक उत्पीड़न किया है, अतएव उनके घर पर होनेवाली अदालत में आकर सफाई दें। यही नहीं, आदेश है कि उनके पासपोर्ट दिल्ली के डीजीपी के यहाँ जमा करा लिए जाएँ, ताकि वे देश के बाहर न जा सकें। आगे उनका आदेश है कि उनके इस हुक्म को कोई अन्य अदालत रोक नहीं लगा सकती है। हाँ, यदि चाहे तो सर्वोच्च न्यायालय के ये न्यायमूर्ति संसद् में उनके अपने आदेश के विरुद्ध में जा सकते हैं। यह सर्वोच्च न्यायालय की खुली अवमानना है। यह अप्रत्याशित और अभूतपूर्व स्थिति है। जिसका समाधान शीघ्र निकालना होगा। यह एक प्रकार से सर्वोच्च न्यायालय की खिल्ली उड़ाना है और वह भी एक उच्च न्यायालय के न्यायाधीश द्वारा। देखें आगे क्या होता है। वैसे ऐसा प्रतीत होता है कि जस्टिस करनान इस मामले का राजनीतीकरण करना चाहते हैं। महा अभियोग एक राजनैतिक प्रक्रिया है। वे चाहते हैं कि उनका मामला संसद् में जाए तो वे सर्वोच्च न्यायालय या अपने अन्य सहयोगियों के विरुद्ध जो कहना चाहें कह सकें।

जस्टिस करनान के अप्रत्याशित व्यवहार ने कॉलेजियम सिस्टम की कमियों और कमजोरियों को उजागर कर दिया है। आवश्यकता है कॉलेजियम में और पारदर्शिता की। ऐसे प्रावधानों की भी आवश्यकता हैं जिनके अनुसार प्रारंभ में ही अनुचित कार्य न्यायालय या छोटे-मोटे कदाचार का संज्ञान लिया जा सके और सर्वोच्च न्यायालय की अवमानना की नौबत न आए।

इतना तो निश्चित है कि ऐसे प्रकरणों से न्यायपालिका की छवि को धक्का लगता है। जिस न्यायपालिका में लोकतंत्र का विश्वास निहित है और जिसे रोल मॉडल मानते हैं, यदि न्यायपालिका में भी अनुशासन-हीनता घर कर लेती है, तो आवश्यकता होने पर वह किस प्रकार नागरिकों और कार्यपालिका तथा विधायिका को संविधान के अनुसार अनुशासित कर सकती है।

## फारुख की कलाबाजियाँ

राजनीति में अलग-अलग रंग देखने को मिल रहे हैं। यह इस बात का परिचायक है कि आज राजनीति में कितनी नीति या नैतिकता है, जिसका उद्देश्य केवल येन-केन-प्रकारेण सत्ता हथियाना है। फारुख अब्दुल्ला जम्मू और कश्मीर के पूर्व मुख्यमंत्री तथा वाजपेयीजी की सरकार में मंत्री भी रह चुके हैं। २०१४ के लोकसभा चुनाव में हार गए थे। अब वे फिर एक खाली सीट पर प्रत्याशी बने। वोटों के लालच में उन्होंने पुलिस तथा सुरक्षा बलों पर पत्थर फेंकने वाले युवाओं को देश के लिए लड़नेवाले और रक्षक कहा है। जब वे मुख्यमंत्री थे, तब ऐसे लोग देशद्रोही थे। समय-समय पर परस्पर विरोधी बातें कहते रहते हैं। टीवी पर ऐसे जोश-खरोश से बोले, मानो उनसे बड़ा देशभक्त व देश की एकता का संरक्षक कोई नहीं है। भावनात्मक संतुलन का उनमें बहुत अभाव मालूम होता है। अब वह स्वायत्ता की बाँग लगा रहे हैं। यही नहीं, हाल ही में एक प्रतिष्ठित अंग्रेजी दैनिक को एक साक्षात्कार दिया, जिसमें उन्होंने कहा कि १९५३ की संवैधानिक राजनैतिक स्थिति में बिना जाए हुए जम्मू-कश्मीर में शांति नहीं होगी। इसका मतलब होगा कि सर्वोच्च न्यायालय, चुनाव आयोग, सीएजी आदि को जम्मू-कश्मीर में हस्तक्षेप का कोई अधिकार नहीं होगा। १९५३ के बाद बहुत से कानून जो वहाँ की जनता के हित में लागू किए गए, वे निरस्त करने होंगे। वह कुछ-न-कुछ ऐसा कहते रहते हैं, जिससे परोक्ष और अपरोक्ष रूप में अलगाववादियों और उग्रवादियों का हौसला बढ़ता है। एक अन्य नेता प्रो. सोज हैं, जो पहले नेशनल कॉन्फ्रेंस में थे, फिर कांग्रेस में शामिल हो गए और केंद्र में मंत्री भी बन गए। हाल ही में भारत-पाकिस्तान के संबंध विषय पर इंडिया इंटरनेशनल सेंटर में एक गोष्ठी हुई, जिसमें पाकिस्तानपरस्ती करनेवाले, जैसे मणिशंकर अय्यर, सुधींद्र कुलकर्णी आदि व पाकिस्तान के उच्चायुक्त अब्दुल वाजित भी थे। काफी गरमी-गरमी रही, पाकिस्तान के उच्चायुक्त ने कुलभूषण जाधव को एक टीवी के बयान में आतंकवादी कहा था। पाकिस्तान की सैनिक अदालत द्वारा दी गई मौत की सजा को जायज बताया और कहा था कि जैसा उसने किया, वैसा उसको अंजाम मिला। इसके कारण माहौल काफी गरम हो गया था। वरिष्ठ एडवोकेट और राज्यसभा के सदस्य राम जेठमलानी ने अपनी बात रखते हुए कहा कि पाकिस्तान इस समय जम्मू-कश्मीर में गड़बड़ी करा रहा है। वैसे वे उन लोगों में से हैं, जो पाकिस्तान के पक्ष को भी अपने ढंग से प्रस्तुत करते हैं। प्रो. सोज ने कहा कि कश्मीर की गड़बड़ी के लिए भारत जिम्मेदार है। वे कांग्रेस के नेता हैं और मंत्री पद पर रहकर संविधान की शपथ ले चुके हैं तथा देशभक्ति का दम भरते हैं। यह दुर्भाग्य ही कहा जाएगा कि इस प्रकार के दुमुँहे नेता जम्मू-कश्मीर को मिले हैं।

पत्थरबाजों की सरपरस्ती कर फारुख लोकसभा की श्रीनगर सीट तो जीत गए, पर आगे यह उनके लिए महँगा पड़ सकता है। वैसे फारुख यह कहते भी नहीं चूके कि पत्थरबाजी सरकार करा रही है। पाकिस्तान अपनी हरकतों से बाज नहीं आएगा और वह तो पैसा देकर ऐसे हादसे करवाना चाहता है, ताकि वह अंतरराष्ट्रीय जगत् में जम्मू-कश्मीर में मानव अधिकारों का हनन हो रहा है, इस आरोप को दोहराता रहे। फारुख साहब न केवल पत्थरबाजी को, जो पाकिस्तान के इशारों और आर्थिक मदद के कारण सैन्य दलों के लिए पेचगीदियाँ पैदा करने को उचित ठहराते हैं, बल्कि जमायत इसलाम, जो अति रूढ़िवादी संस्था है और जिसके वे आलोचक रहे हैं, चुनाव में उनकी भी मदद ली।

## आप अधर में

जब शुंगलू कमेटी की रिपोर्ट प्रकाशित हुई तो आम आदमी पार्टी की साख को और धक्का लगा। अनियमितताओं और कानून के उल्लंघन के १०-१२ आरोप लगे हैं, साथ-साथ अंधा बाँटे रेवड़ी की तरह परिवार और अपने रिश्तेदारों को अनुचित लाभ पहुँचाने के आरोपों को दोहराने की जरूरत नहीं है, क्योंकि टीवी और पत्र-पत्रिकाओं में उन पर काफी चर्चा हो चुकी है। कुछ मामलों को सी.बी.आई. और अन्य एजेंसियाँ देख रही हैं।

केजरीवाल ने चालीस अतिथियों के भोजन के लिए ग्यारह लाख रुपए खर्च किए। जो करोड़ों का अपव्यय जनहित के बजाय, पार्टी के प्रचार में हुआ, उपराज्यपाल ने उसको सरकारी खजाने में जमा कराने का आदेश दे दिया है। सीएजी ने अपने ऑडिट में इसका खुलासा किया था। मानहानि के मुकदमें में फँसे केजरीवाल अब वरिष्ठ एडवोकेट जेठमलानी की फीस की अदायगी सरकारी खजाने से करवाना चाहते हैं। यद्यपि उन्होंने अदालत में कहा कि उनके जिस बयान को अरुण जेटली ने मानहानि का आधार बनाया, वह अपनी निजी हैसियत और निजी जानकारी के आधार पर दिया था, मुख्यमंत्री की हैसियत से नहीं। आप पार्टी में केजरीवाल या सिसौदिया की मरजी कानून के ऊपर है, जब अपने कृत्यों का कोई संतोषजनक उत्तर नहीं, तो यही शोर मचाना शुरू कर दिया है कि दिल्ली निगम के चुनाव दो महीनों के लिए स्थगित करके मतपत्रों के द्वारा हों। उनका कहना है कि उनके और उनकी पार्टी के खिलफ जो आरोप हैं, वे बीजेपी और कांग्रेस के द्वारा लगाए गए झूठे आरोप हैं।

अन्ना हजारे, भ्रष्टाचार निवारण आंदोलन के समय जिनके कंधों पर चढ़कर उन्होंने सत्ता पाई थी, उन्हें भी कहना पड़ा कि केजरीवाल ने संविधान और कानूनी-नियमों का खुला अतिक्रमण किया है। अपने ऑफिस के लिए आम आदमी पार्टी ने एक बहुत बड़ा प्लॉट दीनदयाल मार्ग पर घेर लिया था। उसे उपराज्यपाल ने गैर-कानूनी और नियमों के विरुद्ध बताया है। उसकी वापसी के आदेश भी दे दिए हैं। पंजाब और खासकर गोवा के चुनावों के बाद आम आदमी पार्टी की रीढ़ ही टूट गई, यद्यपि उसके नेता अब भी डींग हाँकते हैं।

गोवा में तो प्राय: एक को छोड़कर सभी प्रत्याशियों की जमानत जब्त हो गई। दिल्ली के राजौरी गार्डन की सीट, जो आम आदमी पार्टी ने जीती थी, किंतु पंजाब में चुनाव लड़ने के लिए विधायक ने इस्तीफा दे दिया। अब यहाँ पर हुए उप चुनाव में पार्टी के प्रत्याशी की जमानत भी जब्त हो गई। अहं और विवाद से ग्रस्त आम आदमी पार्टी का सुनहरा सपना तो टूट ही गया, एक नई राजनीति की झलक, जो प्रारंभ में दिखाई दी, वह भी धूमिल हो गई। केजरीवाल को फोबिया हो गया, सब उनके खिलाफ हैं। अब उनकी लड़ाई ई.वी.एम. के खिलाफ है कि मतपत्रों द्वारा चुनाव होना चाहिए। हालाँकि राजौरी गार्डन की हार को उन्होंने चुनावी मशीन से नहीं जोड़ा है। चुनाव आयोग ने खुली चुनौती दी है कि चुनावी मशीनों को हैक करके कोई दिखाए। कैप्टन अमरेंद्र सिंह ने कहा कि वे ई.वी.एम. के कारण ही पंजाब के मुख्यमंत्री बने हैं। शायद दिल्ली में निगम निकाय चुनावों में उन्हें हार नजर आ रही है, इसलिए ऐसी बातें कर रहे हैं। लेकिन मतपत्र के द्वारा चुनाव के अपने बयान पर वे अब भी अडिग हैं। अब तो वे पंजाब के चुनाव को भी रिग्ड या गड़बड़ चुनाव कह रहे हैं, जहाँ वे मुख्य विरोधी हैं। वे राजनीतिक सद्बुद्धि और संतुलन खो बैठे हैं। केजरीवाल के स्वास्थ्य के बारे में भी अटकलें चल रही हैं। आप पार्टी का भविष्य अँधेरे में लटकता दिखाई दे रहा है।

## उत्तर प्रदेश में नई सरकार

उत्तर प्रदेश में योगी आदित्यनाथ ने अपना दायित्व गंभीरता से निर्वहन करना शुरू कर दिया है। पार्टी घोषणा-पत्र में जो चुनावी वादे थे, उन पर काररवाई शुरू कर दी है। गरीब किसानों के कर्जे माफ कर दिए हैं। शांति और कानून व्यवस्था पर कड़ी निगरानी रखी जा रही है। इसको ठीक करने में समय लगेगा। महिलाओं की सुरक्षा के लिए जो आदेश दिए, उनके अनुपालन में निम्न स्तर पर कुछ एक जगह जो ज्यादती हुई, उसको दुरुस्त करने के लिए डी.जी.पी. को आग्रह किया है। पूरी नौकरशाही में संदेश गया है कि समय से दफ्तर आना होगा और नागरिकों के अभाव अभियोग का समयबद्ध ढंग से निस्तारण होना चाहिए। सरकार के सब विभागों में उनके मंत्रियों द्वारा संदेश पहुँच गया है कि योगी आदित्यनाथ की सरकार, जो स्थिति अभी तक यथावत् रही है, उसमें परिवर्तन करने के मामले में गंभीर है। अवैध बूचड़खानों को तत्काल बंद करने की काररवाई को गलत ढंग से प्रस्तुत किया जा रहा है। काफी समय से हरित ट्रिब्यूनल और न्यायालय के आदेश हैं, उनका पालन करवाने को सांप्रदायिक रंग दिया जा रहा है। अजीब लगता है कि अवैध बूचड़खानों को चलने देना उचित ठहराया जा रहा है, कानून का पालन करवाकर उन्हें बंद करने को गलत कहा जा रहा है, क्योंकि मुसलमानों की रोजी-रोटी पर असर पड़ रहा है। सरकारी डॉक्टर जो चोरी-छिपे निजी प्रैक्टिस कर रहे थे, उनको आगाह किया है। कुछ सरकारी योजनाओं का दुरुपयोग तथा घोटालों के कुछ प्रकरण और आरोप थे, उनकी जल्दी जाँच के आदेश दिए हैं। आवश्यक है कि उत्तर प्रदेश सरकार की नई सरकार को काम करने का मौका मिले। उत्तर सरकार से हमारी अपेक्षा है और निवेदन भी है कि इलाहाबाद का जो हवाई अड्डा है, उसको मदनमोहन मालवीयजी का नाम दिया जाए। प्रयाग जो मालवीयजी की प्रारंभ से कर्मभूमि रही है, उनके नाम पर वहाँ कोई बड़ा संस्थान नहीं है। एक बात की ओर मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ को ध्यान देना होगा कि उनके द्वारा स्थापित हिंदू युवा वाहिनी या आनुषंगिक संगठन कानून की मर्यादा भंग न करे, कानून को अपने हाथ में न ले। अनुशासित तरीके से कार्य करे। उत्तर प्रदेश और कुछ अन्य राज्यों से गायों के संरक्षण में गौरक्षकों की ज्यादितियों के समाचार आए हैं। उन पर तुरंत और कड़ी काररवाई करनी चाहिए। भारत बनाना रिपब्लिक नहीं है। उत्तर प्रदेश में भाजपा की जीत को कुछ लोग जनता का आदेश नहीं मानते हैं। अपने हतोत्साह को वे आक्रामकता से छिपाना चाहते हैं। मीडिया में कुछ घटनाओं को तूल देकर, बार-बार बहस कराकर उत्तर प्रदेश और केंद्र सरकार दोनों को बदनाम करने की साजिश चल रही है। कुछ तथाकथित सेकुलरिस्ट और स्वयं को उदारवादी कहलानेवाले बुद्धजीवी, जो अंग्रेजी मीडिया में तरह-तरह के लेख लिखने में लगे हुए हैं, ताकि योगी और मोदी की सरकारों की छवि धूमिल हो। उत्तर प्रदेश को योगिस्तान भी कहा जा रहा है। मीडिया के अतिरिक्त गोष्ठियों, कवि-सम्मेलनों आदि सभी माध्यमों का भारत सरकार के विरुद्ध वातावरण बनाने में बड़ी चतुराई से प्रयोग हो रहा है।

इस दिशा में सावधानी अनिवार्य है। न केवल भाजपा को बल्कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को ऐसे हादसों में घसीटा जाता है। संघ सरसंघसंचालक मोहन भागवत स्वयं गोरक्षा के विषय में निर्देश दे चुके हैं कि अपना उद्देश्य कुशलता से पूरा करो, किंतु कानून का उल्लंघन नहीं। इसी प्रकार प्रधानमंत्री ने भी काफी कड़े शब्दो में गौरक्षा के नाम पर अनुचित कार्य करनेवालों की भर्त्सना की है। यही नहीं सरकार के कुछ समर्थक समय-समय पर भावनाओं में बहकर अनाप-शनाप और अनर्गल बातें कह जाते हैं। तेलंगाना के एक बीजेपी विधायक ने कहा कि जो राम मंदिर बनने का विरोध करेगा, उसका हम सिर काट डालेंगे। पश्चिम बंगाल में रामनवमी के जुलूस पर पुलिस के लाठीचार्ज करने से रोष में आकर एक महाशय ने घोषणा कर दी कि जो मुख्यमंत्री का सिर काटकर लाएगा, उसको ११ लाख का पुरस्कार देंगे। इस तरह के कथन असभ्य, जंगली हैं और हर तरह से निदंनीय भी। वे भूल जाते हैं कि इस प्रकार की अनर्गल बातें उनके अपने लक्ष्य को ही नुकसान पहुँचाती हैं। इससे भारत सरकार और समूचे देश की छवि विश्व में धूमिल होती

है। इसे भारत की संस्कृति नहीं कह सकते। ऐसे तत्त्वों पर नकेल कसी जानी चाहिए। जो सरकार की नीतियों के समर्थक हैं, वे शांति व्यवस्था चाहते हैं, कानून के राज्य की उनको अपेक्षा है, पर इस प्रकार के प्रसंग उनके मन में संशय पैदा करते हैं। अमर्यादित बोल ऐसे समुदाय को सरकार से विमुख कर सकते हैं। सहिष्णु व्यवहार और कानून-पालन का सदैव ध्यान रखना चाहिए।

### जलियाँवाला कांड और ब्रिटेन

इस अंक में डॉ. उषा निगम का कामागाटा मारू के विषय में एक लेख प्रकाशित कर रहे हैं। अमरीका में गदर आंदोलन के प्रारंभ और उसके विस्तार की चर्चा काफी पहले की थी और कहा भी था कि इस पर एक अलग लेख प्रकाशित करेंगे। गदर की शती का वह अवसर था। कामागाटा मारू एक बड़ा कारण बना गदर आंदोलन का इंडियन कौंसिल ऑफ हिस्टोरिकल रिसर्च ने दिल्ली में गदर आंदोलन विषयक एक गोष्ठी आयोजित की थी। कोलकाता, मुंबई और चंडीगढ़ में भी गोष्ठियाँ होनी थीं, ताकि गदर में भाग लेनेवालों के बलिदान की कहानी देशवासी जान सकें। पता नहीं आगे कुछ हुआ या नहीं। जो पत्र पढ़े गए, वे पुस्तकाकार छप रहे हैं या नहीं। आई.सी.एच.आर. को यह जानकारी देनी चाहिए। कनाडा के प्रधानमंत्री ट्रूडू ने एक गुरुद्वारे के आयोजन में इस घटना के विषय में और उसके उपरांत वहाँ की संसद् में जो-जो अत्याचार भारतीयों पर हुए, उसके लिए खेद प्रकट किया और क्षमा माँगी।

ब्रिटिश सरकार के प्रधानमंत्री से हम अपेक्षा करते हैं कि वह जलियाँवाला बाग के हत्याकांड के बारे में क्षमा-याचना करें, क्योंकि वह भारतीय हृदय पर किसी हद तक मलहम का कार्य करेगा। कटुता दूर होगी। क्या ब्रिटिश सरकार यह दूरदर्शिता दिखाएगी? इसी प्रकार जर्मन चांसलर एन्जेला मेरकेल ने २००८ में इजरायल में जर्मनी द्वारा यहूदियों पर हुए अत्याचारों के लिए खेद प्रकट कर क्षमा-याचना की। कुछ ही समय पहले जापान के प्रधानमंत्री शिन्जो आबे ने प्रेसीडेंट ओबामा के साथ पर्लहार्बर हवाई में जाकर द्वितीय विश्व युद्ध में हताहत हुए लोगों के प्रति संवेदना प्रकट की और उस दौरान, दिसंबर १९४१ के आक्रमण में जीवित बचे कुछ लोग उनसे मिले। इसी प्रकार प्रेसीडेंट ओबामा प्रधानमंत्री शिन्जो आबे के साथ हिरोशिमा गए, वहाँ उन्होंने आण्विक बम द्वारा हताहत लोगों के प्रति संवेदना प्रकट की और उस समय के कुछ बचे हुए लोगों से मिलकर अपनी संवेदना प्रकट की।

### प्रधानमंत्री का इशारा

विगत दिनों मान. स्पीकर श्रीमती सुमित्रा महाजन द्वारा रचित पुस्तक 'अहल्याबाई होलकर' का प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने लोकार्पण किया। अहल्याबाई का एक कुशल प्रशासक, महान् दानी और धार्मिक स्थलों के पुनर्निर्माण के लिए भारतीय इतिहास में एक विशेष स्थान है। आयोजन में उपस्थित महानुभावों ने देखा कि विमोचन के लिए पुस्तक के रैपर को किसी और को देने या नीचे फेंक देने के स्थान पर प्रधानमंत्री ने उसको अपनी जेब में रख लिया। तालियों की गड़गड़ाहट के बीच सबके मुँह पर हास्य था। प्रधानमंत्री के एक छोटे लगनेवाले कार्य से एक बड़ा संदेश देश को गया—गांधीजी के स्वप्न स्वच्छ भारत बनाने का हर एक नागरिक का कर्तव्य है। यह वीडियो वायरल हो गया है।

### टिप्पणियों, पत्राचार, भाषण आदि का संचयन

जवाहरलाल नेहरू की दूसरी चयन शृंखला में ७०वाँ ग्रंथ हाल ही में प्रकाशित हुआ। उसमें एक दिलचस्प प्रसंग देखने को मिला। इस प्रकार का हास्य आज राजनीति में लुप्त हो गया मालूम होता है। कांग्रेस की नेता और पूर्व में केंद्रीय मंत्री रहीं राजकुमारी अमृतकौर ने नेहरू को अपने रोष भरे पत्र में लिखा कि कांग्रेस में ए से लेकर जेड तक (यानी सब के सब) भ्रष्ट हैं। नेहरू ने उत्तर में कहा कि इस ए और जेड में कहीं-न-कहीं तो मैं भी होऊँगा। राजकुमारी अमृतकौर की क्या प्रतिक्रिया हुई, वह ज्ञात नहीं है।

### द्विभाषी पत्रिका 'आधुनिक साहित्य'

'आधुनिक साहित्य' के कुछ अंक पहले भी देखने का अवसर मिला था। पत्रिका के उद्देश्य और सामग्री पसंद आई। संपादकीय भी काफी अच्छे लगे। चाहता था कि आधुनिक साहित्य पत्रिका की चर्चा सुधी पाठकों से करूँ, किंतु कुछ-न-कुछ व्यवधान आ गया और यह पहले संभव न हो सका। आधुनिक साहित्य द्विभाषी त्रैमासिक पत्रिका है, जिसमें अंग्रेजी और हिंदी में सामग्री रहती है। प्रकाशन का छठा वर्ष है। बीसवाँ अंक जो अक्तूबर, २०१६ में प्रकाशित होना था, पर संपादकीय अवलोकन करते हुए ज्ञात हुआ कि संपादक महोदय की मातृश्री के अक्तूबर में निधन के कारण बीसवाँ अंक समय पर पाठकों को प्राप्त न हो सका। इसलिए बीसवाँ और इक्कीसवाँ अंक संयुक्त रूप में प्रकाशित करना जरूरी हो गया। पत्रिका के विषय में कुछ कहने से पहले हम संपादक की मातृश्री के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं और उनको और उनके समस्त परिवार को अपनी संवेदना प्रेषित करते हैं।

'आधुनिक साहित्य' का यह संयुक्तांकों का संपादकीय न केवल ओजपूर्ण है, वरन् राष्ट्र, समाज और साहित्य के आपसी संबंधों के बारे में एक गंभीर विवेचन है। यह उचित ही है। कुछ सामाजिक समस्याओं की चर्चा भी संक्षेप में है। संयुक्तांक की सामग्री में साहित्य की विविधता परिलक्षित होती है, जो स्तरीय है। सुधी पाठकों और पुस्तकालयों के लिए आधुनिक साहित्य उपयोगी है। 'आधुनिक साहित्य' केंद्रीय हिंदी संस्थान के सहयोग से प्रकाशित होती है। आशीष कांधवे (मूल नाम आशीष कुमार) संपादक और प्रकाशक हैं। विश्व हिंदी परिषद्, (पंजीकृत), ए डी-९४ डी, शालीमार बाग, दिल्ली-११००८८ के तत्त्वावधान में त्रैमासिकी प्रकाशित होती है। संपर्क सूत्र है—०९८१११८४३९३, ०११-४७४८१५२१।

त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

**(त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी)**

# यादों के घेरे

● शंकरदयाल सिंह

रात भर उसे नींद नहीं आई है। डनलप का गद्दा क्योंकर इन तख्तियों पर रख दिया जाता है, वह सोचता रहा है और सोचने के क्रम में बेशुमार करवटें बदलता रहा है। उसकी आँखों में बीता कल आज भी तसवीर के समान सामने है।

गाड़ी चलने के पहले ही वह उतर गया था। रूमाल हिलाकर 'टा-टा, बाइ-बाइ' कहकर किसी को विदा देना उसे बड़ा अस्वाभाविक लगता रहा है और मीरा भी तो इन बातों को पसंद नहीं करती।

यह चांस अथवा संयोग अथवा मीरा का 'इंट्यूशन' मैं ही था, जो उसे इसी गाड़ी के, इसी डिब्बे में खींचकर ले आया था और उसने किसी भी आश्चर्य के रूप में मीरा को, जो स्त्री डिब्बे की एक सीट पर कोने में अकेली दुबकी बैठी थी, न देखा था। बल्कि मीरा ही अचकचाई थी और उसकी बाहर ढूँढ़ती आँखें अंदर की ओर जब मुड़ी थीं, तो उनमें आश्चर्य की कोई सीमा न रह गई थी। और फिर दोनों एक साथ ही पटना जंक्शन उतरे थे, एक ही कुली ने दोनों का सामान उठाया था। वेटिंग रूम के भीड़ भरे अव्यवस्थित वातावरण से बचने के लिए आनंद ने 'रिटायरिंग रूम' ले लिया था और तब मीरा ने हँसकर उससे कहा था,' तुम मिल तो गए थे, पर मैं बार-बार इसी चिंता में थी कि तुमसे बातें कहाँ होंगी। वे प्लेटफॉर्म, वेटिंग रूम या डिब्बे में तो संभव न थीं।''

और बदले में आनंद मुसकराया था, ''तुम्हारे मन की हर बात मैं पहले ही भाँप जाता हूँ।''

तब शाम के केवल सात बज रहे थे। मीरा दिल्ली से आ रही थी···उसे टाटा के लिए गाड़ी दस बजे रात में यहीं से पकड़नी थी और आनंद ने मुगलसराय में दिल्ली एक्सप्रेस पकड़ी थी—उसे सवेरे किसी कार से नालंदा राजगीर चले जाना था।

मिलना अकस्मात् हुआ था, पर कैसा सुनियोजित था। दोनों सफर में थे, परंतु एक अनिर्वचनीय सुख ने दोनों को अपने घेरे में कैद कर लिया था। बना-बनाया खाना मीरा के पास था, इसलिए कुली को साढ़े नौ बजे आने के लिए कहकर आनंद ने रिटायरिंग रूम का दरवाजा अंदर से बंद कर लिया। उसके पास अब केवल ढाई घंटे थे। आसमान में फैले तितर-बितर बादलों के समान ढाई घंटे, पहाड़ी नाले के समान मचलती-बहती धार के समान ढाई घंटे, जिंदगी के अनगिनत बरसों के आयामों में सँजोकर रखे जानेवाले ढाई घंटे। और दोनों में से कोई भी इन ढाई घंटों को खो देने के लिए तैयार न था।

एक फूल होता है, जिसे सूरजमुखी कहते हैं। एक हवा होती है, जिसे दक्षिण-समीर कहकर हम पुकारते हैं। एक क्षण होता है, जिसे हम बोध की संज्ञा देते हैं। और इसीलिए आनंद की आँखों में आँखें डालकर मीरा अपने को भूल जाना चाहती थी।

''आनंद, तुममें क्या है, जो मैं तुमसे दूर जाना सोचकर भी दूर नहीं जा पाती हूँ?'' मीरा ने कहा था।

''इसका जवाब तो तुम स्वयं अपने आपसे पूछ सकती हो।'' मीरा की अंगुलियों से अपनी अंगुलियाँ उलझाते हुए आनंद ने तब कहा था।

मीरा ने अपने उत्तर में निरीह आँखों से आनंद की ओर देखा था। आनंद ने अंगुलियाँ छोड़ दी थीं और उसने मीरा की बाँहें थाम ली थीं और दोनों कुरसी से उठकर डनलप के गद्दे पर आ गए थे और डनलप हिला था, तख्त के पाँवों में मचमचाहट हुई थी···तभी मीरा ने आनंद से कहा था, ''जितने भोले तुम दीखते थे, उतने भोले तुम हो नहीं।''

बाहर घड़ी में टन की आवाज हुई थी, साढ़े आठ। अब उनके पास केवल एक घंटे का समय था—खोने के लिए, पाने के लिए, इतिहास को सही रूप में परखने के लिए।

डॉ. आनंद कुमार प्राध्यापक हैं। काशी हिंदू विश्वविद्यालय में मनोविज्ञान विभाग के छात्र अपने इन खोए-पाए मनीषी-चिंतकदार्शनिक प्रोफेसर से बड़े प्रसन्न हैं। बुद्धि की गरिमा और व्यक्तित्व की मर्यादा—दोनों का संयोग-सम्मिश्रण डॉ. आनंद में है। अविवाहित हैं, किंतु जीवन की समरसता से विरक्त नहीं। मौका मिला नहीं कि खँडहरों, बियाबानों, सागर-तटों, वन-प्रांत में, आश्रमों की सैर को निकल पड़ते हैं। जिंदगी के प्रति कहीं कोई कम नहीं, कहीं कोई गाँठ नहीं, कहीं कोई उलझाव नहीं। जिंदगी में भूलें अधिक हैं, यादें कम।

मीरा सिन्हा सुश्री हैं, श्रीमती हैं। मनोविज्ञान में ही एम.ए. करने का सौभाग्य-सुख इन्हें भी मिला है। जीवन में कई सपने सँजोए रहीं और अंत में जर्मनी से उच्च शिक्षा प्राप्त कर लौटे एक इंजीनियर की बीवी हो गईं। बहरहाल जमशेदपुर में घर-गृहस्थी है। पति के साथ टेलको कॉलोनी

में रहती हैं और शादी के दो साल बाद तक कोई तीसरा न आया है, इसीलिए कभी-कभार अकेले-दुकेले दिल्ली, कलकत्ता, राँची, पटना आने-जाने की सुविधा है। दिल्ली में पिताजी कृषि मंत्रालय में वरिष्ठ अधिकारी हैं।

कभी-कभी पूरी जिंदगी बीत जाती है, लेकिन याद करने के लिए एक-दो क्षण ही शेष रह जाते हैं। आँखों में आँसू आते हैं, हृदय में ज्वार-भाटा उठता-गिरता है, काल का नर्तन होता चलता है। हम तैरना जानते हुए भी डूबते जाते हैं। और इसी तरह मियादी बुखार जैसे ज्वर से त्रस्त रहते हैं, हमारी आँखें लाल रहती हैं, नथुनों से गरम साँसें आती-जाती हैं, खाँसी-सर्दी का हलका प्रकोप रहता है और हम हैं कि जिए चले जाते हैं। और हमारी यह जिंदगी जिंदगी के नाम पर हास्य का आलंबन है। लेकिन ऐसे में ही कहीं कोई बिजली कौंधती है, आकाश बिखरता है, मौत का साया हमसे दूर जा गिरता है। ऐसे क्षण जिंदगी के सौ-पचास सालों में अंगुलियों पर गिने-गुँथे होते हैं और ऐसे ही क्षणों में आनंद और मीरा समझ रहे थे कि इन्हें कैसे अनमोल बनाया जाए।

**मीरा की आँखों में क्या कुछ तो छलक रहा था, जिसे पहचानते हुए भी आनंद न पहचान पाने की कोशिश कर रहा था कि मीरा अपने को बेतरह सँभालने की चेष्टा कर रही है—स्त्री का स्वाभाविक परिवेश वह छोड़ नहीं सकती, परंतु सबके बावजूद वह अपने को सँभाल नहीं पा रही थी। और तभी बाहर किवाड़ पर किसी ने दस्तक दी, ''हुजूर, साढ़े नौ बज गए, अब चला जाए।'' कुली ने पुकारा था।**

मनु और फ्रायड और युंग वहाँ खड़े-के-खड़े रह जाते हैं, जहाँ आदमी आदमी को सही रूपों में देख लेता है, पहचान लेता है, पा लेता है।

''बार-बार तुम्हारी पहली तसवीर मेरी आँखों में कौंध जाती है।'' मीरा ने कहा था।

''मैं जानता था कि किसी-न-किसी दिन तुम मेरे इतने पास आ जाओगी।'' आनंद बोला था।

मीरा ने अपनी हथेली आनंद की पीठ पर डाल दी। उसने उसे फेरना शुरू किया था, मानो किसी बच्चे को सहला रही हो। ''आनंद, बहुत दिनों से मेरी यह साध थी कि तुम्हारी पीठ पर हथेलियाँ फेरूँ और तुम मेरी बाँहें दबा दो। तुम्हारी ओर देखती थी तो अनायास ग्रीक मूर्तियाँ याद आ जाती थीं—सुडौल बाँहें, अवयवों का मांसल उतार-चढ़ाव...'' वह कहीं बुरी तरह उलझ गई थी।

''मीरा!'' आनंद के मुँह से बड़े परिश्रम से शब्द निकले, ''सबसे बड़ा सत्य सबसे बड़ा झूठ है और सबसे बड़ा झूठ सबसे बड़ा सच। सारनाथ तुमने देखा होगा, बुद्ध की मांसल मूर्तियाँ उसी सत्य की परिचायक हैं। वही मांसलता, वही अवयवों का उतार-चढ़ाव और तभी सुजाता चरणों में समर्पित हो गई थी।'' आनंद के मुँह से उसका प्रतिपाद्य विषय बोल रहा था।

''आनंद, हम जीवन से सर्वथा दूर हैं, लेकिन विश्वासों की परिधि के निकट। मैंने प्रतिज्ञाएँ कीं कि तुम्हें न सोचूँ, मगर अपने आपसे मैं पराजित होती रही हूँ। तुम मानो या न मानो, क्योंकि मैं भी स्वयं न तो भवितव्य मानती हूँ और न संयोग, बल्कि इंट्यूशनों पर विश्वास करती हूँ और इसीलिए जब मैं कल दिल्ली से चली थी तो मेरे मन में कहीं से यह भाव आया था कि तुम रास्ते में जरूर मिलोगे...और इसीलिए मैं हर स्टेशन पर अपनी आँखें बाहर टिकाकर इस सत्य की पहचान कर लेना चाहती थी।'' मीरा ने एक ही साँस में वह सब कह दिया था।

बाहर किसी के पैरों की चाप सुनाई दी, आनंद ने अपनी पकड़ ढीली कर दी। मीरा हँसी—''किवाड़ अंदर से बोल्ट हैं और देखनेवालों ने देखा ही होगा कि एक पुरुष और एक नारी अंदर हैं, तो इसमें हर्ज ही क्या कि लोग जैसी चाहें वैसी कल्पना कर लें।'' उसने बड़ी निश्चिंतता से यह कहा था और आनंद को स्वयं अपने आप पर झेंप आ गई थी।

''मुझे और कुछ नहीं चाहिए। मुझे जो मिलना था, मिल गया। अब किसी बात की न कामना है, न लालसा। क्यों नहीं हम यहीं लक्ष्मण रेखा खींच दें।'' आनंद ने कहा।

''आनंद, तुम बात नहीं समझते। रेखाओं का अतिक्रमण ही अपहरण नहीं होता।'' यह कहते हुए मीरा ने अपने को और भी आनंद के नजदीक कर लिया था। एक ओर अतिशय भार पाकर डनलप थरथरा उठा था।

परंतु दूसरे ही क्षण मीरा सँभल गई, ''आनंद, तुम गंदे आदमी हो।'' उसने किंचित् मुसकराते हुए यह कहा था।

आनंद ने भी छेड़ा था, ''गंदा भले होऊँ, जटिल नहीं हूँ।''

''तुम न गंदे हो और न जटिल ही, तुम शैतान हो, शैतान!'' मीरा ने अपने आप ही अपने को संशोधित किया था।

आनंद ने मीरा के गाल पर हलकी सी चपत मारी, ''शैतान तो बच्चे हुआ करते हैं।'' और उसकी बाल-सुलभ चपलता स्पष्ट हो आई थी।

मीरा की आँखों में क्या कुछ तो छलक रहा था, जिसे पहचानते हुए भी आनंद न पहचान पाने की कोशिश कर रहा था कि मीरा अपने को बेतरह सँभालने की चेष्टा कर रही है—स्त्री का स्वाभाविक परिवेश वह छोड़ नहीं सकती, परंतु सबके बावजूद वह अपने को सँभाल नहीं पा रही थी।

और तभी बाहर किवाड़ पर किसी ने दस्तक दी, ''हुजूर, साढ़े नौ बज गए, अब चला जाए।'' कुली ने पुकारा था।

कातर, निरीह और विवश आँखों से उन दोनों ने एक-दूसरे की ओर देखा था, मानो केवल एक क्षण बीता हो और वह क्षण भी इतना जल्द कैसे बीत गया! हालाँकि दोनों इस बात को समझ रहे थे कि यह बीता क्षण सौ बरसों के बराबर है और बरस-पर-बरस बीत जाएँगे, जिंदगी बीत जाएगी, लेकिन यह क्षण यादों के वृत्त बनकर कभी नहीं बीतेगा।

कहानी

# ठीकरे का मोल

● उषा यादव

आज सुबह से ही घर में गहमा-गहमी है।

मणिका को देखने के लिए कुछ लोग आ रहे हैं।

पूरे घर के लिए कौतुकपूर्ण सूचना है यह। किसी को विश्वास नहीं हो रहा कि नन्ही सी मणि इतनी बड़ी कब हो गई कि उसकी शादी की चर्चा शुरू हो गई! विवाह प्रस्ताव खुद लड़केवालों की तरफ से आया है और उन्होंने लड़की देखने की पेशकश की है। घर-वर को लेकर यहाँ किसी के मन में कोई संशय नहीं है। बिरादरी का प्रतिष्ठित परिवार है और हाल ही में लड़के का डिप्टी कलक्टर के पद पर चयन हुआ है। उसके ट्रेनिंग पर जाने से पहले ही वे लोग रिश्ता तय कर देना चाहते हैं।

सच तो यह है कि हीरे जैसे वर पर लुब्ध होने की इस घर की औकात ही नहीं थी। उस पर दान-दहेज की कोई चर्चा न करके उन लोगों ने पूरा रहस्य-लोक ही सिरज दिया है। यदि संबंध जुड़ गया तो यही माना जाएगा कि कन्या के नसीब में ही राजरानी बनने का योग था।

तैयारियों की व्यस्तता के बीच मणि के पिता विश्वंभर को अपने बाप दीपचंद की याद आई। एकदम हिटलरी मुद्रा में उसने पिता को चबूतरे पर धर दबोचा, ''बुढ़ऊ, तुम्हारे कान मतलब की बात सुनने में बहुत चौकस रहते हैं। अब तक जरूर सुन चुके होगे कि मणि को देखने के लिए कुछ लोग आ रहे हैं।''

दीपचंद मौन रहे। अपने इस उद्दंड बेटे से बहुत डरते हैं वह। आज से नहीं, वर्षों से। कुछ बोलने का मतलब खुद को बेइज्जत कराना है, वह जानते हैं। इसलिए इस वक्त भी बेटे की बात का जवाब देना उन्होंने मुनासिब न समझा। पर उनकी इस हुक्मउदूली पर विश्वंभर की आँखें लाल हो उठीं, ''इस तरह गूँगे बनकर क्या जतलाना चाहते हो तुम? जल्लाद हूँ मैं, फाँसी चढ़ा दूँगा तुम्हें?''

दीपचंद को मुँह खोलना पड़ा, ''सचमुच हमारे लिए बहुत खुशी और फख्र की बात है कि बिरादरी की नाक समझे जाने वाले परिवार ने खुद हमारी मणि में दिलचस्पी दिखाई है।''

''गनीमत है, जुबान तो खुली!'' विश्वंभर ने मुँह बिचकाया, ''अब कान खोलकर सुन लो, जब तक वे लोग यहाँ रहें, तुम्हें पार्क या मंदिर के चौतरे पर बैठना है। भूलकर भी घर में पाँव धरा तो मुझसे बुरा कोई न होगा!''

''ठीक है।'' दीपचंद ने हामी भर दी। विरोध करने की व्यर्थता जानते थे। बेटे ने खुद ही वजह बता दी, ''दरअसल तुम पागल ठहरे! कब, किसके सामने क्या बकवास करने लगोगे, इसका मुझे भरोसा नहीं है। बेहतर है, अपनी परछाईं भी उस दरमियान यहाँ न पड़ने दो। तुम्हारी

वरिष्ठ कथाकार। 'हीरे का मोल' तथा 'सोना की आँखें' बाल-उपन्यास बहुत चर्चित हुए। उन्होंने बच्चों के लिए नाटक और कथात्मक शैली में जीवनियाँ भी लिखी हैं। उ.प्र. हिंदी संस्थान के 'बाल साहित्य भारती' पुरस्कार से सम्मानित।

किसी बेहूदी हरकत से उन लोगों के सामने मैं शरमिंदा नहीं होना चाहता।''

दीपचंद के चेहरे पर कलौंछ उतर आई।

''अब खड़े-खड़े मेरा मुँह क्या देख रहे हो?'' विश्वंभर खीझ उठा, ''दफा हो जाओ यहाँ से!''

एक पिटे कुत्ते की तरह दीपचंद वहाँ से चल दिए। इतना कहने की भी हिम्मत नहीं जुटा सके कि पेट में कुछ बासी-तिबासी तो डाल लेने दो! भूखे पेट बैठकर तपस्या करने की इस जागर में कूवत नहीं है। आँखों की कोर अवश्य भीग गई थीं। उसे वह हर संभव कोशिश करके बेटे की निगाह से छिपाना चाहते थे। देख लेने पर फिर चाबुक सा मारता, ''तुम इनसान हो या हैवान? घर में मंगलकारज की शुरुआत हुई नहीं कि तुम आँसू बहाकर अपसगुन करने लगे!''

दीपचंद चले जरूर गए, पर उनका मन घर में ही धरा रहा। मणि उनकी लाड़ली पोती ही नहीं, आँखों की पुतली है। उसकी शादी के प्रसंग से खुद को अछूता रखना उनके हृदय को कैसे गवारा हो सकता था? इसीलिए मंदिर की सीढ़ियों पर बैठने के बाद भी अनमने रहे। जान तक नहीं सके कि उनकी अनुपस्थिति में कब डिप्टी कलक्टर लड़का अपने माता-पिता के साथ आया है। कब जलपान के दौरान लड़के के पिता ने विश्वंभर से पूछा है, ''आपके पिताजी कहाँ हैं? दिखाई नहीं दिए।''

''वह शहर से बाहर हैं।'' उन्हें जवाब मिला है।

''कब तक लौटेंगे? यदि आस-पास ही गए हों, तो फोन करके बुला लीजिए। उनसे मिलने का मेरा विशेष रूप से मन है।''

''गाँव गए हैं। तीन-चार दिन में लौटेंगे। वहाँ बीहड़ में सिगनल न होने से फोन की सुविधा का लाभ नहीं उठाया जा सकता।''

''ऐं, गाँव?'' मेहमान का चेहरा यह सुनकर गंभीर हो उठा है।

जो भी हो, इस संवाद से अनजान रहने पर भी दीपचंद अपने पेट की भूख से अनजान न थे। शायद किसी काम में व्यस्त होते तो बार-बार इधर ध्यान न जाता। पर खाली बैठे रहने पर मन लौट-फिरकर उसी एक बिंदु पर पहुँच जाता था, विश्वंभर ने नाश्ता तक नहीं करने दिया!

पूजा की थाली और जल से भरा लोटा लिये मंदिर आनेवाली

कॉलोनी की महिलाओं को जब अपनी वजह से असुविधा होते देखी तो दीपचंद सीढ़ियों से उठ खड़े हुए। उनके कदम पार्क की ओर बढ़ गए। सुबह का समय होता तो वहाँ प्रात: भ्रमण करनेवालों की भीड़ मिलती। दो-चार संगी-साथी भी घड़ी भर बोलने-बतियाने को मिल सकते थे। नियमित योग करनेवालों की गतिविधियाँ ही कुछ देर निहारी जा सकती थीं। पर इस वक्त माली खुरपी से क्यारियों की गुड़ाई कर रहा था और चटक धूप चारों ओर फैली हुई थी।

**सोचने लगे, सिरफिरे इनसान का क्या भरोसा? विश्वंभर कहीं उनका चेहरा देखते ही गुस्से से तमतमा तो न उठेगा? पर जब द्वार तक आ ही गए थे तो सोचा, ओखली में सिर देने के बाद मूसल से कैसा डर? जो हालात सामने आएँगे, भुगतने पड़ेंगे, भुगत लूँगा।**

दीपचंद को देखकर माली ने अपने माथे का पसीना पोंछते हुए कहा, ''बाबू, यह समय पार्क में घूमने का नहीं है। पाँच मिनट में ही आप पसीने से नहा जाओगे।'' ''जानता हूँ भाई।'' दीपचंद एक मलिन हँसी हँसे, ''खोटे सिक्के से सभी ऐसे ही बेरुखी से मुँह फेर लेते हैं। देखो न, तुम्हें मेरा यहाँ घड़ी भर खड़ा रहना अखर गया।'' माली ने दाँतों तले जीभ दबाई और दोनों हाथ जोड़ लिये, ''आपने कैसी बात कह दी बाबू! मुझे भला आपके यहाँ ठहरने से क्यों एतराज होगा? वह तो धूप की तलखी देखकर मुँह से निकल पड़ा था। मैं भी अब उठकर घर चलूँ। बुढ़िया राह देख रही होगी। थोड़ी और देर कर दी तो आँखें तरेरती यहीं आ धमकेगी। ऊपर से चार खरी-खोटी सुनाएगी।''

दीपचंद को पता था कि माली की छोटी सी कोठरी पार्क के पिछवाड़े ही बनी हुई है। उसे उठकर जाते देखा, तो खुद भी साथ लग गए, ''सोचता हूँ कि जब यहाँ तक आया हूँ तो तुम्हारे यहाँ चलकर मिट्टी के घड़े का एक लोटा पानी पीता चलूँ। अब तो घर-घर में फ्रिज आ गए हैं न! हमारे जैसे गँवई-गाँव के बाशिंदे घड़े के सोंधे पानी तक को तरस जाते हैं।''

''आइए बाबू! खुशी से पानी पीजिए। पर गरीब आदमी के घर आपको जल के साथ गुड़ की डली ही मिलेगी। मिठाई के दो टुकड़े तक न खिला सकूँगा।'' ''मेरे लिए वह गुड़ की डली किसी मेवे-मिठाई से कम नहीं होगी, भाई।'' कहते हुए दीपचंद की आवाज लरज गई। आँखों में एक बार फिर आँसू उमड़ने को हुए, पर इस दफा भी अपने दर्द को घुटक गए।

मोहनभोग से भी मीठा गुड़ की डली का स्वाद। उसके साथ लोटा भर ठंडा पानी। दीपचंद को तनिक सुकून मिला। माली की कोठरी के सामने नीम का एक घना पेड़ था। उसकी छाया में एक चारपाई पड़ी थी। हवा के झोंकों से हिलती पत्तियाँ और वह चारपाई दीपचंद को घंटा, आध घंटा वहीं लेटकर आराम करने का निमंत्रण देने लगीं। पर यह तो उँगली पकड़कर पहुँचा पकड़ने जैसी बात हो जाती। सुबह का थका-हारा माली कुछ कलेवा करके खुद इस चारपाई पर लेटकर विश्राम करना चाहेगा, इतनी समझ उनमें थी।

पानी पीकर तनिक कसकती आवाज में बोले, ''तो चलूँ अब?''

''हाँ बाबू, सीधे घर जाइए। अब हमारी आपकी लड़कपन की वह उमर नहीं रही है जो बारिश की झड़ी, सर्दी की मार और धूप का कहर झेल सके।''

''सच कहते हो भाई!'' दीपचंद बोझिल कंठ से बोले और आगे बढ़ गए।

माली ने उन्हें सीधे घर जाने की नसीहत दी थी, पर वह जानते थे कि इस वक्त घर का दरवाजा उनके लिए बंद है। ठीक है, विश्वंभर की इच्छानुसार वह मेहमानों के सामने न पड़ते। पर कबाड़ भरने की कोठरी में तो बैठ ही सकते थे। किंतु दबंग बेटे को बूढ़े बाप का घर में ठहरना तक गवारा न हुआ। गवारा तो उस औरंगजेब को बाप की साँसों का चलना भी नहीं है, लेकिन अपने हाथों गला न घोंट सकने की बेबसी के चलते इस शाहजहाँ को झेल रहा है। उन्होंने उद्विग्न होते हुए सोचा। मन-मन भर के पाँव एक बार फिर मंदिर के चौतरे की तरफ उनकी बूढ़ी-लाचार देह को ठेलते हुए ले जाने लगे। वहाँ भी निष्प्रयोजन बैठे रहना खलेगा, वह जानते थे किंतु निरुपाय थे।

दोपहर बारह बजे मध्याह्न की आरती के बाद पुजारीजी मंदिर के पट बंद करके अपने घर चले गए। अब शाम को पाँच बजे ही लौटेंगे, दीपचंद को मालूम था। इस अवधि में सिर्फ लू के झकोरे ही टहोका मारकर उनके संगी-साथी बनेंगे, यह भी जगजाहिर था। सिर्फ अज्ञात थी उनके लिए अपने गृह-निर्वासन की अवधि और यह टीस छोटी न थी।

अचानक दीपचंद चिहुँक उठे। उन्हें लगा, लड़की देखकर मेहमान अब तक लौट गए होंगे। इसलिए उन्हें भी घर पहुँच जाना चाहिए। यहीं बैठे रहने पर विश्वंभर गरियाए बिना न रहेगा, 'टमटम-बग्घी भेजे जाने का इंतजार कर रहे थे क्या? बहू-बेटी रसोई लिये तुम्हें जिमाने को साँझ तक बैठी रहेंगी, ऐसे लाटसाहब हो?'

अपनी गलती का अहसास होते ही दीपचंद हड़बड़ाकर उठ खड़े हुए। हालाँकि तेज धूप की वजह से पैदल चलना कष्टकारी था, पर घर पहुँचने की ललक से पैरों में पंख लग गए थे। उत्साह के अतिरेक में बेटे की आलीशान कोठी तक तो पहुँच गए, पर फाटक पर खड़े होकर पाँव फिर मन-मन भर के हो गए।

सोचने लगे, सिरफिरे इनसान का क्या भरोसा? विश्वंभर कहीं उनका चेहरा देखते ही गुस्से से तमतमा तो न उठेगा? पर जब द्वार तक आ ही गए थे तो सोचा, ओखली में सिर देने के बाद मूसल से कैसा डर? जो हालात सामने आएँगे, भुगतने पड़ेंगे, भुगत लूँगा।

दीपचंद ने कोठी का फाटक इतने धीरे से खोला, ताकि भीतर आवाज न पहुँचे। गलियारा पार किया, बरामदे में जा खड़े हुए। ड्राइंग-रूम का दरवाजा खुला था, परदा लहरा रहा था। मन में आशंका जागी, कहीं मेहमान अभी यहीं तो नहीं हैं? यदि कमरे में मौजूद हुए तो बवाल खड़ा हो जाएगा।

पर दो-तीन मिनट आहट लेने की कोशिश के बाद भी नि:स्तब्धता छाई रही। बातचीत का कोई स्वर कानों में न पड़ा। वैसे भी सुबह आठ बजे के आए मेहमानों का अब तक रुकना कठिन ही था। सिर्फ लड़की देखने

में समय ही कितना लगा होगा? उसके बाद नाश्ते-पानी में यदि घंटा-डेढ़ घंटा भी लग गया हो, तो ग्यारह बजे तक उनको वापस लौट जाना चाहिए था। और अब तो दोपहर बारह बजे मंदिर के पट बंद हो जाने के बाद भी घंटे भर से ज्यादा समय निकल चुका है। एक-डेढ़ बजे तक उन लोगों का ठहरे रहना संभव ही नहीं है। इसीलिए ड्राइंग-रूम में सन्नाटा था। कोई आवाज नहीं आ रही है।···और हाँ, कोठी के सामने कोई गाड़ी विश्वंभर की गाड़ी गैरेज में बंद है। निश्चय ही अपनी गाड़ी में आए वे लोग लौट चुके हैं।

दीपचंद ने स्वयं को सुस्थिर किया। माथे पर झिलमिलाती पसीने की बूँदों को पोंछा और दिल कड़ा करके ड्राइंग-रूम का परदा हटाकर भीतर पाँव रखा। पर यह क्या? सामने किसी गरजते सिंह को खड़ा देखकर भी वह इतना खौफ न खाते, जितना सामने सोफे पर बैठे किसी संभ्रांत सज्जन को देखकर भयभीत हो गए। कमरे में कुछ अन्य मानव-मूर्तियों की उपस्थिति का भी आभास हुआ, पर वे कहाँ हैं और क्या कर रही हैं, देखने-जानने का दीपचंद को होश न रहा। हाँ, सोफे पर बैठे संभ्रांत सज्जन के निकट बैठा हुआ विश्वंभर जरूर दिखाई दे गया।

दीपचंद ने सोचा कि बिना कोई आहट किए वह वापस मुड़े और कमरे से बाहर निकल जाएँ? परदा पहले की तरह लहराने लगे, तो शायद कोई उनका यहाँ आना न जान सकेगा। पर उनके कदम पीछे हटने से पहले ही संभ्रांत व्यक्ति के मुँह से सुनाई दिया, ''विश्वंभर बाबू, देखिए कौन आए हैं?''

इन शब्दों के कानों में पड़ते ही दीपचंद एक अचल पाषाण प्रतिमा में तब्दील हो गए। उनके चेहरे पर हवाइयाँ उड़ने लगीं। अब बाहर निकलना फिजूल था। उनका आगमन जान लिया गया था। उनके ऊपर गाज गिरेगी, यह तय था। किस रूप में गिरेगी, यह नहीं जानते थे।

विश्वंभर शायद सिर झुकाए कोई पत्र पढ़ रहा था। नजदीक बैठे संभ्रांत सज्जन की आवाज सुनकर चौंका और सिर उठाया। द्वार पर खड़े दीपचंद को देख उसके सिर पर भूत सवार हो गया। खुद को रोकते-रोकते भी हिम-शीतल कंठ से निकल ही पड़ा, ''तुमसे आने को मना किया था न? वापस लौटो।''

दीपचंद अपना चक्कर खाता मस्तिष्क और लड़खड़ाते कदम लिए पीछे मुड़े और बाहर निकलकर खुले दरवाजे से तनिक हटकर खड़े हो गए। साँसों को सँभालने के बाद ही उनमें वहाँ से हटने की ताकत आ सकती थी। वर्तमान शारीरिक-मानसिक स्थिति में उनके लिए दो कदम चलना भी दूभर था। सिर्फ यही नंगी तलवार उनकी गरदन पर लटक रही थी, कमरे में पाँव धर देने के अपराध का अंजाम क्या होगा? जिस हुलिया में वह विश्वंभर के इतने खास मेहमान के सामने जा पहुँचे थे, क्या उनका गुस्सैल बेटा इसे बरदाश्त कर सकेगा?

दीपचंद की निगाह अपनी वेशभूषा पर गई—पाँव में बेटे द्वारा फेंक दी गई पुरानी चप्पलें, देह पर मैली-कुचैली धोती और घटियापन में उससे होड़ लेती हुई आधी आस्तीन की बंडी। सिर पर बेतरतीब बाल। चेहरे पर बढ़ी हुई खिचड़ी दाढ़ी। सर्वांग में किसी भिखारी की झलक। यह स्थिति तब थी, जब सारे घर के कपड़े वाशिंग मशीन में धुलते थे। उनके लिए साबुन की एक बट्टी तक पच्चीसों दफे फरियाद के बाद मुहैया होती थी।

पर बेटे की अदालत में उन्हें सफाई पेश करने का मौका ही कब मिलेगा? अहंकार में चूर उनके बेटे ने इनसानियत का पाठ पढ़ा ही कब है? जिस तरह नमूना बने वह ड्राइंग-रूम के दरवाजे पर खड़े हो गए थे, उसे नई रिश्तेदारी जुड़ते समय सहन नहीं किया जाएगा। विश्वंभर इस गलती के लिए उन्हें कभी माफ नहीं करेगा।

तभी उनके कानों में कमरे से आता संभ्रांत सज्जन का कंठ-स्वर पड़ा—''कौन थे यह सज्जन? यदि मिलना जरूरी हो तो आप उन्हें बुला सकते हैं। अभी फाटक पर ही होंगे।''

''अरे भाई साहब, आप अभी तक उस फटेहाल आदमी के बारे में ही सोच रहे हैं।'' विश्वंभर की खुशामदाना आवाज गूँजी, ''यह तो हमारा माली है। थोड़ा सिरफिरा और पागल किस्म का बूढ़ा है। पर मैंने तरस खाकर काम पर लगा रखा है। बेचारा दुनिया में अकेला है। किसी और बँगले में तो इसे काम मिलेगा नहीं। हमारे यहाँ लगा रहने पर कम-से-कम भूखों तो नहीं मरेगा!''

''ठीक कहते हैं आप।'' कहकर संभ्रांत सज्जन ने बात खत्म कर दी।

''आपने देखा, दिमागी तौर पर कितना कमजोर है? यह वक्त पेड़-पौधों की सार-सँभाल का है? कई बार समझाया है मैंने कि इस विकट गरमी में सिर्फ सवेरे-शाम ही बगीचे की देखभाल किया करो। पर पागल है न, कुछ समझता ही नहीं। इसलिए वापस लौटाना पड़ा।''

सिर्फ एक गंभीर ''हूँ'' संभ्रांत सज्जन के कंठ से निकली।

दीवार की आड़ में खड़े दीपचंद ने यह सारा संवाद सुना। उन्हें लगा, किसी ने पिघला सीसा कानों में उड़ेल दिया हो। क्या कोई बेटा अपने बाप के लिए···।

अगले ही पल उन्हें लगा कि वह यहाँ खड़े रहकर अपने गुनाह में और बढ़ोतरी कर रहे हैं। यदि किसी वजह से कोई व्यक्ति ड्राइंग-रूम से निकल आया, तो होनेवाले अनर्थ की कल्पना से वह काँप उठे। जैसे-तैसे ताकत सँजोकर वहाँ से हट गए। एक बार फिर सावधानी से, बिना आहट कोठी का फाटक खोला और बाहर निकलकर उसे बंद करने के बाद आग बरसती सड़क पर खड़े हो गए।

बाएँ पाँव की हवाई चप्पल को भी इसी वक्त टूटना था। इस लायक न रही थी कि उसे पहनकर दो कदम चला जा सके। नंगे पाँव इस धूप में मंदिर तक पहुँचने की कल्पना से दीपचंद का सिर घूम गया।

पर आसमान से बरसती आग से पेट में उमड़ती आग क्या कम

भयंकर थी? धूप एक बार सहन की जा सकती थी, भूख को सहना नामुमकिन था।

दीपचंद ने हताशा से हाथ मले।

तभी एक केलेवाला समीप से अपनी ठेली लिये हुए निकला। भूख से बेहाल दीपचंद के मन में आया, गिड़गिड़ाकर इससे एक केला माँग लें। पर इस भिखमंगेपन को उनके स्वाभिमानी हृदय ने गवारा न किया। लेकिन आँखों में व्याप्त भूख को शायद एक निगाह में ही उस मामूली फल विक्रेता ने पढ़ लिया था। ठेली रोक, करुणार्द्र कंठ से बोला, ''भूखे हो बाबा? केला खाओगे?''

''नहीं बेटा! भगवान् तुम्हारा भला करे।'' दीपचंद लड़खड़ाती जुबान से बोले। बुभुक्षा जतला देने की अपनी आँखों की चुगलखोरी पर उन्हें क्रोध आया, पर निरुपाय थे। दरअसल, कल शाम भी उन्हें निराहार रहना पड़ा था। विश्वंभर अपने परिवार सहित कहीं बाहर निकल गया था और वहाँ से वे लोग खा-पीकर लौटे थे। बूढ़े बाप के पेट की पहले भी कब किसी ने चिंता की थी, जो कल करते! कटोरदान में सुबह की दो बासी रोटियाँ पड़ी भी होंगी तो उन्हें बुड्ढे को देने के बजाय कुत्ते के आगे फेंकना बेहतर समझा होगा। वह भी यह सोचकर सब्र कर गए थे कि एक वक्त न खाने से पेट को आराम ही मिलेगा। कहाँ पता था कि अगले दिन फिर उपवास की नौबत आ जाएगी। विश्वंभर के हिटलरी आदेश पर अमल करने से पहले जेब में दस-बीस रुपए डाल लेने का ही अगर खयाल आ गया होता, तो इस तरह भूख से कुश्ती नहीं लड़नी पड़ती। पर अब तो···।

केले वाले के विपरीत दिशा में चले जाने पर वह नंगे पाँव तपती सड़क पर बढ़ गए। गंतव्य था वही दुर्गा मंदिर। पर उनकी क्षणिक उपस्थिति मात्र से कोठी के ड्राइंग-रूम का खुशनुमा माहौल भी जैसे किसी अप्रिय गंध से भर गया था। संभ्रांत सज्जन ने उबासी लेते हुए अपनी जेब से मोबाइल निकाला और एक नंबर मिलाने के बाद पूछा, ''दिवाकर, गाड़ी ठीक हुई?''

''जी सर। सर्विस सेंटर काफी दूर था, इसलिए समय लग गया। लेकिन अब मेकैनिक ने एक पुरजा बदल दिया है। वापसी में गाड़ी हमें परेशान नहीं करेगी। मैं दस मिनट में पहुँच रहा हूँ।'' उधर से बताया गया।

सज्जन ने मोबाइल का स्विच बंद करके कहा, ''विश्वंभर बाबू हमारी गाड़ी ठीक हो गई है। ड्राइवर उसे लेकर दस-पंद्रह मिनट में आ रहा है। हमें चलने की इजाजत दीजिए।''

''दरअसल, मैं चाहता था कि जब आप लोगों को हमारी मणिका पसंद है, तो क्यों न आज ही बात पक्की कर ली जाए।'' विश्वंभर ने याचना की।

''देखिए, हमें आपकी बेटी पसंद जरूर है, पर हम शादी तभी पक्की करेंगे, जब आपके पिताजी भी मौजूद होंगे।''

''उनकी अनुपस्थिति में भी बात तय की जा सकती है। पोती की शादी पक्की हो जाने की खबर सुनकर वह निश्चय ही प्रसन्न होंगे।''

**''तो आप सुन लीजिए, इसकी वजह आपके पिताजी हैं। सिर्फ इसीलिए हम आपके घर की बेटी को अपने घर की बहू बनाना चाहते हैं, क्योंकि वह बाबू दीपचंदजी की सुपौत्री है। इसके अलावा आपके परिवार में हमारी दिलचस्पी की कोई अन्य वजह नहीं है।''**

''मैं मानता हूँ, पर हमारे परिवार की खुशी तो अधूरी रहेगी।'' वह गंभीर होकर बोले।

''ऐसा क्यों?'' विश्वंभर ने अबूझ भाव से मेहमान का चेहरा देखा।

उन्होंने बात स्पष्ट की, ''यह तो आप भी मानते होंगे कि आपके यहाँ अपनी ओर से पहल करके हमारा शादी का प्रस्ताव भेजना यह जाहिर करता है कि हम आपके यहाँ अपने बेटे का संबंध करने के इच्छुक हैं।''

''जी हाँ।'' विश्वंभर तनिक सकपकाया।

''यह कोई छोटी बात नहीं है। कोई वजह तो इसके मूल में होनी ही चाहिए।''

''जी हाँ।'' विश्वंभर को फिर स्वीकारना पड़ा।

''तो आप सुन लीजिए, इसकी वजह आपके पिताजी हैं। सिर्फ इसीलिए हम आपके घर की बेटी को अपने घर की बहू बनाना चाहते हैं, क्योंकि वह बाबू दीपचंदजी की सुपौत्री है। इसके अलावा आपके परिवार में हमारी दिलचस्पी की कोई अन्य वजह नहीं है।''

विश्वंभर भौचक्का रह गया।

शब्द नहीं, जैसे कोई तिलिस्म उसके सामने सिरज गया था। उसे लगा, इस तिलिस्म का टूटना जरूरी है, अन्यथा वह पागल हो जाएगा। जिस बूढ़े बाप को उसने हमेशा ठीकरा समझा, उस ठीकरे का मोल इतना अधिक कैसे हो सकता है? आखिर उस बूढ़े में ऐसा क्या है, जिसके सामने नतमस्तक होकर यह प्रतिष्ठित परिवार दौड़ा चला आया है?

''मेहमान ने मेजबान के चेहरे के भाव पढ़े और रहस्य से परदा हटाते हुए बोले, ''दरअसल, बाबूजी मेरे पिता के बचपन के मित्र हैं। दोनों ने एक साथ गाँव की प्राइमरी पाठशाला में अपनी आरंभिक पढ़ाई की थी। उस वक्त मेरे पिता की जिंदगी तकलीफों से भरी थी। माता-पिता थे नहीं। चाचा-चाची की क्रूरताओं के चलते भविष्य अंधकारमय था। तब आपके पिता ने ही उन्हें न सिर्फ आगे बढ़ने का हौसला दिया, बल्कि अपने माता-पिता की निरंतर मनुहार करके पैसों से भी भरपूर मदद की। अपने अजीज दोस्त दीपचंद की वजह से ही मेरे पिता का मनोबल नहीं टूटा और वे सरकारी नौकरी पाने के लिए प्रयासरत हुए। सौभाग्य से उनका मनोरथ सफल हुआ और उन्हें केंद्र सरकार की डाक सेवा में ऊँचा पद मिल गया। पर तबादले की नौकरी थी, नौकरी की व्यस्तताएँ थीं, चाहते हुए भी गाँव आकर अपने बालमित्र से वह मिल न सके। दोनों में काफी दिनों तक पत्र-व्यवहार चला, बाद में अपने-अपने पारिवारिक दायित्वों की वजह से वह भी बंद हो गया। लेकिन अपने बचपन के प्रिय मित्र के उपकारों को मेरे पिता अंतिम समय तक नहीं भूल सके। मृत्युशय्या पर उन्होंने मुझे अपने गाँव का पूरा अता-पता देते हुए कहा था कि मैं उनके बालमित्र की खोज करूँ और किसी-न-किसी रूप में उस अहसान का यत्किंचित् ही सही, भार उतारूँ।''

कमरे का माहौल भारी हो उठा था।

विश्वंभर के मुँह से कोई बोल न फूटा।

मेहमान ने अपनी लंबी बात के बीच थोड़ा विराम लेने के लिए मेज पर रखा पानी का गिलास उठाकर दो घूँट भरे और फिर बात का सूत्र जोड़ा, ''तो इस कोशिश में मैंने सबसे पहले गाँव में ही बाबूजी को तलाशा। मुझे मालूम पड़ा कि वह अपनी सारी संपत्ति बेचकर किसी शहर में बस गए हैं। चूँकि शहर का नाम और निश्चित पता-ठिकाना कोई नहीं बता सका, इसलिए अँधेरे में मेरी तलाश बराबर चलती रही। अभी हाल में मुझे उनके घर-परिवार के बारे में पूरी जानकारी मिली। ईश्वर की कृपा से अपने प्रतिभाशाली बच्चों की वजह से मुझे भी बिरादरी में पहचाना जाने लगा है, इसलिए मैंने एक पुरानी दोस्ती को चिरस्थायी बनाने के लिए दोनों परिवारों में वैवाहिक संबंध जोड़ने का मंसूबा बनाया। इसी का नतीजा है, जो मेरा परिवार आज आपके यहाँ मौजूद है। लेकिन आप खुद ही बताइए, क्या बाबूजी की गैरहाजिरी में हमारे लिए यह शादी तय करना मुनासिब होगा?''

एक सकता-सा छा गया। उस निस्तब्धता में विश्वंभर के हृदय की बढ़ी हुई धड़कन साफ सुनी जा सकती थी। वह समझ नहीं पा रहा था कि अपनी मूढ़ता पर कितना पछताए। जिस व्यक्ति के प्रति कृतज्ञता जतलाने के लिए यह परिवार उसकी चौखट पर आया, उसी का उसने 'माली' कहकर परिचय दिया है। यह सच है कि बुढ़ऊ···न न, पिताजी का हुलिया उस समय ऐसा नहीं था कि किसी प्रतिष्ठित परिवार से परिचय कराया जा सकता, पर उनकी इस फटेहाली का जिम्मेदार कौन है? उन आकस्मिक पलों में सिर्फ अपनी साख बचाने का खयाल उसके जेहन में आया था। सोचा था, किसी इनसान की क्षणिक, और वह भी मूक छवि लोगों को कहाँ याद रहती है? शादी के समय कन्या के बाबा को इतनी ठसक से पेश कर देगा कि आसमान के फरिश्ते भी फटेहाल माली से उसका साम्य नहीं मिला सकेंगे। पर इस नए रहस्योद्घाटन के बाद···

''तो ठीक है, फिर हम लोग चलते हैं।'' कहते हुए आगत सज्जन उठ खड़े हुए, उनके परिवारीजनों ने भी उठने की चेष्टा दिखाई।

तभी द्वार पर दस्तक हुई।

''कौन?'' विश्वंभर ने पूछा।

कॉलोनी के एक परिचित युवक ने परदा हटाकर भीतर झाँका। गंभीर कंठ से सूचना दी, ''जल्दी चलिए, आपके पिताजी का मंदिर की सीढ़ियों पर बैठे-बैठे देहांत हो गया है। विश्वंभर को लगा, वह चेतना-शून्य हो जाएगा।'' आगत सज्जन की जैसे सैकड़ों मील दूर से आती आवाज उसके कानों में पड़ रही थी, ''बाबूजी के इस रूप में दर्शन करने का मेरा दुर्भाग्य है, कब जानता था?''

जानता तो वह भी नहीं था कि किस आसेबी ताकत से खुद को गायब करके इस परिवार में मुँह दिखाने से बच सके। उसने दोनों हाथों से अपना माथा थाम लिया और एक अस्फुट आर्तनाद कंठ से निकल पड़ा।

७३, नॉर्थ ईदगाह कॉलोनी, आगरा-२८२०१०
दूरभाष : ०९७१९४६००८५

## सुधी पाठकों से निवेदन

- **जिन पाठकों की वार्षिक सदस्यता समाप्त हो रही है, कृपया वे सदस्यता का नवीनीकरण समय से करवा लें। साथ ही अपने मित्रों, संबंधियों को भी सदस्यता ग्रहण करने के लिए प्रेरित करने की कृपा करें।**
- **सदस्यता के नवीनीकरण अथवा पत्राचार के समय कृपया अपने सदस्यता क्रमांक का उल्लेख अवश्य करें।**
- **सदस्यता शुल्क यदि मनीऑर्डर द्वारा भेजें तो कृपया इसकी सूचना अलग से पत्र द्वारा अपनी सदस्यता संख्या का उल्लेख करते हुए दें।**
- **चैक अथवा बैंक-ड्राफ्ट साहित्य अमृत के नाम से भेजे जा सकते हैं।**
- **ऑन लाइन बैंकिंग के माध्यम से सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया के एकाउंट नं. १११०७३४३९३ अथवा CBIN ०२८०२९७ में साहित्य अमृत के नाम से शुल्क जमा कर फोन अथवा पत्र द्वारा सूचित अवश्य करें।**
- **पत्रिका न मिलने पर १५ से २० तारीख तक सूचित कर दें, ताकि वह अंक नए अंक के साथ भेजा जा सके।**
- **आपको अगर साहित्य अमृत का अंक प्राप्त न हो रहा हो तो कृपया अपने पोस्ट ऑफिस में पोस्टमैन या पोस्टमास्टर से लिखित निवेदन करें। ऐसा करने पर कई पाठकों को पत्रिका समय पर प्राप्त होने लगी है।**
- **सदस्यता संबंधी किसी भी शिकायत के लिए कृपया कार्यालय दिवस में २ से ५ बजे तक फोन नं. ०११-२३२५७५५५, २३२७६३१६ अथवा sahityaamrit@gmail.com पर इ-मेल करें।**

# औपनिवेशिक मानसिकता का साहित्य पर प्रभाव

● कमल किशोर गोयनका

स्वतंत्र भारत में भोपाल में पहला लोकमंथन हुआ है। स्वतंत्रता के इतने वर्षों के अंतराल के बाद भारत का लोकमानस इस लोकमंथन के लिए तैयार हुआ है, यद्यपि ऐसा प्रयास देश के कई बुद्धिजीवी अपने-अपने स्तर पर करते रहे हैं और अपने समय के देश-काल को अपनी देशीय दृष्टि, अपने भारतीय दृष्टिकोण से देखते रहे हैं। यहाँ तक कि भारतेतर देशों में रहने वाले भारतीय विद्वानों ने भारत को भारत की दृष्टि से देखने-समझने और समझाने का प्रयत्न किया है। इधर राजीव मल्होत्रा की पुस्तक 'बीइंग डिफरेंट', जो हिंदी में 'विभिन्नता' के नाम से प्रकाशित हुई है, काफी चर्चा में है और पाश्चात्य सार्वभौमिकता को चुनौती देनेवाली यह पुस्तक हमारे विचार के केंद्र में हो सकती है। भारत में ऐसे लोकमंथन की परंपरा रही है। समुद्र मंथन, शास्त्रार्थ और संवाद तथा कुंभ मेलों में विद्वानों का विचार-विमर्श ऐसे ही मंथन की लंबी परंपरा है। असल में लोकमंथन लोक जागृति का परिणाम है। मध्यकाल में मुसलिम आक्रमणकारियों एवं क्रूर शासकों के विरुद्ध संत कवियों ने एक राष्ट्रव्यापी लोक जागरण उत्पन्न किया। भारत में इसलाम का आक्रमण एक विचित्र चुनौती थी, जिसका सामना भक्ति आंदोलन ने किया। अपनी काव्य-रचना से विदेशी सत्ता के विरुद्ध संघर्ष किया तथा हिंदू धर्म-संस्कृति को बचाकर रखा।

इससे भी भयंकर स्थिति अठारहवीं-उन्नीसवीं शताब्दी में उत्पन्न हुई, जब व्यापारी अंग्रेजों ने देश पर कब्जा करके उसे गुलाम बनाया और अपने औपनिवेशिक साम्राज्य का एक अंग बना लिया। मुसलिम आक्रमणकारियों के पास बौद्धिक संपदा के रूप में केवल 'कुरान' थी, और वे उसे ही ज्ञान की अंतिम कसौटी मानते थे, अत: उन्होंने नालंदा जैसे विश्वविख्यात विश्वविद्यालय को ध्वस्त किया और शक्ति से हिंदुस्तान को धर्मांतरित करने का प्रयत्न किया, परंतु अंग्रेजों में शक्ति और व्यापारिक बुद्धि तो थी ही, अपने धर्म, संस्कृति, ज्ञान, जीवन-शैली आदि में सर्वश्रेष्ठ होने तथा भारत जैसे उपनिवेश को हीनतम समझने और समझाने का तीव्र अहंकार भी था। इस पश्चिमी अहंकार को स्वामी विवेकानंद, महात्मा गांधी, अरविंद आदि ने चुनौती दी। गांधी ने पश्चिमी सभ्यता को 'राक्षसी सभ्यता' कहा था और अंग्रेज बने हिंदुस्तानियों की तीव्र भर्त्सना की थी कि इन्हीं लोगों ने हिंदुस्तान को गुलाम बनाया। स्वामी विवेकानंद ने पश्चिमी देशों में जाकर हिंदू धर्म-संस्कृति की श्रेष्ठता की स्थापना की और उन भारतीयों को धिक्कारा, जो अंग्रेजों के सामने गिड़गिड़ाते हैं कि हम नीच हैं, हम बहुत क्षुद्र हैं, हमारा सबकुछ खराब है और आप ही हमारा उद्धार कर सकते हैं।

स्वामी विवेकानंद का स्पष्ट मत है कि भारत में अपना बल एवं

जाने-माने साहित्यकार। इकतालीस वर्षों से दिल्ली विश्वविद्यालय में अध्यापन। अब तक प्रेमचंद पर बाइस तथा अन्य साहित्यकारों पर बीस पुस्तकें प्रकाशित। एक नवीनतम विषय 'गांधी की पत्रकारिता' पर एक पुस्तक। प्रेमचंद साहित्य के विशेषज्ञ के रूप में ख्यात। विभिन्न संस्थाओं, एकेडमियों द्वारा सात पुरस्कार तथा मॉरीशस से एक पुरस्कार से सम्मानित।

सार है और अब भी हमारे पास जगत् के सभ्यता भंडार में जोड़ने के लिए कुछ है और इसीलिए हम बचे हैं। लाला लाजपतराय ने अपनी पुस्तक 'यंग इंडिया' में यूरोप यात्रा के अनुभव लिखे हैं। वे लिखते हैं कि यूरोप के उच्च शिक्षकों को भारत के बारे में बहुत कम ज्ञान है और उन्हें ईसाई मिशनरियों, अंग्रेज अफसरों एवं लेखकों आदि से जो कुछ ज्ञात होता है, वे उसे ही सत्य मानते हैं। भारत आनेवाले यूरोपियन मानते हैं कि भारत पत्थर और साँपों को पूजता है, यहाँ सभ्य-सुगठित सरकार कभी नहीं रही और अंग्रेजों ने पहली बार स्थायी सरकार दी और अंग्रेजों के जाने पर भारत टुकड़ों में बँट जाएगा और भारतीय जानवरों की तरह हैं और अंग्रेज ही उनका उद्धार कर सकते हैं। भारत कोई राष्ट्र नहीं था, अंग्रेजों ने उसे राष्ट्र बनाया और भारत को गुलाम बनाने के औचित्य के लिए आर्य आक्रमण का सिद्धांत गढ़ा। बाद में भारतीय कम्युनिस्टों ने हिंदुत्व का विरोध करने के लिए इस थीसिस से सहायता ली। लार्ड मैकाले के शिक्षा-दर्शन तथा भारत में अंग्रेजी शिक्षा के प्रचार-प्रसार में भी ईसाई मिशनरियों के समान ही भारत को ईसाई देश में बदलने की भी धारणा थी।

लार्ड मैकाले का मत था कि अंग्रेजी शिक्षा से एक ओर ब्रिटेन का व्यापार बढ़ेगा और दूसरी ओर भारत में एक ऐसा वर्ग पैदा हो जाएगा, जो रक्त और रंग से भले ही भारतीय हो, परंतु रुचि, विचार और दिमाग से वह अंग्रेजी और अंग्रेजों का गुलाम ही बना रहेगा। ईसाई मिशनरियों का उद्देश्य भी इससे भिन्न नहीं था। उस समय अंग्रेजी शिक्षा और ईसाइयत एक-दूसरे के पर्याय बन गए थे। मैकाले ने अपनी माँ को लिखा था कि अंग्रेजी शिक्षा के प्रारंभ के तीस साल के अंदर बंगाल में एक भी मूर्तिपूजक नहीं रहेगा। अंग्रेजों ने व्यापार करते हुए एक बार भारत को जीता था, अब वह शिक्षा और धर्म के हथियार से भारत को संपूर्ण रूप से जीतना चाहते थे। खेदजनक यह है कि इसमें अंग्रेजी पढ़े-लिखे कुछ भारतीय अंग्रेजों की मदद कर रहे थे। मैक्समूलर ने उस सच्चाई को उद्घाटित करते हुए २३ नवंबर, १८९८ को सर हेनरी ऑकलैंड को लिखा था—''यदि हमें

राजा राममोहन राय अथवा केशवचंद्र सेन जैसे व्यक्ति पुन: भारत में मिल जाएँ और एक ईसाई धर्म का ज्ञाता अर्क विशप मिल जाए तो भारत ईसाई बन जाएगा।''

उन्नीसवीं शताब्दी में और १८५७ की क्रांति के बाद औपनिवेशिक दासता पूर्णत: स्थापित हो चुकी थी और पुनर्जागरण की लहरें भी उठने लगी थीं। संस्कृत ग्रंथों का अनुवाद करके भारत को जानने और समझने और उसकी यूरोपीय दृष्टि से व्याख्या करने की प्रवृत्ति भी बन चुकी थी और इधर भारत की आत्मा को आहत एवं छिन्न-भिन्न करने के प्रयास चल रहे थे। भारत के मानस को पराजित करने और अपनी श्रेष्ठता को स्थापित करने तथा भारत को 'इंडिया' में बदलने के दौर में देश के कुछ अंग्रेजी शिक्षित युवकों ने औपनिवेशिक दासता को चुनौती के रूप में ग्रहण किया और देश में एक सांस्कृतिक जागरण का युग शुरू हुआ। इससे भारत के कुछ शिक्षित लोग, धर्माचार्य, राजनेता और साहित्यकार प्रेरित होकर भारत की खोज एवं स्वत्व की पहचान की ओर प्रवृत्त हुए। इसमें साहित्य ने अपनी आवाज बुलंद की और लगभग सभी भाषाओं में भारतीय चेतना एवं अस्मिता को पारिभाषित करके जनता के सम्मुख रखा जाने लगा। हिंदी में इसका आरंभ भारतेंदु हरिश्चंद्र से होता है, जिसमें उन्होंने अपने स्वत्व, स्वभाषा और स्वसंस्कृति से ओतप्रोत रचनाएँ प्रस्तुत कीं। उस युग में हिंदी, हिंदू और हिंदुस्तानी को अपने साहित्य का आधार बनानेवाले अनेक लेखक दिखाई देते हैं। इनमें मैथिलीशरण गुप्त का योगदान सर्वोपरि है। उनकी चिंता यह थी कि भारतीय क्या थे, क्या हैं तथा भविष्य में क्या होंगे? उन्होंने अपने भारतीय चिंतन एवं श्रेष्ठ होने के भाव को पौराणिक कथानकों के साथ प्रस्तुत किया और हिंदू धर्म-संस्कृति की उच्चता की स्थापना की। यह एक प्रकार से साहित्य में हिंदू धर्म-संस्कृति तथा परंपरागत जीवन-मूल्यों के पुनरुत्थान का युग था, जो औपनिवेशिक दासता के दमनकारी परिवेश में पुन: जीवंत होने का प्रयास कर रहा था।

उस युग की अधिकांश पत्रिकाओं का उद्देश्य दासता के विरुद्ध स्वाधीन, बौद्धिक तथा जीवंत भारत की सृष्टि करना था। दासता के विरुद्ध स्वराज की कल्पना की गई और बंग-भंग, खुदीराम बोस की फाँसी आदि घटनाओं के परिदृश्य के बीच हिंदी-उर्दू के महान् कथाकार प्रेमचंद ने औपनिवेशिक दासता के विरुद्ध भारत की सांस्कृतिक एवं मानवीय मूल्यों की श्रेष्ठता को स्थापित किया। प्रेमचंद ने अपने सन् १९१२ के लेख 'हिंदू सभ्यता और लोक-हित' में स्थापित किया कि ईसाई धर्म के जन्म से हजारों वर्ष पहले हिंदुस्तान ने शिक्षा, उपचार, पशु-प्रेम, उदारता आदि में उच्चता प्राप्त कर ली थी। उनका कथन है कि भौतिकता पश्चिमी सभ्यता की आत्मा है और व्यापार, स्वार्थ, लाभ आदि उसके अंग हैं और हिंदू सभ्यता नैतिकता, आध्यात्मिकता, दानशीलता, आत्मोत्सर्ग एवं चारित्रिक साहस पर टिकी है। योरोपियन कौमें जिन दूसरी कौम को नीची दृष्टि से देखती हैं, उनकी प्राचीन महत्ता को स्वीकार नहीं करतीं। प्रेमचंद ने अपने कई लेखों में हिंदू तथा ईसाई संस्कृति तथा पूर्व एवं पश्चिम का तुलनात्मक विवेचन किया है और हिंदू संस्कृति की श्रेष्ठता को ही स्थापित किया है और भारत पर औपनिवेशिक दासता के पड़नेवाले प्रभावों को अपने लेखों तथा कहानियों एवं उपन्यासों में रेखांकित किया है। एक साहित्यकार के रूप में वे भारत की मानसिक दासता से पीड़ित हैं और मानसिक दासता लेख में इसकी विस्तार से चर्चा करते हैं। प्रेमचंद का यह लेख भारतीयों की मानसिक दासता तथा अंग्रेजों से स्वयं को हीन समझने की प्रवृत्ति एवं हर क्षेत्र में नकल करने की आदत से जातीय संस्कृति के लुप्त हो जाने की संभावना की ओर ध्यान आकर्षित करता है। वे लिखते हैं कि पश्चिमवालों को शक्तिशाली देखकर हम मान लेते हैं कि हममें सिर से पाँव तक दोष ही दोष हैं और उनमें सिर से पाँव तक गुण ही गुण। प्रेमचंद इस लेख में भाषा, वेशभूषा, आचार-व्यवहार, जीवन-मूल्य आदि में मानसिक दासता का विवेचन करते हैं और रोषपूर्ण शब्दों में लिखते हैं कि हम भाषा, वेशभूषा आदि में अपनी दासता के कलंक को दिखाते फिरते हैं, उसकी नुमाइश करते हैं, उस पर अभिमान करते हैं, मानो वह नेकनामी का तमगा हो या हमारी कीर्ति की ध्वजा। वाह री दासता! तेरी बलिहारी है। हम मानसिक पराजय के कारण पश्चिमी चीजों की आँख बंद करके नकल करते हैं, लेकिन यह भी ठीक है कि हमारी सभ्यता में भी रोग हैं, मगर उसकी दवा यूरोपीय सभ्यता की अंध-भक्ति नहीं है। उसकी दवा हमें अपनी संस्कृति में ही खोजनी होगी। हमें यह समझना होगा कि यह राजनीतिक परिस्थिति नहीं रहेगी, परंतु इस परिस्थिति में यदि हमने अपना अस्तित्व, धर्म और संस्कृति खो दी तो हमारा अंत हो जाएगा।

**प्रेमचंद ने अपनी कहानियों तथा उपन्यासों में अनेक ऐसे हिंदुस्तानी पात्रों की सृष्टि की है, जो काले अंग्रेज बनकर अपनी संस्कृति के शत्रु और अंग्रेजी सभ्यता के अनुयायी बन गए हैं, परंतु वे उसका दुखद परिणाम दिखाते हुए उनका मानसिक कायाकल्प करते हैं। इसके लिए वे मुख्यत: अंग्रेजी शिक्षा को दोषी ठहराते हैं। वे अपने एक उपन्यास में अंग्रेजी विश्वविद्यालयों को ग्रैजुएट उत्पादित करनेवाले कारखाने बताते हैं और ऐसे शिक्षितों की मानसिक दासता का चित्रण करते हैं।**

प्रेमचंद ने अपनी कहानियों तथा उपन्यासों में अनेक ऐसे हिंदुस्तानी पात्रों की सृष्टि की है, जो काले अंग्रेज बनकर अपनी संस्कृति के शत्रु और अंग्रेजी सभ्यता के अनुयायी बन गए हैं, परंतु वे उसका दुखद परिणाम दिखाते हुए उनका मानसिक कायाकल्प करते हैं। इसके लिए वे मुख्यत: अंग्रेजी शिक्षा को दोषी ठहराते हैं। वे अपने एक उपन्यास में अंग्रेजी विश्वविद्यालयों को ग्रैजुएट उत्पादित करनेवाले कारखाने बताते हैं और ऐसे शिक्षितों की मानसिक दासता का चित्रण करते हैं। मैं यहाँ विस्तार भय से बचने के लिए उनकी केवल तीन-चार कहानियों की चर्चा करूँगा। उनकी हिंदी में प्रकाशित पहली कहानी है 'परीक्षा', जो सन् १९१४ में प्रकाशित हुई थी। कहानी में देवगढ़ रियासत के लिए एक दीवान चुनने का प्रसंग है। दीवान के लिए अनेक ग्रैजुएट युवक उम्मीदवार हैं, परंतु अधिकांश में विपत्ति में पड़े किसान की मदद करने और उसकी व्यथा समझने का भाव नहीं है। ये सभी मानवीय गुणों से शून्य हैं, अत: एक ऐसे युवक का चयन होता है, जो पैर में चोट लगने पर भी कीचड़ में घुसकर किसान की फँसी गाड़ी को निकालता है। इस प्रकार प्रेमचंद अंग्रेजी पढ़े-

लिखे युवकों की परीक्षा लेते हैं, जो मानवीयता की परीक्षा में असफल होते हैं। 'लाल फीता' (१९२१) उनकी ऐसी दूसरी कहानी है, जिसमें एक हिंदुस्तानी मजिस्ट्रेट यह मानता है कि अंग्रेजी राज्य सत्य और न्याय पर टिका है, उनके शासन में शिक्षा एवं व्यापार की उन्नति हुई है और अंग्रेज दीनों तथा असहायों के रक्षक हैं, परंतु वे सरकारी हुक्म के अनुसार जाति के सेवकों तथा हितैषियों से शत्रुवत् व्यवहार को तैयार नहीं होते और विजातीय शासक के देशद्रोही आदेश के विरुद्ध सरकारी नौकरी से इस्तीफा दे देते हैं। इसके लिए वे अंग्रेजी शिक्षा को दोषी ठहराते हैं जो मनुष्य को विलास प्रेमी बनाती है। तीसरी कहानी 'बड़े बाबू' है, जिसमें एक ग्रैजुएट सरकारी नौकरी पाने के लिए मुखबिरी तथा वेश्याओं की दलाली तक करने को तैयार है। एक और कहानी है 'रोशनी', इसका नायक इंग्लैंड से आई.सी.एस. (आई.ए.एस.) बनकर आता है तो उसकी नियुक्ति पहाड़ी प्रदेश में होती है। यह हिंदुस्तानी अफसर मानता है कि पश्चिम शिक्षा में पथ प्रदर्शक है और नन्हा सा इंग्लैंड आधी दुनिया पर हावी है, जबकि हिंदुस्तान में अधनंगे फकीरों की महत्ता है और पेड़ एवं पत्थर की पूजा होती है तथा जिंदगी के प्रत्येक विभाग में धर्म घुसा हुआ है, लेकिन जब यह अफसर तूफान में घिर जाता है तो एक ग्रामीण स्त्री उसका मार्गदर्शन करती है और इस प्रकार उसकी अंग्रेजियत भारत के प्रति सेवाभाव में बदल जाती है।

प्रेमचंद ने लिखा है कि हिंदुस्तानी साहबों की एक बिरादरी हो गई है उनका रहन-सहन, चाल-ढाल, पहनावा, बर्ताव सब अंग्रेजों जैसा है। देश में यह नई उपज है, जो अंग्रेजी साहब करता है, वही हमारा हिंदुस्तानी साहब करता है। अंग्रेजियत ने उसे हिप्नोटाइज कर दिया है। गाँव की एक औरत उसके इस भ्रम को तोड़ती है और उसे जिंदगी की सच्ची रोशनी देती है। उनकी पाँचवीं कहानी है 'यही मेरी मातृभूमि है', जो बंग-भंग के बाद सन् १९०८ में छपी थी। यह कहानी भारतीय समाज पर औपनिवेशिक दासता के प्रभाव को प्रस्तुत करती है और देश-विरोधी प्रवृत्तियों में ठेठ देशज समाधान को चुनती है। कहानी में एक भारतीय अमेरिका में सुख-समृद्धि का जीवन जीने के साठ वर्ष बाद भारत लौटता है कि अंतिम समय में अपनी प्यारी भारत जननी के दर्शन कर सकूँ और अपनी मातृभूमि का रज-कण बन सकूँ। वह अमेरिका में बराबर महसूस करता है कि यह मेरा देश नहीं है और मैं इस देश का नहीं हूँ। वह बंबई (मुंबई) जहाज से उतरता है तो उसे कोट-पतलून पहने टूटी-फूटी अंग्रेजी बोलते मल्लाह मिलते हैं और अंग्रेजी दुकान, ट्राम और मोटरगाड़ियाँ दिखाई देती हैं। वह रेल में बैठकर अपने गाँव जाता है तो खूब रोता है, क्योंकि यह वह देश नहीं है, जिसके दर्शनों की इच्छा से वह आया है। वह कहता है कि यह अमरीका या इंग्लैंड है, मगर प्यारा भारत नहीं है। वह जब गाँव पहुँचता है, तब वहाँ भी सबकुछ बदल गया है। उसका घर टूट गया है, लँगोटिया यार मर गए हैं, बरगद के पास पुलिस थाना है, चौपाल में डाकखाना है, धर्मशाला दुराचार का अड्डा है तथा परदेसी यात्री को रात में ठहराने को कोई तैयार नहीं है। वह मानता है कि यह यूरोप है, अमरीका है, मगर मेरा प्यारा भारत नहीं है। वह अब स्वयं को देशविहीन मानता है कि तभी भोर में कुछ स्त्रियों को गंगा-स्नान करने जाते देखता है, जो 'हमारे प्रभु, अवगुन चित न धरो' गाती जा रही हैं। वह इसमें देश का राग और मातृभूमि का स्वर पाता है। वह देखता है कि कुछ लोग शिव-शिव, हर-हर, गंगे-गंगे, नारायण-नारायण आदि बोलते जा रहे हैं। वह उनके पीछे पतित-पावनी गंगा के किनारे पहुँचता है और कोट-पतलून उतारकर फेंकता है तथा गंगा की गोद में कूद पड़ता है और कह उठता है, ''हाँ, हाँ, यही मेरा प्यारा देश है, यही मेरी मातृभूमि है, यही मेरा सर्वश्रेष्ठ भारत है और इसी के दर्शनों की मेरी उत्कट इच्छा थी तथा इसी की पवित्र धूलि के कण बनने की मेरी प्रबल अभिलाषा है।'' वह गंगा के किनारे छोटी सी झोंपड़ी बनवाकर रहता है, नित्य गंगा स्नान करता है और रामनाम जपता है और चाहता है कि मरने पर उसकी अस्थियाँ गंगा माता की लहरों की भेंट हों।

इस प्रकार प्रेमचंद औपनिवेशिक दासता में भारतीय जीवन में विजातीय ढाँचे का उद्घाटन करते हैं, जो हमारे देसी संस्कारों, विश्वासों तथा जीवन-शैली को विस्थापित करके विदेशी संस्कृति को स्थापित कर रहा है। पश्चिमी शिक्षा का फैलता तंत्र हमारे तन-मन और आस्थाओं को तेजी से बदलता है और सीधे ही भारतीय संस्कृति के मूल्यों एवं प्रतिमानों से टक्कर होती है। प्रेमचंद इन संस्कृतियों के संघर्ष में भारतीय मूल्यों की रक्षा करते हैं और स्पष्ट कहते हैं कि मैं अपने साहित्य में भारतीय आत्मा की रक्षा करना चाहता हूँ। औपनिवेशिक दासता के उस क्रूर काल में प्रेमचंद की कथाएँ स्वाधीनता संग्राम को बल प्रदान करती हैं और स्वराज की स्थापना में स्व-संस्कृति, स्व-चिंतन तथा स्व-भाषा का महत् स्वप्न बना रहता है, यद्यपि यह दुर्भाग्य ही था कि स्वतंत्र भारत की सत्ता देसी अंग्रेजों के हाथ में आ गई और भारतीय आत्मा की रक्षा का स्वप्न गायब हो गया।

और अंत में, हम स्वतंत्र भारत में फिर भारत की खोज और भारतीय आत्मा की पहचान की ओर लौट रहे हैं, यह सोचकर कि भारतभूमि पर देसी पौधा ही फल-फूल सकता है। हमें 'इंडिया' को 'भारत' का रूप देना ही होगा, क्योंकि भारतीय लोकमानस अपने भारतीय स्वत्व एवं राष्ट्र-बोध के साथ ही विकासमान हो सकता है। आज भारतीय समाज पर पश्चिमी संस्कृति तथा भूमंडलीकरण का दवाब पहले से बढ़ गया है और देसी अस्मिता एवं संस्कृति के अस्तित्व पर संकट आ गया है। इस राष्ट्रीय संकट के समय लोक-मंथन से ही हमें अमृत और विष का पता चलेगा। हमारी औपनिवेशिक दासता खत्म हो गई है, परंतु एक नई सांस्कृतिक दासता का धुआँ हमें घेरता जा रहा है। हमें इसका हल ढूँढ़ना ही होगा और मुझे आशा है कि यह लोकमंथन एक नई राष्ट्रीय-सांस्कृतिक जागृति के युग को प्रशस्त करेगा। हमारी यात्रा शुरू हो चुकी है, वर्तमान सरकार ने आत्मचेतना एवं आत्मनिर्भरता का द्वार खोल दिया है, बस हमें वेद के अनुसार साथ-साथ चलकर, साथ-साथ सोचकर इस भारतीय लक्ष्य को पूरा करना है। यह लोकमंथन इसी का संकल्प लेकर पूरा होना चाहिए।

ए/९८, अशोक विहार, फेज प्रथम,
दिल्ली-११००५२
दूरभाष : ९८११०५२४६९

कहानी

# नागफनी का जंगल

● महेश चंद्र द्विवेदी

सुपरिचित साहित्यकार। व्यंग्य, कविता, कहानी, उपन्यास की सोलह पुस्तकें तथा हिंदी-अंग्रेजी पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। मंचीय पाठ के अलावा दूरदर्शन से रचनाओं का प्रसारण। पुलिस अधिकारी के रूप में कई मेडल तथा दो दर्जन से अधिक विभिन्न सम्मान-पुरस्कार प्राप्त।

पता नहीं उसके अब्बू ने क्या सोचकर उसका नाम 'गजाला' अर्थात् मृगनयनी रखा था कि उसका भाग्य भी मृगी जैसा निकला—प्रतिपल आतंकित, भयभीत और चौकन्ना रहकर जीने की विवशता। इटावा स्टेशन पर कालका मेल के जनरल कोच के खुले दरवाजे के किनारे फर्श पर गजाला दुबकी हुई बैठी थी, भीतर घुसने को स्थान एवं साहस दोनों का अभाव था। कोच भरा हुआ था, परंतु एक-दो यात्री फिर भी घुसे चले आ रहे थे। कोच में घुसनेवाले प्रत्येक यात्री को वह सशंकित दृष्टि से देखती और ऐसे सिमट जाती थी, जैसे बाघ के सामने आ जाने पर मृगी। असलम भी उसके साथ था, परंतु वह स्वयं भी इतना घबराया हुआ था कि गजाला को उसकी उपस्थिति लेशमात्र भी साहस नहीं दे रही थी। गजाला को बियाबान में वन्य पशुओं के बीच अकेले पड़ जाने जैसी अनुभूति हो रही थी। गाड़ी जब सीटी बजाकर चल दी और गति पकड़ने के साथ उसके कंपनों में वृद्धि होने लगी, तब उन कंपनों के विलोम-अनुपात में उसके हृदय के कंपन कम होने लगे। उसके गाँव से रेलगाड़ी की दूरी बढ़ने के साथ ही उसके पकड़े जाने का भय कम होने लगा और मन कुछ-कुछ आश्वस्त होने लगा। तब गजाला अधखुले गेट से बाहर देखने लगी। निकटस्थ खेत और वृक्ष द्रुतगति से पीछे भाग रहे थे। सुदूर क्षितिज में आकाश भी धरती को अपने में समेटकर पीछे किसी अनिश्चित मंजिल की ओर भाग रहा था। गजाला को लगा कि असलम भी तो उसे लेकर किसी अनिश्चित भविष्य की ओर दूर भागा जा रहा है। यहाँ गाँववालों द्वारा पकड़े जाने के भय एवं आगे अनिश्चित भविष्य की आशंका उसके मन को एक गहरे भँवर में फँसा रहे थे। ऐसे में गजाला की स्मृतियाँ भी उसे उसके भूत में ऐसे ले जाने लगीं, जैसे भँवर मे फँसे प्राणी को चक्रवत घूमती हुई जलधारा गहराई में ले जाती है। गजाला अपनी स्मृति के अवचेतन में शनैः-शनैः खोने लगी।

गरमी का मौसम है। सूरज धीरे-धीरे पाताललोक में छिपने जा रहा है, परंतु शाम का धुँधलका धरती पर छाने में अभी कुछ देर है। मैं, असलम और याकूब मदरसे से वापस आकर अपने घरों के सामने लुकाछिपी खेल रहे हैं। असलम मेरा चचेरा भाई है और उसका घर मेरे घर से सटा हुआ है। याकूब का घर दो घर छोड़कर है। असलम मेरा अच्छा दोस्त है, पर उसे जल्दी गुस्सा आ जाता है और वह अकसर गुस्से में मेरी चोटी जोर से खींच देता है। वह आठ साल का है—मुझसे तीन साल बड़ा और तगड़ा भी। अन्य प्रकार से बदला लेने में अपने को असमर्थ पाकर मैं कभी-कभी उसकी बाँह में दाँतों से काट लेती हूँ और तब वह बेरहमी से मुझे घूँसा-थप्पड़ मारकर भाग जाता है। चोट खाकर मैं जोर-जोर से रोने लगती हूँ। तब माँ आकर मुझे चुप कराती है। कभी-कभी माँ अन्यत्र व्यस्त होने पर चुपाने देर तक नहीं आ पाती है, तब असलम कुछ देर उनकी प्रतीक्षा करने के पश्चात् खुद ही आकर मुझसे अपने साथ में खेलने को ऐसे कहता है, जैसे कि वह उसे माफ कर पुनः दोस्त बन जाने की चिरौरी कर रहा हो। मैं तब उसकी गुस्ताखियाँ भूल जाती हूँ और थोड़ी-बहुत मान-मनौवल के बाद उसके साथ खेलने चली जाती हूँ।

याकूब मौलाना साहब का बेटा है, जो मसजिद में नमाज पढ़ाते हैं। उनसे लोग हर मजहबी मसलों में राय लेते हैं और बड़े अदब से पेश आते हैं। लोगबाग उनका अदब उनके इल्म की बजाय उनके डर की वजह से ज्यादा करते हैं, क्योंकि वे बड़े काँइयाँ हैं और अपनी मजहबी राय को मसलात को सुलझाने की बजाय घरों में फूट डालने में ज्यादा इस्तेमाल करते हैं। याकूब असलम से एक साल बड़ा है और चौथे दर्जे में पढ़ता है। वह मुझे अच्छा नहीं लगता है, क्योंकि अकसर बिना बात मेरी पीठ, गाल या जाँघ में चिकोटी काट देता है। मैं उससे अलग रहने की कोशिश करती हूँ, लेकिन वह जान-बूझकर हमारे बीच आ जाता है। आज भी मेरे और असलम के घर से बाहर निकलते ही याकूब आ गया है और हमारे साथ गेंद खेलने लगा है। कुछ देर में असलम को उसकी माँ ने किसी काम से बुला लिया। याकूब ने गेंद फेंकी और जब मैं उसे पकड़ने दौड़ी, तो याकूब भी पीछे दौड़ा और मेरी टाँग में अपनी टाँग डाल दी, जिससे मैं गिर पड़ी। मुझे हल्की चोट लगी और मैं सँभलकर उठने का प्रयत्न कर ही रही थी कि याकूब ने मेरे ऊपर आकर मुझे राहत देने के बहाने पीछे से जकड़ लिया और मेरे बदन को सहलाने लगा। यद्यपि याकूब आहिस्ते-आहिस्ते मेरी चोटों को सहला रहा था, परंतु मेरे अंतर्मन में भय समा रहा था। मैं उसकी पकड़ से छूटने को छटपटा रही थी कि तभी असलम को आते देखकर उसने मुझे छोड़ दिया और खिसियाना सा असलम से कहने लगा, 'देखो, गजाला गिर गई है और इसे चोट लग गई है।'

असलम मेरे ऊपर एक सरसरी निगाह डालता है। कोई दिखाई पड़नेवाली चोट न पाकर खास तवज्जो नहीं देता है और गेंद की ओर लपक जाता है। असलम की यह बेरुखी मेरे मन में चुभती है, पर मैं खेल में फौरन ही इसे भूल जाती हूँ।

मेरा गाँव कुदरकोट एक खेड़े पर बसा हुआ है, खेड़ा अर्थात् ढहे हुए किले और महल से बना बहुत बड़ा पहाड़नुमा टीला। इस गाँव के मकान प्राय: पक्के हैं, क्योंकि उनकी दीवारों में खेड़े में दबी हुई ईंट लगी है। यह गाँव राहगीरों को दूर से नजर आ जाता है और देखने में अपने असली आकार से बड़ा व भव्य गाँव लगता है। आजकल इसके ज्यादातर हिस्से पर हिंदू बसे हुए हैं और यहाँ ज्यादातर खेत और दुकानें इन्हीं की हैं। गाँव की एक चौथाई मुसलिम आबादी करीब दस-बारह फीसदी जगह में सिमटी हुई है। उनके छोटे-छोटे दड़बे जैसे घरों मे गंदे परनाले बहते रहते हैं, मक्खियाँ भिनकती रहती हैं और छोटे-छोटे कमरे व बरामदे बच्चों और बड़ों से भरे रहते हैं। छोटे से आँगन में मुरगियाँ कुड़कती और बकरियाँ उछलती रहती हैं। हरेक शख्स के दिन और रात के ज्यादातर काम किसी-न-किसी की निगाह में रहते हैं। जरूरत होने पर दूसरा आँख की शर्म भर को अपना मुँह ढक लेता है या दूसरी ओर फेर लेता है। मेरे घर में बड़ी कलंगीवाला मुरगा तो शर्म और मौके का खयाल किए बिना ही किसी-न-किसी मुरगी पर सवार हो जाता है। किसी का उस पर ध्यान जाए या न जाए, पर मेरा छोटा भाई छुटकू उसके कुड़कुड़ाने के साथ ही कुड़-कुड़ करने लगता है, जिससे बरबस दूसरों का ध्यान उधर खिंच जाता है।

मौलवी साहब को इस गाँव के खेड़े का इतिहास बताने का बड़ा शौक है। उस समय उनके चेहरे पर खास रौनक आ जाती है, जब वे बताते हैं, 'यह खेड़ा एक मुसलिम राजा के किले के खँडहर हो जाने से बना है। यहाँ एक मुसलिम राजा का राज था। वह पाँचों वक्त का नमाजी और बड़ा सख्त मिजाज था। गुनाह और नाफरमानी करनेवालों को हाथीखाने में फिंकवाकर हाथी के पैरों तले कुचलवा देता था। उस हाथीखाने वाली जगह पर आज भी हड्डियों का चूरा मिलता है। मजहबी मुआमलों में मेरे 'लकड़दादा' उसके खास सलाहकार थे। आज वक्त की मार से किला और उसके अंदर बना महल ढहकर एक खेड़ा बन गया है।'

मैं बचपन से ही मौलवी साहब की बब्बरशेरनुमा दाढ़ी देखकर डर जाती और आठ साल की उम्र में याकूब द्वारा मुझसे की गई एक गंदी हरकत से उससे भी डरने लगी हूँ। उस दिन असलम अपने मामूजान के यहाँ गया हुआ था। मैं अकेलापन महसूस कर रही थी। इसलिए घर से बाहर आकर मन बहलाना चाहती थी कि याकूब ने अपने दरवाजे से मुझे पुकारते हुए कहा, 'गजाला, तुम्हें अम्मी बुला रही हैं।'

मैं बिना किसी शको-शुबहा के उसके घर चली गई। दरवाजे के अंदर जाकर आँगन में मुझे चाची दिखाई नहीं दीं। चाची-चाची कहते हुए मैं कोठरी में घुस गई। चाची को वहाँ भी न पाकर मैं याकूब से कहने लगी, 'चाची कहाँ हैं?'

लेकिन मेरी बात पूरी होने के पहले ही याकूब ने पीछे से आकर मुझे अपनी बाँहों में जकड़ लिया। वह मेरे वक्ष पकड़कर मुझे खाट पर गिराने लगा। मैं घबराकर शोर मचाने लगी, तो उसने मेरा मुँह बंद करने के लिए अपनी दाहिनी हथेली मेरे मुँह पर रख दी और मेरा मुँह भींचने लगा। तब मैंने उसके हाथ की बीच की उँगली दाँतों में लेकर इतनी जोर से काटी कि वह हाय-हाय करने लगा। उसकी पकड़ ढीली होते ही मैं दौड़कर घर से बाहर आ गई और अपने घर जाकर खाट पर चुपचाप मुँह ढककर लेट गई। मेरी हालत वैसी हो रही थी, जैसी हिरनी की शेर के पंजे से बच निकलने पर होती है। पहले मेरे मन में आया कि अम्मी को सब बता दूँ, पर तभी कुछ दिन पहले अम्मी की अब्बा द्वारा की गई पिटाई याद आ गई। मेरे खालू, जो दुबई में किसी शेख के यहाँ बावरची का काम करते हैं, हमारे घर आकर दो दिन रुके थे। वहाँ से मेरे लिए चॉकलेट, अम्मी के लिए सलवार-सूट और अब्बा के लिए घड़ी लाए थे। उनके जाने पर रात को अम्मी ने डरते-डरते अब्बा से शिकायत की थी कि खालू ने अकेले में उनके साथ गलत हरकत करने की कोशिश की थी। मैं ऐसी जगह खड़ी थी कि अम्मी-अब्बा को यह पता नहीं था कि मुझे उनकी बात सुनाई दे रही हैं और यह सुनकर मैं एक कोने में और दुबक गई थी। अब्बा कुछ तो खालू द्वारा लाए गए तोहफों के एहसान में दबे हुए थे और कुछ इस नाकामी के एहसास से कि बात फैल जाने से बदनामी उन्हीं की होगी, इसलिए उन्होंने आव देखा न ताव और अम्मी को झन्नाटेदार झापड़ रसीद करते हुए चिल्लाए थे, 'बदजात, अब यह सब बककर क्या जमाने में मेरी थू-थू कराएगी?'

अम्मी अपने मन और बदन दोनों पर आई गहरी चोट को छुपाने की कोशिश करती हुई सिसक-सिसककर रोती रही थीं। मैं समझ गई थी कि औरत अपनी देह और मन दोनों की पीर खुद पी जाने और अपने आँसुओं के साथ बहा देने को ही बनी है। मैं भी देर तक सिसकती रही थी।

आगे मैं अकेले बाहर निकलने और याकूब का हाथ पड़ने से बचने लगी थी। मेरी पढ़ाई तो पहले ही बंद करवा दी गई थी। मेरे सात साल की होते-होते मैं अपने घरवालों से ज्यादा बाहरवालों को बड़ी लगने लगी थी। चौके में खाना पकाते, मुरगियों व बकरियों को दाना-पानी देते-देते और असलम से लड़ते-झगड़ते जिंदगी कटने लगी थी। इस तरह मैं चौदह साल की हो गई थी और अम्मी-अब्बू आपस में मेरी शादी की बातें करने लगे थे। इसी बीच एक जाड़े की दोपहर जब अम्मी खाना खाकर धूप सेंक रही थीं, तब असलम की अम्मी आईं और मेरी अम्मी के पास बैठ गईं। कुछ इधर-उधर की बातें करने के बाद मेरी अम्मी से मुसकराकर बोलीं, 'रोशन, आज मैं असलम के लिए गजाला का हाथ माँगने आई हूँ।'

फिर अधिकार जताते हुए आगे कहा, 'और इनकार नही सुनूँगी।'

मेरी अम्मी का मन खुशी से खिल गया था और वे मुसकराते हुए बोली थीं 'बाजी, आप ने तो मुझसे मेरे मुँह की बात छीन ली है। इसमें इनकार की गुंजाइश ही कहाँ है। असलम और गजाला भी तो एक-दूसरे को बहुत पसंद करते हैं।'

पता नहीं मेरी खुशकिस्मती थी या खुदाई फितरत कि इसके बाद दूसरे दिन याकूब की अम्मी मेरे लिए याकूब का पैगाम लेकर आईं। उनकी बात सुनकर मुझे लगा, जैसे कोई मेरे कानों मे पिघला सीसा उँड़ेल रहा हो। मेरी अम्मी भी मेरा रिश्ता असलम से पहले ही तय हो जाने पर मन में तसल्ली का एहसास करते हुए उनसे बोलीं, 'बड़ी बी, मौलाना साहब के यहाँ से पैगाम आना मेरी खुशकिस्मती है, पर गजाला का रिश्ता तो असलम से कल ही तय हो चुका है।'

मेरी अम्मी को तसल्ली इसलिए हुई, क्योंकि वह याकूब की रंगीन रातों के बारे में अकसर कुछ-न-कुछ सुनती रहती थीं और उसे पसंद नहीं करती थीं। अगर याकूब की अम्मी पहले आ गई होतीं तो मौलाना साहब के रिश्ते की मनाही करने की हिम्मत करना कठिन था। याकूब की अम्मी को याकूब ने बहुत जोर देकर भिजवाया था और वह खुद भी मुतमईन थीं कि उनके बेटे के रिश्ते को कोई गाँववाला मना कर ही नहीं सकता है। इसलिए बोलीं, 'पर अभी बात सिर्फ आप दो लोगों के बीच की है और कोई रस्म तो हुई नहीं है। उसे मना कर दो। मेरा याकूब असलम से हर तरह बीस है।'

पर मेरी अम्मी ने सूखा सा मुँह बनाकर जवाब दिया, 'बड़ी बी, आप बजा फरमाती हैं, पर असलम और गजाला एक-दूसरे को चाहते हैं और गजाला को असलम से रिश्ता पक्का हो जाने की बात मालूम हो चुकी है। अब उनके बीच में पड़ना अच्छा नहीं होगा।'

रोशन के अल्फाज से ज्यादा उनमें झलकती तलखी बड़ी बी को चुभी थी और वह 'अच्छा, जैसी तुम्हारी मरजी' कहकर बिना दुआ-सलाम के उठकर चल दी थीं।

जल्दी ही मेरा और असलम का निकाह हो गया था। हालाँकि गाँव के मौलवी होने की वजह से याकूब के अब्बा ने ही निकाह पढ़वाया था लेकिन याकूब और बड़ी बी उसमें शामिल नहीं हुए थे। मेरे अब्बू ने अपनी हैसियत भर शादी ठीक ही कर दी थी। मकान के सामने दरियों पर जाजिम बिछवा दिए थे। शहनाई बजानेवालों को बुलवा लिया था और बरातियों को खाने में दाल रोटी के अलावा मुर्ग-बिरियानी भी परोसी गई थी। मुझसे जब मौलाना ने पूछा था कि निकाह कुबूल है, तो उन्हें अपनी ऐसी हत्तक महसूस हुई थी कि 'कुबूल है' के दो अल्फाज उनके हलक से निकलते-निकलते अटक से गए थे और मेरे हलक से खुशी और शर्म के मारे ये दो अल्फाज मुश्किल से निकल पाए थे।

मुझे असलम से निकाह होने की एक और खुशी थी कि मुझे नए अम्मी-अब्बू जरूर मिल गए थे, पर अपने अम्मी-अब्बू से दूर नहीं जाना पड़ रहा था। हालाँकि असलम की एकदम भड़क पड़ने और आपा खो देने की आदत में कोई कमी नहीं आई थी, पर दिमाग ठंडा होने पर उसकी अनबोली मनुहार में पता नहीं क्या मिठास थी कि उसकी वह बौखलाहट भी मुझे प्यारी लगती थी। मुझे नए अब्बू-अम्मी की हर जरूरत और आदत से पहले से इतनी वाक्फियत थी कि उन्हें खुश रखने में कोई कठिनाई नहीं हो रही थी। अब्बू-अम्मी पहले ही अपनी भतीजी को बहुत प्यार करते थे, अब बहू बन जाने पर मैं उनकी और लाड़ली हो गई थी।

याकूब को मुझे पाने में अपनी हार से गहरा धक्का लगा था और घायल साँप की भाँति वह बदला लेने के मौके की तलाश में रहने लगा था। उसके अब्बा पहले से दिल के मरीज थे और अपनी इस हेटी से वह भी तनाव में रहने लगे थे। नतीजा यह हुआ कि एक रात वे सोए, तो फिर उठे ही नहीं। उनके जनाजे में गाँव-आनगाँव के तमाम लोग शरीक हुए, इसलिए नहीं कि उन्हें मौलाना से कोई दिली उन्सियत थी, बल्कि इसलिए कि उनका वारिस याकूब उनसे ज्यादा खुराफाती था। अपने घर-परिवार के अमन-चैन के लिए उन्हें नए मौलाना याकूब को खुश रखना जरूरी था।

मेरे और असलम के अब्बा भी जनाजे में शामिल हुए थे, पर इससे याकूब के दिल में सुलगती आग की तपिश में कोई कमी नही आई थी। हालाँकि वह दिखावे में तो मेरे सामने पड़ जाने से बचता था, लेकिन मौका मिलते ही आँख बचाकर मेरे घर के आस-पास चक्कर लगा लेता था और मुझ पर चोर नजर डालने से भी नहीं चूकता था। उसकी इस हरकत को असलम भी भाँप चुका था और मन-ही-मन कुढ़ता रहता था। याकूब पर अपनी कुढ़न न निकाल पाने की मजबूरी की वजह से वह गाहे-बगाहे मुझ पर बिगड़ पड़ता था। मैं कुछ दिन तक तो असलम की मुझ पर बेमतलब की भड़ास बरदाश्त करती रही थी, लेकिन उसकी बौखलाहट कम न होने पर उसे जवाब देने लगी थी। उस शाम जब असलम बाजार से घर आ रहा था, तो उसने देखा कि मैं खेत की तरफ से आ रही थी और मेरे कुछ दूर पीछे याकूब चुपचाप मुझे पीछे से घूरता हुआ चला आ रहा था। असलम का पारा आसमान पर चढ़ गया था और उसने मुझे घर के अंदर घसीटते हुए कड़ककर पूछा था, 'कहाँ गई थी?'

'फारिग होने खेत पर गई थी,' मैंने बेबात के गुस्से पर चिढ़कर तलखी के साथ कहा था, 'फारिग होने या उस हरामी याकूब को फारिग करने?' असलम और भड़ककर बोला था।

ऐसे इल्जाम से मैंने भी अपना आपा खो दिया और रोकते-रोकते मेरे मुँह से निकल गया था, 'क्या अपनी शर्म-हया सब बेच खाए हैं? मुझे भी अपना जैसा ही कमीना समझते हैं?'

कोई भी खाबिंद अपनी बीवी के ऐसे जवाब को कैसे बरदाश्त कर सकता था। असलम आगबबूला होकर बोल पड़ा था—'अच्छा, तो दिखाता हूँ अपना कमीनापन—तलाक, तलाक, तलाक।'

यह सुनते ही मेरे पैरों के नीचे की जमीन खिसक गई थी। मैं फफककर रो पड़ी थी। असलम का गुस्सा मेरे आँसू देखते ही काफूर हो गया था। अपने मुँह से निकले लफ्जों के नतीजे की समझ आने पर वह भी सिसकने लगा था। मेरा गुस्सा भी पिघलकर मेरी आँखों के रास्ते बहा रहा था। गुस्से का तूफान निकल जाने पर असलम दिल की गहराइयों में भरे प्यार को उँड़ेलता हुआ बोला था, 'मेरी गजाला, मुझे माफ कर दो। मैं तुम्हारे बिना नहीं जी सकता।'

मैं असलम के आपे से बाहर हो जाने की आदत और उसके दिल में अपने लिए भरी मोहब्बत को बचपन से जानती थी। उससे देर तक नाराज रह ही नहीं सकती थी। मैं आगे के लिए समझाते हुए बोली, ''माफी तो मैं भी तुमसे माँगती हूँ, लेकिन हमें आगे अपनी जुबान पर काबू रखना चाहिए। वह तो अच्छा हुआ कि किसी ने कुछ देखा-सुना नहीं है, नहीं तो गजब हो जाता।''

असलम आगे बढ़कर मुझे गले लगाने लगा, तब याकूब, जो बाहर

से छुपकर यह नजारा देख रहा था, की गरजती आवाज आई, 'नहीं असलम, यह तो हराम है।'

असलम ने घबराकर पीछे मुड़कर देखा और वह रुँआसा होकर बोला, 'इसमें हराम की क्या बात है?'

असलम की घबराहट देखकर याकूब का हौसला और बढ़ गया और वह मौलाना के हक से कहने लगा, 'शरियत की हिदायत के मुताबिक शौहर के तीन बार तलाक बोल देने पर तलाक मुकम्मल हो जाता है। अब गजाला तुम्हारी बीवी नहीं है और उसके साथ तुम्हारा ताल्लुक जिनाकारी में आएगा।'

'तुम अपना काम देखो, याकूब, मैं और गजाला आपस में निबट लेंगे' असलम ने आजिजी के साथ कहा।

'अच्छा, देखते हैं,' यह कहते हुए याकूब कुटिलता से मुसकराते हुए अपने घर को चला गया। उसके जाते ही असलम फिर मुझसे हाथ जोड़कर माफी माँगने लगा। तब मैं आगे बढ़कर उसके सीने से लगकर खड़ी हो गई थी। दोनों की आँखों से देर तक आँसू ढरते रहे थे।

याकूब ने सवेरा होते ही गाँव के प्रभावशाली लोगों को बुला लिया था। फिर असलम और मुझे और हमारे माँ-बाप को भी बुलवाया था। बुलावा आने पर हम दोनों का दिल जोर-जोर से धड़कने लगा, पर हम दोनों ने निश्चय किया था कि हम हर हाल में साथ ही रहेंगे। याकूब के घर पहुँचने पर याकूब ने सबके समक्ष रात की घटना वर्णित की और कहा था, ''शरियत के मुताबिक अब असलम और गजाला का तलाक हो चुका है और वे साथ-साथ नहीं रह सकते हैं।''

यह सुनकर असलम क्षोभ भरे, परंतु दृढ स्वर में बोल पड़ा था, 'गुस्से में आपा खो जाने पर मेरे मुँह से तलाक, तलाक, तलाक निकल जरूर गया था, पर मेरा कोई इरादा तलाक का नहीं था। हम दोनों को एक-दूसरे से कोई गिला-शिकवा नहीं है और हम दोनों मियाँ-बीवी की तरह रहना चाहते हैं।'

मैंने भी अपनी रजामंदी में सिर हिलाया था, पर तभी याकूब जोर देकर कहने लगा था, 'इसलाम के मुताबिक इस तरह इनका साथ रहना हराम होगा और हम अपने गाँव में खुदा के कानून की तौहीन कभी नहीं होने देंगे। हाँ, अगर गजाला से कोई और शादी कर ले और कम-से-कम तीन महीने साथ रखने के बाद उसे तलाक दे दे, तो गजाला का निकाह फिर से असलम के साथ हो सकता है।'

मैं याकूब की चाल को समझ रही थी। अत: बोली, 'वाह, यह भी कोई बात हुई। हम दोनों मियाँ बीवी हैं और साथ-साथ रहना चाहते हैं। फिर कोई हमें कैसे रोक सकता है? हमें रोका, तो हम पुलिस-कचहरी करेंगे।'

पुलिस-कचहरी की बात से याकूब को गाँव के लोगों को भड़काने का एक मौका और मिल गया। वह लोगों में 'इसलाम खतरे में है' वाला भाव भरते हुए कहने लगा था, 'तो क्या पुलिस का कानून अल्लाह के कानून के ऊपर है। यह तो कुफ्र हुआ। भाइयो, अब आप ही इन्हें समझाओ।'

गाँव के सबसे अधिक जाहिल लोगों ने सबसे पहले कहना शुरू किया कि हम अपने गाँव में कुफ्र नहीं होने देंगे और तब याकूब आगे कहने लगा, 'हम अपने गाँव में जिनाकारी कैसे बरदाश्त कर सकते हैं।'

ऐसे में कोई भी असलम और मेरे पक्ष में बोलने का साहस न कर सका था, हमारे माँ-बाप भी नहीं। मेरी माँ मेरी बाँह पकड़कर मुझे अपने घर ले गई थीं और असलम को उसके अब्बा अपने साथ ले गए थे।

इद्दत के तीन महीने की अवधि में असलम और मैं अपने घरवालों और दोस्तों से हम पर रहम करने और साथ रहने की इजाजत दिलाने की इल्तिजा करते रहे, पर कोई टस-से-मस न हुआ। इद्दत की अवधि खत्म होने पर भी मिलन का कोई रास्ता न था। हम दोनों के घरवाले तो अल्लाह के कहर से डरकर हम पर निगाह रखते ही थे, मौलाना याकूब भी आते-जाते मेरे घर पर एक निगाह जरूर डाल लेता था, इसलिए चोरी-छिपे भी मिलना संभव न था। इसी बीच एक शाम जब मैं अपने दरवाजे के बाहर असलम की एक नजर पाने को खड़ी थी, तभी मैं याकूब द्वारा धीरे से अपना नाम पुकारा जाना सुनकर भयभीत होकर चौंक पड़ी। मेरे मुँह से तो कोई शब्द न निकला, पर मैं प्रश्नवाचक दृष्टि से उसकी ओर देखने लगी।

याकूब हमदर्द बनते हुए बोला था, 'गजाला, यहाँ कोई तुम्हारे साथ शादी को तैयार नहीं होगा। तुम कहो तो मैं तुम्हारे साथ अपनी दूसरी शादी का पैगाम भिजवा दूँ। मैं वादा करता हूँ कि चार-छह महीने में मन भर जाने के बाद मैं तुम्हें तलाक दे दूँगा। फिर तुम असलम से निकाह कर लेने को आजाद हो जाओगी।'

यह सुनकर मैंने आग्नेय दृष्टि से याकूब की ओर देखा था। तब याकूब कुटिलता से मुसकराया था और यह कहते हुए आगे बढ़ गया था, 'याद रखना, जब तक मैं हूँ, कोई दूसरा तुम्हारे साथ निकाह की जुर्रत नहीं करेगा।'

मुझे पहले से ही याकूब की इस प्रकार की मंशा की आशंका थी। उसके मुँह से पूरी बात सुनकर मैं अपनी अवशता पर वहीं बैठकर आँसू बहाने लगी थी। तभी असलम बाहर से वहाँ आ पहुँचा था। उससे नहीं रहा गया और मेरे पास आकर मुझसे रोने का कारण पूछने लगा। मुझसे पूरी बात सुनते-सुनते असलम के मुख पर एक दृढता दिखाई देने लगी और वह बोला था, 'अब हमारे पास एक ही रास्ता है। कल सुबह अँधेरा रहते हम दोनों पंजाब भाग चलें। हम लोग वहीं कुछ काम कर लेंगे। और अगर तुमने साथ चलने से इनकार किया तो मैं अब बरदाश्त नहीं कर सकता हूँ। कल ही याकूब का कत्ल करके खुदकुशी कर लूँगा।'

असलम के साथ मैं पंजाब तो क्या जहन्नुम भी जा सकती थी, तुरंत राजी हो गई थी और रात में साढ़े तीन बजे ही हम दोनों अपने गाँव को हमेशा के लिए छोड़कर कालका मेल पकड़ने चल दिए थे।

कालका मेल मेरे गाँव से अब काफी दूर आ गई है और मुझे लगता है कि रस्मो-रिवाज की नागफनी का जंगल हमसे दूर पीछे छूट गया है।

ज्ञान प्रसार संस्थान
१/१३७, विवेक खंड, गोमती नगर
लखनऊ-१०
दूरभाष : ९४१५०६३०३०

निबंध

# सूरा सो पहचानिए

● रमेश नैयर

पर्वत से अनेक छोटे-बड़े जलस्रोत निकलते हैं। पर्वत प्रत्येक को एक संदेश देते हुए कहता है कि इसे तुम समुद्र तक पहुँचा देना। जब पहुँचा दोगे तो तुम फिर वाष्प बनकर बादलों के कंधों पर सवार होकर मेरे पास एक विजेता की भाँति लौटोगे। तब तुम्हें मैं अपने सिर-माथे पर बिठाऊँगा। जो स्रोत इस संदेश को गंभीरता से लेता है, उसके जीवन को एक अर्थ मिल जाता है। एक उद्देश्य प्राप्त हो जाता है और लक्ष्य स्पष्ट हो जाता है। उसे नई जिजीविषा से भरपूर एक गति मिल जाती है। फिर वह चट्टानों से टकराता हुआ, मरुस्थलों में झुलसता हुआ, छोटे-बड़े नालों के कीचड़, कल-कारखानों से निकलते विष को भी आत्मसात् करता हुआ गतिमान रहता है। तभी वह गंगा, यमुना, गोदावरी, सिंधु तथा ब्रह्मपुत्र सरीखा महादानी बन पाता है। जीव-जग और धरा की प्यास बुझाता है। हरियाली को लहलहाता है। धन-धान्य से परिपूर्ण करता है।

इसी प्रकार प्रत्येक फलदार वृक्ष अपने प्रत्येक बीज से कहता है कि तुम धरती पर गिरकर किसी भी तरह अंकुरित होना। बड़े होकर मेरी ही तरह फलदार, छायादार वृक्ष बनना, ताकि पीढ़ियाँ तुम्हारी छाया का सुख प्राप्त कर सकें। तुम्हारे फलों का रसपान कर सकें। परंतु कितने ऐसा कर पाते हैं? वही जिनके जीवन में कोई अर्थ है, जिंदगी का कोई मकसद है और जिनका गंतव्य भी स्पष्ट है। तभी वह विश्वासपूर्वक कह सकेगा, 'जब से चला हूँ, मंजिल पर नजर है। मैंने कभी मील का पत्थर नहीं देखा।' यही जज्बा रखनेवाला भीड़ में अकेला सिर उठाए हुए खड़ा दिखता है। वही मनुष्य होता है। आदमियों के हुजूम से अलग एक इनसान; परंतु एक संपूर्ण मनुष्य अथवा एक मुकम्मिल इनसान होना बहुत कठिन है, बल्कि दूभर है। मिर्जा गालिब के हवाले से कहा भी गया है, 'फरिश्तों को भी मयस्सर नहीं इंसां होना।'

फरिश्ते अथवा देवता तो दूर, हिंदूदर्शन के अनुसार ईश्वर को भी दुष्टों के विनाश और साधुजनों के परित्राण के लिए हर युग में मनुष्य के रूप में अवतरित होना पड़ता है। प्रत्येक महाभारत में अनाचार को पराभूत करने के लिए किसी अर्जुन को माध्यम बनाना पड़ता है। उसे सुख-दु:ख, जय-पराजय और लाभ-हानि में सम्यक् और अविचल रहते हुए अपने दायित्व के निर्वाह के लिए तत्पर करना होता है। यह भी समझाना पड़ता है, 'मन की स्थिरता से भी अधिक श्रेष्ठ है बुद्धि की स्थिरता, क्योंकि मन की स्थिरता से तो लौकिक सिद्धियाँ ही प्राप्त होती हैं, परंतु बुद्धि की स्थिरता से कल्याण का पथ प्रशस्त होता है।' *(भगवद्गीता, अध्याय-२)*

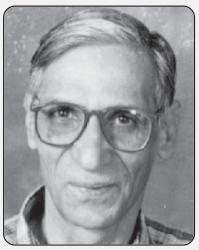

सुप्रसिद्ध लेखक-पत्रकार-संपादक। 'दैनिक भास्कर' एवं 'द हितवाद' (अंग्रेजी) दैनिक के संपादक। 'ऑब्जर्वर' के कार्यकारी संपादक रहे। लगभग एक दर्जन पुस्तकों का लेखन तथा सैकड़ों लेख प्रकाशित। अनेक पुस्तकों का संपादन व अनुवाद। अनेक सम्मान-पुरस्कारों से पुरस्कृत तथा विभिन्न देशों में भ्रमण।

जब किसी आदर्श और पूर्ण मनुष्य की कल्पना की जाती है तो गुरु गोविंद सिंह की छवि मानस में कौंध जाती है। देश और शेष विश्व के भी अनेक देशों में उनका ३५०वाँ प्रकाश वर्ष मनाया जा रहा है, तो उनका स्मरण और भी प्रासंगिक हो जाता है। जितना भी विश्व इतिहास पढ़ पाया हूँ, मुझे गुरु गोविंद सिंह जैसा त्यागी, पराक्रमी और मानवतावादी अन्य कोई चरित्र नहीं मिलता। उनके पिता गुरु तेग बहादुर ने सभी की धार्मिक स्वतंत्रता के लिए सत्याग्रह करते हुए बलिदान दिया। दिल्ली के चाँदनी चौक में उनका सिर कलम कर दिया गया। उनकी माताजी ने परहित और धर्म की रक्षा के लिए अपना जीवन अर्पित किया। उनके चारों पुत्रों ने मानवधर्म की रक्षा के लिए जूझते हुए जो शौर्य गाथाएँ लिखीं, उनका चिरकाल तक श्रद्धापूर्वक स्मरण किया जाता रहेगा। उनमें से दो राजकुमार अजीत सिंह और जुझार सिंह समर क्षेत्र में असहिष्णु शासक की सेना का प्रतिरोध करते हुए वीरगति को प्राप्त हुए। शेष दो सुपुत्रों जोरावर सिंह और फतह सिंह को पंजाब के सरहिंद में जीते-जी दीवार में चुनवा दिया गया। तब से सदियों को फलाँगते हुए उस बेमिसाल शहादत के साक्षियों के हवाले से आज तक कहा और सुना जाता है कि अपनी अंतिम साँस तक उन दोनों के चेहरे गर्व से दीप्त थे। होते भी क्यों न! अपने पिता से सदा सुनते जो आए थे, ''सूरा सो पहचानिए, जो लड़े दीन के हेत, पुरजा-पुरजा कट मरे, तब हूँ ना छाँड़े खेत।''

'कृपा' और 'आन' की रक्षा की प्रतीक 'कृपाण' सदैव गुरु गोविंद सिंह के अंग-संग रहती थी। शुभकर्मों में सदैव सक्रिय रहते हुए, रंगक्षेत्र में निर्भय-निर्भीक रहने का संकल्प करते हुए 'चंडी चरित' में उन्होंने लिखा—

*देहि शिवा बर मोय इहे*
*शुभ करमन से कभौं न टरों,*
*जूझ पड़ौं रण में अरि सौं तो*
*निश्चय कर अपनी जीत करों।*

अपने पिता और चारों पुत्रों की शहादत से मर्माहत गुरु गोविंद सिंहजी ने मुगल सम्राट् औरंगजेब की उन्मादी राजसत्ता से सशस्त्र संग्राम किया और अपने जीवनकाल में ही औरंगजेब का अवसान भी देखा। फिर भी संत-सिपाही गुरु गोविंद ने कभी रत्ती भर द्वेष की कोई भावना न उपजने दी। उन्होंने उदात्त मानवता का संदेश दिया, 'मानुष की जात सब एकै पहचानबो।'

मनुजता की इस कामना को अपने आचरण में सबसे पहले उतारा भी। उनके निर्देश पर भाई कन्हैया समर क्षेत्र में आहत सैनिकों के बीच जाते और सबको अपनी मशक से पानी पिलाते। स्पष्ट है, हिंदू-सिख सैनिकों के साथ ही जख्मी मुगल सिपाहियों की प्राणांतक पिपासा को भी शांत करते।

ऐसा बहुत दूभर होता है कि कोई शूरवीर महानायक लेखनी का भी धनी हो। साहित्य सृजन के साथ ही साहित्यकारों का संरक्षक भी हो। पांवटा साहब में गुरु गोविंद सिंह के राजदरबार में साहित्यकारों को सम्मानपूर्ण संरक्षण प्राप्त था। भक्तों में 'दशमेश' के नाम से श्रद्धापूर्वक स्मरण किए जाते गुरु गोविंद सिंह के दो महाकाव्य पढ़ने का सौभाग्य मिला। वे हैं 'रामावतार' और 'कृष्णावतार।' उनके राम तुलसी के 'रामचरितमानस' के मर्यादा पुरुषोत्तम ईश्वर तुल्य श्रीराम से अलग एक ऐसे मानव हैं, जिनके चरित्र में संवेदनाओं की झंकार सुनाई देती है। विस्तार में न जाते हुए राम और सीता के स्वयंवर की एक संक्षिप्त झलक 'रामावतार' की इन पंक्तियों में प्रस्तुत है—

*किधौं देवकन्या, किधौं वासवी है,*
*किधौं यक्षिणी किन्नरी नागनी है,*
*किधौं राग पूरे भरी रागमाला*
*बरी राम तैसी सिया आज बाला।*

विश्व-इतिहास में गुरु गोविंद सिंह को अद्वितीय बनाता है उनके द्वारा किया गया अप्रतिम त्याग। नवम गुरु तेग बहादुर के पुत्र होने के कारण सिख पंथ का दसवाँ गुरु होने का अधिकार उन्हें वंशानुगत परंपरा से प्राप्त हुआ था। न उनका कोई प्रतिद्वंद्वी था, न गुरु की आसंदी पर आसीन होने की परंपरा पर प्रश्न उठानेवाला कोई सिख गुरु। फिर भी उन्होंने शुद्ध लोकतांत्रिक ढंग से मृत्यु से किंचित् मात्र भी भयभीत न होकर आत्मबलिदान को तत्पर, पंथ के पाँच व्यक्तियों का चयन किया। यह चयन उनमें आत्मोत्सर्ग की तत्परता की परीक्षा लेकर किया गया। उन्होंने सामने उपस्थित अपने अनुगामियों का आह्वान करते हुए ललकारा कि चंडी बलिदान में शीष चाहती है। जो अपना सिर दे सकें, वे सामने आएँ। एक आत्मबलिदानी भीड़ में से निकलकर उपस्थित हो गया। गुरु गोविंद उसे बगल में बने तंबू में ले गए और रक्तस्नात तलवार लेकर लौटे। उन्होंने कहा, 'चंडी और शीष चाहती है।' मृत्यु का वरण करने को तत्पर दूसरा सामने आ गया। इस प्रकार गुरु के निर्देश पर मृत्यु के आलिंगन को तत्पर एक के बाद एक पाँच व्यक्ति शीष देने के लिए प्रस्तुत हो गए। गुरु आत्मोत्सर्ग को तत्पर पाँचवें व्यक्ति को लेकर तंबू में गए और फिर पाँचों को सही-सलामत लेकर संगत के सामने आ गए। वे भारत के विभिन्न भागों से आए पराक्रमी सिख थे, जो गुरु के आदेश पर पंथ के लिए शीष देने को तत्पर थे। उनके नाम थे— भाई दयाराम, धर्मचंद, हिम्मतराय, मोहकाम चंद और साहिबचंद। वस्तुतः तंबू में एक कटा हुआ बकरा रखा था। हर बार गुरु गोविंद उसी के रक्त में तलवार डुबोकर यह जताने के लिए लाते थे कि उसका शीष चंडी को चढ़ा दिया गया। इस कठोर परीक्षा में खरे उतरे सिखों को पंज प्यारे की संज्ञा दी गई। निर्णय किया गया कि ये पंज प्यारे ही पंथ का प्रत्येक महत्त्वपूर्ण निर्णय सर्वसम्मति से करेंगे। गुरु गोविंद ने स्वयं पंज प्यारों के समक्ष घुटनों के बल बैठकर उनसे प्रार्थना की, 'अब आप ही इस गोविंद राय को गोविंद सिंह बनाइए?' तब से उन्हे 'दशमेश गुरु गोविंद सिंह' जाना जाने लगा। इसके साथ ही उन्होंने वहाँ एकत्र खालसा संगत पंथ के अनुयायी समूह के समक्ष एक और ऐतिहासिक निर्णय की घोषणा कर दी कि आज ही से वंशानुगत गुरु-गद्दी की परंपरा समाप्त की जा रही है। पंथ का गुरु होगा 'गुरु ग्रंथ साहेब'। उनके शब्द थे 'गुरु मानियो ग्रंथ'। विश्व के अध्यात्म के इतिहास में इतना लोकतांत्रिक निर्णय अन्यत्र नहीं मिलता।

पंथ के प्रत्येक अनुगामी को उन्होंने साधारण मानव से सिंह बनाया। पंथ के एक-एक सिंह को केश, कृपाण, कच्छा, कंघा और कड़ा धारण करने का संकल्प कराते हुए अपने आत्मविश्वास की घोषणा इन शब्दों में की—

*चिड़ियन से मैं बाज तुड़ाऊँ*
*सवा लाख से एक लड़ाऊँ*
*तभै गोविंद सिंह नाम कहाऊँ।*

इतिहास साक्षी है कि तभी से मुगल साम्राज्य की चूलें हिलने लगी थीं। उसके खिलाफ भारत के विभिन्न हिस्सों में सशस्त्र संघर्ष की लहर हुँकारने लगी थी। उत्तर-पश्चिम में सिख तो दक्षिणांचल में छत्रपति शिवाजी के मराठे सक्रिय हो गए थे। गुरु गोविंद सिंह ने एक जोखिम भरा निर्णय लिया। सम्राट् औरंगजेब को निर्दोषों की हत्याओं से विरत करने के ध्येय से फारसी में लिखित 'जफरनामा' (विजय-पत्र) की एक प्रति १७०६ ईसवी में खिदराना के युद्ध के पश्चात् भाई दया सिंह के हाथों औरंगजेब तक भेजी। बहुत समय तक गुरु गोविंद सिंह को पता

नहीं चल पाया कि 'जफरनामा' की वह प्रति औरंगजेब तक पहुँची या नहीं। इसलिए वे स्वयं उसकी एक प्रति लेकर दक्षिण भारत के अहमदनगर की ओर चल पड़े। उन दिनों औरंगजेब गंभीर रूप से रुग्ण था। तब तक औरंगजेब को पता चल चुका था कि उसे पंजाब के मुगल सूबेदार ने गुरु गोविंद सिंह के बारे में भ्रामक और दुर्भावनापूर्ण जानकारी दी थी। उसने जबरयार और मुहम्मद यार मनसबदार को संदेश भिजवाकर गोविंद सिंह को सम्मानपूर्वक और सुरक्षित उनके पास लेकर आने का निर्देश दिया। परंतु जब तक गुरु गोविंद सिंह अहमदनगर पहुँचते, तब तक सम्राट् औरंगजेब दम तोड़ चुका था। 'जफरनामा' फारसी साहित्य की महत्त्वपूर्ण कृति है। अध्यात्म, साहित्य और कूटनीति के अध्येता इसका मनोयोग से अध्ययन करते हैं। विश्व के अनेक विश्वविद्यालयों में 'जफरनामा' पर शोध ग्रंथ लिखे गए हैं।

सामाजिक समरसता के क्षेत्र में गुरु गोविंदसिंह का योगदान महत्त्वपूर्ण है, जिन्हें समाज में दलित माना जाता है, उनके प्रति उनके हृदय में विशेष सम्मान की भावना थी। उसके पीछे भी एक बड़ा कारण था। हुआ यह था कि जब चाँदनी चौक में गुरु तेग बहादुर शहीद हो गए तो उनके पार्थिव शरीर की अंत्येष्टि की चुनौती खड़ी हो गई। हिंदू-सिख परंपरा के अनुसार अंत्येष्टि दाह-संस्कार द्वारा की जाती है। मुगल सैनिकों ने गुरु तेगबहादुर के शरीर को चारों ओर से कड़े पहरे में घेर लिया था। उस पहरे को भेद पाना दुष्कर था। तब गुरु के दलित अनुयाइयों ने ऐसी व्यूह रचना की, जिसमें तीन तरफ से मुगल पहरेदारों पर सशस्त्र धावा बोलकर उन्हें उलझाकर रखा गया और रंगरेटों की एक टोली ने छापामारों की भाँति झपटकर गुरु तेगबहादुरजी की पार्थिव काया को उठा लिया। पास ही एक झोंपड़ी में उन्होंने बड़ी चतुराई से अग्नि संस्कार की व्यवस्था कर रखी थी। मुगल प्रहरियों की कड़ी घेरेबंदी को धत्ता बताते हुए पराक्रमी आत्मबलिदानी रंगरेटों ने गुरु तेगबहादुर की अंत्येष्टि विधिवत् संपन्न की। उनकी सरफरोशी की प्रशंसा करते हुए गुरु गोविंद सिंह ने कहा था, 'रंगरेटा गुरु का बेटा।'

गुरु गोविंद सिंह को विश्व इतिहास का इतना महान् नायक इसलिए माना गया कि उन्होंने अपने सामने एक बड़ा लक्ष्य रखा, जिसे प्राप्त करने के लिए संपूर्ण समर्पण की भावना से जुट गए। उन्होंने अपने प्रत्येक 'खालसा' अनुयायी में अन्याय के प्रतिकार का जज्बा पैदा किया। संपूर्ण जगत् को मनुष्य होने का महत्त्व बताया।

१५२-ए, समता कॉलोनी
रायपुर-४९२००१ (छ.ग.)
दूरभाष : ९४२५२०२३३६

लघुकथा

# पापी पेट

● **हरदर्शन सहगल**

छोटा सा डॉक्टर, बड़ा पेट, बड़ा बँगला, सिकुड़ा हुआ अंडर ग्राउंड क्लीनिक, तगड़ी फीस, इस पर मरीजों की भीड़।

आधे ठीक होते। डॉक्टर को भगवान् मानते।

आधे ठीक नहीं होते। 'भगवान् की मरजी कह' फीस भर आते।

छापामारों को मौका मिला।

डॉक्टर ने उनकी कमीज उठा, पेट का मुआयना किया। भर लो पेट।

पेट अकेला नहीं था। हिस्सेदारों के पेट भरने का तकाजा था।

डॉक्टर साहब का पेट खाली हो गया।

डॉक्टर साहब ने अपने पिचके पेट की खातिर फीस दुगनी कर दी।

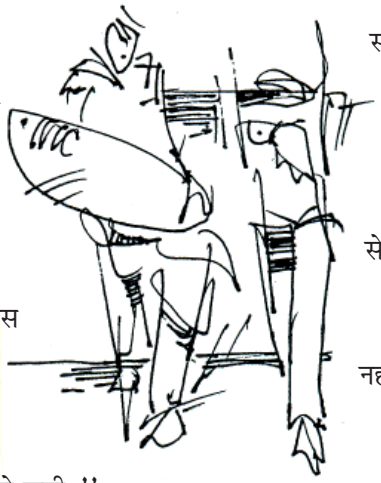

## अनुशासन

मासूम ग्रैजुएट!

''चलो, चपरासी की ही सही, सरकारी नौकरी तो लगी।''

पहला दिन!

नस-नस में जोश। बड़ी फुरती से, हर विभाग में फाइलें और फाइलें लाते, ले जाते खुशी के मारे सीटी बजा रहा था।

बाबू लोग मुसकरा रहे थे।

डिप्टी डायरेक्टर के चैंबर में फाइल रखते हुए भी सीटी बजा दी।

एक करारा थप्पड़ गोरे गालों को छेद गया।

फौरन कांस्टेबल हाजिर हुआ।

साथ के स्टोर में ले गया।

झापड़ों की भरमार। घबराहट, गरमी और पसीने से लथपथ ऐसी-वैसी जगहों पर चोटें।

बेहोशी ऐसी कि फिर अस्पताल।

फिर बड़े अस्पताल, जहाँ से कोई आज तक लौटकर नहीं आता।

५/ई/९ 'संवाद', डुप्लेक्स कॉलोनी
बीकानेर-३३४००३ (राज.)
दूरभाष : ०१५१-२५२९०६७

# हम पुरइन के पात हो गए

● बलवीर सिंह करुण

सुपरिचित रचनाकार। चार उपन्यास, दो महाकाव्य, एक खंडकाव्य तथा आठ अन्य पुस्तकें। 'अवंतीबाई सम्मान', 'मीरा पुरस्कार' तथा 'विशिष्ट साहित्यकार सम्मान', 'पं. भवानीप्रसाद मिश्र राष्ट्रीय पुरस्कार', 'गुरु गोलवलकर पुरस्कार', 'राष्ट्र प्रचेता डॉ. ब्रजेंद्र अवस्थी पुरस्कार', 'हिंदी सेवा सम्मान', 'पं. दीनदयाल उपाध्याय साहित्य पुरस्कार', 'राष्ट्रीय साहित्य सृजन सम्मान'। संप्रति प्राचार्य पद से सेवानिवृत्त होकर स्वतंत्र लेखन।

### हंसा सुनो! साँझ घिर आई

हंसा सुनो! साँझ घिर आई
लक्ष्य अनिश्चित, पंथ अजाना
अनदेखे ये झील किनारे,
सूने पनघट, डगर, वीथियाँ
प्राणहीन से उपवन सारे।

गुमसुम गगन, पवन बहका सा
थके-थके से लगते तारे,
संभव है कुछ परिवर्तन हो
हालातों में अलस्सकारे।

काल वसूलेगा अपना ऋण
गिन-गिन पैसा पाई-पाई,
हंसा सुनो! साँझ घिर आई।

कहने को तो दिन लंबा था
बिना रुके उड़ते भी आए,
लेकिन अजब बात है कैसी
डेढ़ कोस ही तय कर पाए।

आगे उड़ें कि वापस लौटें
या फिर यहीं पड़े रह जाएँ,
नया चमन या नीड़ पुराना
कहो ठिकाना कहाँ बनाएँ।

आगे तो है सपन नगरिया
पीछे वही गाँव हरजाई,
हंसा सुनो! साँझ घिर आई।

तन की हर सीवन उधड़ी है
पर मन अब भी नया नकोरा,
गिनती की कुछ साँस शेष हैं
नीलामी का नगर ढिंढोरा।

जाने कब सुलझेगी उलझन
कब देगा उस पार दिखाई,
क्षितिजों के पट खुलें तो मानूँ
सचमुच सम्मुख मंजिल आई।
जाने कौन दिवस में देगी
इकतारे की तान सुनाई,
हंसा सुनो! साँझ घिर आई।

### हंसा! ढोल-नगाड़े बाजे

हंसा! ढोल-नगाड़े बाजे
हम निस्संग, अलिप्त, अभोगी,
कड़वी-मीठी सुधियों के शव
गहरे बहुत दबाकर आए।

सौ-सौ बार रगड़कर पोंछा
बेहद उजला है मन दरपन,
कुछ भी अब तो याद नहीं है
बीते कहाँ जवानी बचपन।

रखे जनम भर बंद जतन से
खोल दिए सारे दरवाजे,
हंसा! ढोल-नगाड़े बाजे।

जल में रहकर भी अनभीगे
हम पुरइन के पात हो गए,
केवल सूर्यकिरण ही परसें
हम ऐसे जलजात हो गए।

हम ही देख पा रहे इसको
यह जो यान खड़ा है द्वारे,
इसमें ही लेकर आए हैं
सांकेतिक चिट्ठी हरकारे।

देवों के विग्रह पर सोहें
हमने साज आज वे साजे,
हंसा! ढोल-नगाड़े बाजे।

मैं ही तुम हूँ, तुम ही मैं हो
दूजा इसका भेद न जाने,
लाख जनम का याराना है
मैं पहचानूँ, तू पहचाने।

बिन पग दौड़ें, उड़ें पंख बिन
आ अब उसी देस को धाएँ,
कोई कथा पुरानी हो लें
या कोई तारा हो जाएँ।

घनमंडल के आखंडल हों
सभी जहाँ राजे-महाराजे,
हंसा! ढोल-नगाड़े बाजे।

६७ केशवनगर, अलवर (राजस्थान)
दूरभाष : ०९०२४७०८०३४

कहानी

# सहचरी

● मंजु मधुकर

सौभाग्या की बेटी सौजन्या यू.पी. की राजधानी में कलक्टर बनकर आ गई। सौजन्या अति मेधावी व तीक्ष्ण बुद्धि की खूबसूरत युवती थी। सौभाग्या की वह इकलौती पुत्री थी। वह पतिविहीन नारी थी, बेटी के साथ ही रहने लगी थी। इससे पहले वह दिल्ली के एक स्कूल में टीचर थी। वैसे वह रेलवे सर्विस में भी रह चुकी थी, परंतु रेलवे से रिटायरमेंट लेकर वह दिल्ली में एक स्कूल में टीचर हो गई थी। वहीं उसने अपनी पुत्री को पढ़ा-लिखाकर बड़ा किया। दिल्ली के नामी स्कूल, कॉलेज में सौजन्या को पढ़ाया-लिखाया। बेटी पढ़-लिखकर एक दिन आई.ए.एस. अफसर बन गई। कुछ दिन दिल्ली में रही। छोटे-मोटे शहरों में डिप्टी कलक्टर, कलक्टर रही। अब लखनऊ में आ गई थी। उसने पिता की बड़ी सी फोटो लगा रखी थी। वह उनकी ही पूजा करती थी। कई नौकर-चाकर, बड़ा सा घर, सौभाग्या सारे दिन आराम करती, बागवानी देखती या फिर पुस्तकें पढ़ती। बेटी बहुत व्यस्त रहती थी परंतु फिर भी रात का खाना दोनों साथ ही खातीं।

कोठी के पास ही एक मंदिर था। सौभाग्या प्रातः-सायं मंदिर पैदल ही जाती, इसी बहाने उसका टहलना भी हो जाता था। सौजन्या लाख कहती, माँ, गाड़ी में जाया करो परंतु वह कहती, मेरी आदत पैदल चलने की ही अधिक है, मुझे अच्छा लगता है। एक दिन वह मंदिर से निकली, तो मंदिर के बाहर के गेट पर खड़े एक पुरुष को देखकर सिहर उठी। जाना-पहचाना चेहरा परंतु बढ़ी हुई दाढ़ी, लाल शराबी नेत्र और मलगेज वस्त्र। उस पुरुष की निगाह भी उस पर पड़ी। सौभाग्या को देखकर उसकी निगाहों में चमक आ गई। वह उसकी ओर बढ़ा। लेकिन वह तेजी से आगे बढ़कर भीड़ में मिल गई। आज उसे अपने आप पर गुस्सा आ रहा था कि वह अकेली पैदल क्यों चली आई, जबकि सौजन्या हमेशा कहती है कि मम्मी गाड़ी ले जाओ, नहीं तो रामी को संग ले जाओ। रामी चौदह-पंद्रह वर्ष की तेलुगू कन्या थी, जो सौजन्या ने सौभाग्या की देखभाल के लिए ही रखी थी। वह तेजी से आगे बढ़ गई और जब पलटकर देखा तो पाया कि वह पुरुष अब भी उसी का पीछा कर रहा है। वह तेजी से आकर कोठी के गेट में घुस गई और दरबान से कहा कि वह गेट बंद ही रखे। उसकी साँस तेज-तेज चल रही थी। अंदर आकर जब उसने पानी पीया तब जाकर थोड़ी शांत हुई।

थोड़ी देर बाद बाहर से आती तेज आवाजों से वह चौंक उठी और बालकनी में खड़ी होकर देखने लगी कि क्या हो रहा है। उसने देखा, वह पुरुष अंदर आने के लिए दरबान से झगड़ा कर रहा था और शोर मचा रहा था। इतनी देर में सौजन्या की गाड़ी आ भी गई, वह लंच के लिए घर आई थी। शोर-शराबा देखकर उसने पुलिस को फोन किया और वह उसे पकड़कर ले गई। वह पुरुष धाराप्रवाह अंग्रेजी में बक रहा था।

जानी-मानी लेखिका। अब तक तीन कहानी-संग्रह तथा अनेक प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में कहानियाँ प्रकाशित। बहरीन में हिंदी अध्यापन। मॉरीशस ब्रॉडकास्टिंग कॉरपोरेशन में 'घर-गृहस्थी', 'आपकी चिट्ठी मिली' तथा अन्य सामाजिक कार्यक्रम प्रस्तुत। बहरीन में 'फाइन आर्ट सोसाइटी' द्वारा सम्मानित व पुरस्कृत।

सौजन्या अंदर आई, ''पता नहीं माँ, कौन था यह आदमी? अंदर आना चाह रहा था।''

''हाँ बेटी, तुम जिस पोस्ट पर हो, वहाँ ऐसे लोगों से तो तुम्हारा सामना होता रहेगा, सचेत रहना।''

''कितने दिनों से हम माँ-बेटी अकेली रहती हैं, परंतु ऐसा हादसा कभी नहीं हुआ।''

सौजन्या ने चिंतित होकर कहा। बीच की लॉबी में सौजन्या के पिता की बड़ी सी फोटो लगी हुई थी। उस पर चंदन की माला पड़ी थी, वह टूटकर नीचे गिरी हुई थी।

''राम सिंह, यह माला कैसे गिर गई और टूट भी गई है? देखो जरा आकर।'' सौजन्या ने आवाज दी।

''जी मेम साहब, यह तो टूट गई है, कल दूसरी लाकर लगा दूँगा।''

''रहने दे सौजन्या माला, फूल ही रख दिया कर अगरबत्ती जलाकर।'' सौभाग्या ने कहा।

तीन-चार दिन सौभाग्या मंदिर नहीं गई। एक दिन उसने पूछा, ''क्यों सौजन्या, वह आदमी अभी भी लॉकअप में है।''

''हाँ मम्मी, पता नहीं क्या बाही-तबाही अंग्रेजी में बोल रहा है। पढ़ा-लिखा इनसान है, लेकिन शराबी है।''

''अच्छा!''

दूसरे दिन शाम को सौजन्या तमतमाती हुई घर में घुसी, ''क्या मम्मी! आप थाने गई थीं?''

''हाँ।''

''क्यों?''

''उस बेकसूर आदमी को छुड़ाने।''

''वह बेकसूर नहीं है। थाना इनचार्ज बता रहा था कि वह आपका और मेरा नाम भी जानता है और उल्टा-सीधा बक रहा था।'' सौजन्या ने रोष में कहा।

''तुम इस जिले की कलक्टर हो, तुम्हारा नाम जानना कौन सा मुश्किल है। और मैं तुम्हारी माँ हूँ, कोई भी हमारा नाम पता कर सकता है।''

''लेकिन माँ, उस आदमी का मकसद क्या है? वह हमें क्यों तंग

कर रहा है?''

''होगा कोई, खैर, मैंने उसे शराबबंदी वाले गृह में डलवा दिया है।''

सौभाग्या दिल्ली में थी, तब भी समाजसेवा से प्रेरित रहती। कितने ही गरीब झोंपड़पट्टी के बच्चों को वह मुफ्त में पढ़ाती थी। सच मायने में तो वह घर में बैठी बोर ही होती रहती थी, अभी पचपन वर्ष की ही तो थी तो उसकी आयु। वह रोज सौजन्या से कहती कि मुझे किसी समाजसेवी संस्था से जुड़ने दे। या फिर किसी स्कूल-कॉलेज में पढ़ाने जाने दे। वह अभी तक दिल्ली में व्यस्त दिनचर्या बिता रही थी। परंतु सौजन्या लखनऊ आई तो माँ की नौकरी छुड़ाकर साथ ले आई। वह चाहती थी कि माँ भी तो उसके ठाट-बाठ देखे।

एक दिन उसने कहा, ''मम्मी, गवर्नमेंट अफसरों की बीबियों का एक लेडीज क्लब है, जहाँ वे सब बहुत समाज-सेवा करती हैं। कल उनकी एक सदस्या आपको आकर ले जाएगी, आप साथ चली जाना। वह सब तो चाहती हैं कि कोई अनुभवी स्त्री उन्हें मिले और उनका मार्गदर्शन करे।'' सौभाग्या यह सुनकर बहुत प्रसन्न हुई और उस लेडीज क्लब की सामाजिक गतिविधियों में शामिल हो गई।

शराब व ड्रग एडिक्ट लोगों के गृह में जाकर वह उनके हाल-चाल भी पूछती। उस पुरुष के विषय में जानने की भी उसकी उत्सुकता थी कि उसने शराब पीना बंद किया अथवा नहीं। पता करने पर इनचार्ज ने बताया कि ''वह पुरुष अब काफी शांत हो गया है। साफ-सुथरा रहता है। लाइब्रेरी से लेकर पुस्तकें पढ़ता है, परंतु शराब पीना बंद नहीं कर पा रहा है। कहीं-न-कहीं से मँगवा ही लेता है। वह कहता है कि मेरी बीबी और बेटी यहीं रहती हैं, मुझे उनके पास जाने दो।''

सौभाग्या प्राय: वहाँ जाती और उस पुरुष के लिए फल-जूस आदि ले जाती, कभी-कभी अच्छी-अच्छी पुस्तकें भी।

सौजन्या को जब पता चला, तो उसने आपत्ति की, ''मम्मी, आप वहाँ ज्यादा क्यों जाती हैं? वे खतरनाक लोग हैं। शराब के नशे में रहते हैं। कभी कुछ गलत कर बैठे तो?''

''अरे नहीं, वहाँ तो मैं बस फल-मिठाई वगैरह देने जाती हूँ। देखकर तरस ही आता है कि इतनी छोटी उम्र के बच्चे भी ड्रग एडिक्ट हो गए हैं। पता नहीं इनके माँ-बाप पर क्या बीतती होगी?''

एक मराठी युवक सौजन्या का बैचमेट था तथा मुंबई कैडर में भी था, वह आजकल एक सप्ताह की छुट्टी लेकर लखनऊ आया हुआ था। सौभाग्या उसके लिए नए-नए व्यंजन बनाने में व्यस्त थी और सौजन्या उसके साथ घूमने-फिरने में। सौभाग्या चाहती थी कि दोनों का विवाह हो जाए तो कितना अच्छा हो, जोड़ी बहुत अच्छी रहेगी। उसने सोच लिया था कि अबकी बार वह दोनों से खुलकर इस विषय में बात करेगी।

उस मराठी युवक का नाम मिलिंद काले था। उसके माता-पिता पूना में रहते थे। एक बड़े भाई मुंबई रिजर्व बैंक में उच्च अफसर थे। एक बहन थी, वह यू.एस.ए. में रहती थी। सौभाग्या के भी एक बड़े भाई पूना में रहते थे, वहीं सौभाग्या की माँ भी उन्हीं भाई के संग रहती थीं। उसने सोचा कि वह अपने भाई को मिलिंद के घर बातचीत करने व विवाह का प्रस्ताव लेकर भेजेगी। उसने सौजन्या से इस बात का जिक्र भी किया। सौजन्या ने बताया कि मिलिंद तो विवाह करना चाहता है, परंतु उसकी माँ मराठी कन्या से ही उसका विवाह कराना चाहती हैं। वह अपनी माँ को मना ले, तब आप मामा को भेजिएगा।

कई दिन ऐसे ही बीत गए। काफी दिन बाद वह शराब बंदीगृह गई। तो पता चला कि वह पुरुष काफी स्वस्थ हो गया था। शराब उसने छोड़ दी थी। वह किसी संस्था में अच्छी पोस्ट पर था, छुट्टी लेकर यहाँ-वहाँ घूम रहा था। उसकी छुट्टी कर दी गई है।

''कहाँ गया वह व्यक्ति, यह तो आप लोगों को पता होगा।'' सौभाग्या व्यग्रता से बोली।

''यह तो पता नहीं मैडम, शायद मुंबई चला गया है। वह किसी अच्छे परिवार का था। कहता था, मेरा परिवार मुझे छोड़ गया है, मैं उन्हें ही ढूँढ़ता फिर रहा हूँ।''

''अच्छा, वह कहाँ कार्य करता है, कुछ पता है?''

''नहीं मैडम, परंतु आप क्यों इतनी चिंतित हैं?'' इनचार्ज ने पूछा।

सौभाग्या ने झेंपते हुए कहा, ''नहीं-नहीं, मैं तो यह सोच रही थी कि कहीं वह फिर से शराब न पीना शुरू कर दे।''

सौजन्या व मिलिंद की अंतरंगता बढ़ती जा रही थीं। सौभाग्या ने मिलिंद से कहा कि वह अपनी माताजी को किसी प्रकार राजी कर ले तो वह बात आगे बढ़ाएँ। मिलिंद उन्हें आश्वस्त करके गया। सौजन्या अपने कार्य में बहुत व्यस्त रहती। एक अच्छे ऑफिसर के सारे गुण उसमें मौजूद थे और वह वहाँ बहुत लोकप्रिय भी हो गई थी।

एक दिन मिलिंद का फोन आया कि उसकी माँ तैयार हैं, अत: वे लोग आकर बात करें। सौभाग्या ने तुरंत अपने भाई को फोन करके उनसे मिलने के लिए कहा। मिलिंद के घर का पता व फोन नंबर दिया। सौजन्या के मामा वहाँ गए।

बातचीत से पता चला कि मिलिंद के पिता भी इंडियन नेवी में थे व नेवीनगर में रहते थे। सौभाग्या के पिता भी नेवीनगर में ही रहते थे। वह भी इंडियन नेवी में ही थे। आपस में जान-पहचान निकली।

मिलिंद की माँ ने कहा, ''आप लोग तो तेलुगू हैं, परंतु आपकी बहन व उनकी पुत्री तो नायर सरनेम लगाती हैं, क्या वह केरल की हैं।''

''जी, हमारी बहन ने केरल के युवक से विवाह किया था।''

''आपकी बहन के पति कहाँ हैं?''

''वह तो अब नहीं हैं।''

''अच्छा।''

''आप कहें तो मैं अपनी बहन व भानजी को बुला लेता हूँ, आप मिल लीजिएगा।''

''ठीक है, हम आपको फोन पर बता देंगे।''

सौजन्या के मामा वापस आ गए।

बहुत दिन तक जब उनका कोई फोन नहीं आया तो सौजन्या के मामा ने उन्हें फोन किया।

मिलिंद की माँ ने कहा, ''देखिए, यह विवाह नहीं हो सकता। हमने

पता लगाया है कि सौजन्या के माता-पिता का चरित्र संदिग्ध है और पिता तो अभी भी जिंदा हैं। बैंक में हैं। उनकी छवि बहुत खराब है। हम ऐसे बैकग्राउंड की लड़की से शादी नहीं कर सकते।''

सौजन्या के मामा ने यह सब सौभाग्या को बताया।

उधर मिलिंद ने भी फोन पर पूछा, ''सौजन्या, क्या तुम्हारे पिता जिंदा हैं?''

''नहीं, नहीं तो।''

''मेरे बड़े भाई ने पता लगाया है।''

''नहीं, यह गलत है। मैं आठ वर्ष की थी, तभी उनकी मृत्यु हो गई थी।''

''आठ वर्ष तक की याद मुझे उनकी है। वह मुझे बहुत प्यार करते थे। मैं आज भी अपने पापा को आदरणीय मानती हूँ।'' सौजन्या ने मिलिंद से साफ कहा।

मिलिंद ने झिझकते हुए कहा, ''सौजन्या, जब तुम्हारे नाना नेवी नगर में रहते थे, तब मेरे पिता भी वहीं रहते थे। मेरी माँ का कहना है कि तुम्हारे नाना का नाम श्रीनिवास राव था। उस समय वहाँ एक स्कैंडल हुआ और शोर मचा कि श्रीनिवास राव की बेटी किसी लड़के के साथ भाग गई है।''

''यह तुम क्या कह रहे हो, मिलिंद, मुझे विश्वास नहीं हो रहा।''

''तो अपनी माँ से सबकुछ पूछो। मुझे कोई फर्क नहीं पड़ता, परंतु आई फिर अड़कर बैठ गई हैं।'' मिलिंद के फोन से सौजन्या अवाक् रह गई।

एक दिन इतवार को खाना खाकर बालकनी में कॉफी लेकर दोनों माँ -बेटी बैठीं तो सौजन्या ने पूछा, ''माँ, यह बताइए कि पापा नहीं रहे, तो आपने उनके घरवालों से भी रिश्ता तोड़ दिया। मेरी दादी कौन हैं? बाबा कौन हैं? चाचा, बुआ कोई तो होंगे?''

''उन लोगों ने स्वयं ही रिश्ता तोड़ दिया, क्योंकि मैं उनकी पसंद की बहू नहीं थी।''

''माँ, मिलिंद का फोन आया था। और उसने यह सब कहा है। कहता है, तुम्हारे पिता जीवित हैं। माँ, क्या रहस्य है, मुझे भी तो बताओ।''

सौभाग्या थोड़ी देर चुप रही और फिर गला खखारकर बोली, ''बेटी, यह सत्य है कि मैं तुम्हारे पापा के साथ घर से भाग गई थी। मात्र अठारह वर्ष की उम्र थी तब, मुझ नासमझ को यह भी ध्यान नहीं आया कि तुम्हारे नाना की कितनी बदनामी होगी। नेवीनगर के एक ही स्कूल में हम लोग पढ़ते थे। तुम्हारे पापा मुझसे दो वर्ष बड़े थे। परंतु स्कूल की अनेक सांस्कृतिक गतिविधियों में हम दोनों अव्वल रहते। तुम्हारे पापा से ऐसे ही दोस्ती हो गई। स्कूल समाप्त कर हम लोग एक ही कॉलेज में पढ़ने लगे।

''तुम्हारे पापा उतावले किस्म के केरल के एक संभ्रात परिवार के थे। उनके पिता भी कोलाबा में ही रहते थे, किसी उच्च पोस्ट पर थे, उनकी मृत्यु जल्दी हो गई, घर में माँ और दो छोटे भाई थे। भाई और तुम्हारे पापा मुंबई में ही पढ़ते रहे, जबकि माँ केरल चली गईं। वहाँ उनका मकान तथा काफी जमींदारी थी। वे वहीं देखभाल करतीं तथा बहुत अनुशासनप्रिय और कठोर स्वभाव की थीं। मैं बी.ए. में थी, तुम्हारे पापा एम.ए. में थे, गरमियों की छुट्टी में एक दिन तुम्हारे पापा और मैंने एक मंदिर में जाकर शादी कर ली। हमारी शादी में पाँच-छह दोस्त शामिल थे और शादी करके हम लोग नेपाल भाग गए। तुम्हारे पापा के पास भरपूर पैसा रहता था।

''कुछ दिन नेपाल रहकर वे वापस अपने गाँव गए। वहाँ उनकी माँ ने उनका बहुत तिरस्कार किया, परंतु आगे पढ़ने के लिए पैसा भी दिया। मुंबई लौटकर मेरी अपने घर जाने की हिम्मत नहीं पड़ी। हम लोग तुम्हारे पापा के एक अमीर दोस्त के खाली फ्लैट में रहने लगे और पढ़ाई पूरी की। एम.ए. करते ही तुम्हारे पिता रिजर्व बैंक की प्रतियोगी परीक्षा में आ गए और अफसर हो गए। मुझे उन्होंने एम.ए. ज्वॉइन कराया और एक-दो छोटे-मोटे कोर्स भी करवाए। इस बीच में वे अपनी माँ के पास गए। मेरे माता-पिता ने मुझे क्षमा कर दिया था। मैं वैसे भी उनकी इकलौती लाड़ली बेटी थी। मेरे एक बड़े भाई थे। एम.ए. करके मैं प्रतियोगी परीक्षा में बैठी और रेलवे सर्विस में आ गई। हम दोनों मुंबई में ही पोस्टेड थे। इसी बीच तुम्हारा जन्म हो गया। मैं उतनी कॅरियर ओरियंटड नहीं थी। घर-गृहस्थी चलाना चाहती थी, परंतु तुम्हारे पापा ने मुझे प्रेरित किया और मैं एक कर्मठ अफसर बन गई।

''इधर तुम्हारे दोनों चाचाओं के विवाह उनके समाज में ही हुए। यह अपनी माँ की उपेक्षा के शिकार हुए। हम लोग दो-तीन बार केरल गए। परंतु तुम्हारी दादी का व्यवहार हम लोगों के प्रति अच्छा नहीं था। इसलिए तुम्हारे पापा ने उन लोगों से रिश्ता तोड़ दिया।

''तुम्हारे पापा एक बुद्धिमान अफसर थे, अपने काम के बदले में वे एक-दो बार जापान, अमेरिका, लंदन भी हो आए। मैं भी बहुत व्यस्त रहती थी, घर में आया रख ली, लेकिन फिर भी तुम्हारे पापा तुम्हारा बहुत ध्यान रखते। यहाँ तक कि जब मेरे डिपार्टमेंट ने छह माह के लिए मुझे विदेश भेजा तो मैंने सोचा कि तुम्हें अपनी माँ के पास छोड़ दूँगी। परंतु उन्हें यह नागवार गुजरा। उन्होंने स्वयं ही तुम्हारा खयाल रखा। तुम्हारे पापा का स्वभाव थोड़ा विचित्र था। उनकी अपने किसी बॉस से नहीं पटती थी। उनके एक बॉस तो ऐसे आए कि उन्होंने उनके प्रमोशन तक रोक दिए। जबकि मैं प्रमोशन व उन्नति की सीढ़ियाँ चढ़ती गई। इसके बाद तुम्हारे पापा ने बेइंतहा शराब पीना आरंभ कर दिया। ऑफिस में भी उनकी छवि खराब होने लगी। कभी ऑफिस जाते, कभी यों ही पड़े रहते। उल्टा-सीधा बक-झक करने लगे और मना करने पर हिंसक हो जाते। मारने-पीटने लगे। घर का वातावरण खराब होने लगा। मेरी उन्नति से वे अब चिढ़ने लगे थे।

मेरे माँ-बाप ने कहा कि तलाक ले लो, पर वह भी उन्होंने देने से मना कर दिया। कोर्ट-कचहरी मैं नहीं जाना चाहती थी। उन्हें छोड़कर मैं अपनी माँ के घर आ गई तो वहाँ भी आकर ऊधम मचाने लगे। मैं तुम्हें लेकर दिल्ली आ गई और मैंने रेलवे की नौकरी छोड़ दी। तुम्हारा भविष्य भी तो बनाना था। उस माहौल में तुम्हारा व्यक्तित्व कैसा बनता? तुम अपने पापा की लाड़ली थी। इसलिए मैंने तुमसे यही कहा कि तुम्हारे पिता अब

नहीं हैं। उसके पश्चात् तुम्हारे पिता से मेरा कोई संपर्क नहीं रहा। माँ भी भाई के पास पूना आ गई उनका पता भी उन्हें नहीं मालूम था। तुम्हारे पापा के विषय में कहीं-न-कहीं से मुझे पता चल ही जाता था कि वे शराब में ही डूबे रहते हैं। नौकरी पर भी कम जाते हैं। मुझे बहुत दु:ख होता। मैं छिप-छिपकर रोती और फिर मैंने भी अपने को नए समाज में ढाल लिया और तुम्हारे व्यक्तित्व के निर्माण में लग गई। तुम्हारी ददिहाल से रिश्ता पहले ही समाप्त हो गया था। माँ और भाई ही मेरे दु:ख-सुख के साथी बने। मैंने सोच लिया था कि तुम्हारे विवाह के पश्चात् मैं अपने पति के पास लौट जाऊँगी।''

सौजन्या सब कुछ चुपचाप सुनती रही और उसने दो दिन बाद मुंबई जाने का कार्यक्रम बना लिया। वहाँ वह मिलिंद से मिली, उसे सबकुछ बताया। मिलिंद ने उसका साथ देने का वायदा किया, उसके साथ वह बैंक गई और अपने पिता के बारे में पता किया। अपने पापा से मिलकर वह जोर-जोर से रोई। उन्हें लेकर वह लखनऊ आ गई। सौभाग्या अपने पति को देखकर रो पड़ी। कहाँ वह सुदर्शन, लंबा-चौड़ा व्यक्तित्व और कहाँ यह घिसा हुआ दुबला-पतला शरीर!

मिलिंद ने भी अपनी माँ को मना लिया और दोनों का विवाह हो गया।

सौजन्या ने अपने माँ-बाप से अपने साथ चलने का वायदा किया।

सौभाग्या ने कहा, ''नहीं, मैंने पहले ही गलती की तुम्हारे पापा को छोड़कर, अब नहीं। अब जीवन इन्हीं के संग बिताना है। क्योंकि मैं इनकी सहचरी हूँ। मेरा-इनका साहचर्य तो बाल्यावस्था से ही है।

ई-११५, सेक्टर-५२
नोएडा (उ.प्र.)
दूरभाष : ९९९९३९८०१०

लघुकथा

# परिवर्तन

● अभिषेक अवस्थी

अभिराम दिल्ली से हर रात साढ़े नौ बजे लखनऊ में अकेले रह रही अपनी माँ से बात किया करता था। पूरा दिन ऑफिस में थकने के पश्चात् फ्लैट में आता। रसोइए द्वारा पहले से बनाए गए भोजन को गरम करता। फिर घड़ी पर एक सरसरी नजर डालने के बाद अपनी डायरी में दिनचर्या लिखता। इतनी व्यस्तता के बावजूद जब उसकी बायोलॉजिकल घड़ी साढ़े नौ बजने का संकेत करती तो वह सारे कार्य छोड़कर स्मार्ट फोन की स्क्रीन पर अंकित अपनी माँ की तसवीर पर टैप करता। उसके साथ ही माँ-बेटे की छोटी-बड़ी बातें आरंभ हो जातीं—

'मम्मी! हैलो···चरण स्पर्श!'

'खुश रहो, क्या हाल है?'

'ठीक है सब, आप सुनाइए।'

'हम भी बढ़िया हैं। आजकल मैडम हमें थोड़ा जल्दी छुट्टी दे देती हैं, सो हम ऑफिस से जल्दी आ गए थे।'

'अच्छा है, आपकी मैडम को मेरी ओर से थैंक यू बोल दीजिएगा। खाना खा लिया आपने?'

'नहीं, अभी तो हम लाइट आने का वेट कर रहे हैं।'

'क्यों? इनवर्टर को क्या हुआ?'

'अरे, कल रात से लाइट नहीं है। इनवर्टर भी बोल गया है।'

'ओह! इसीलिए कहता हूँ, यहाँ आ जाइए।'

'कैसे आ जाएँ? छुट्टी भी तो मिलनी चाहिए न।'

'छोड़िए न ये नौकरी-वौकरी। मैं हमेशा के लिए आने को बोल रहा हूँ, फॉरएवर।'

'अच्छा! पापा ये जो इतना बड़ा मकान बनाकर छोड़ गए हैं, इसको ऐसे ही लावारिस छोड़ देंगे क्या? वैसे भी अभी तो रिटायरमेंट के तीन साल बाकी हैं।'

'ठीक है, जैसी आपकी इच्छा।' (अभिराम जानता था कि माँ नहीं माननेवाली। रोज की तरह, आज भी चुप होकर माँ के एकाकीपन के बारे में सोच व्यथित होने लगा।)

'हैलो, क्या हुआ?' उधर से माँ ने पूछा, 'तुमने खाना खा लिया?'

'हाँ, बस खाने ही जा रहे हैं, अकेले खाने में अब मजा नहीं आता।'

'अच्छा, बहानेबाजी न करो। अच्छी तरह खाओ-पियो, कुछ दिन बाद अकेले नहीं खाना पड़ेगा।'

'मतलब?'

'दीदी की ससुराल की रिश्तेदारी में एक लड़की है। गजब की सुंदर है। हमें तो पसंद है। कब आ रहे हो? उन लोगों के यहाँ भी तभी चलते हैं।'

'देखने-दिखाने का आडंबर क्यों? आपको पसंद है तो बाँध दीजिए मुझे खूँटे से।'

'अरे भाई, चिढ़ते बहुत जल्दी हो।'

'अच्छा ठीक है, फिर अब खाना खाकर सो जाइए।'

'ओके, गुडनाइट!'

'ओके बाय।'

लगभग पंद्रह मिनट यह वार्त्तालाप प्रतिदिन चलता था। कुछ नया न होते हुए भी उनकी बातचीत कतई पुरानी नहीं लगती थी। कुल पंद्रह दिन हुए उसे अपने हनीमून से लौटे, माँ से बातचीत की अवधि अब दिन-ब-दिन कम हो चली थी। पहले साढ़े नौ से नौ पैंतीस हुआ, फिर नौ चालीस, फिर नौ पैंतालीस और अब फोन का इंतजार करते-करते माँ की अकसर आँख लग जाती है।

सी ५६ ए/५ सेक्टर ६२,
नोएडा-२०१३०१
दूरभाष : ०९९५३४१९३२३

# कामागाटा मारू की दुखांत यात्रा

● ऊषा निगम

एक यात्रा जिसने स्वाधीनता आंदोलन को नवीन ऊर्जा प्रदान की। बीसवीं सदी के द्वितीय दशक में कामागाटा मारू नामक जहाज की घटना है, रोमांचकारी यात्रा के नायक अमृतसर जिले के बाबा गुरदित्त सिंह मलाया, जो सिंगापुर में ठेकेदारी करते थे, वहाँ उन्होंने स्वयं अपनी आँखों से अपने देशवासियों का अपमान और दुर्दशा देखी थी। तभी से उनके हृदय में 'ब्रिटिश उपनिवेशों में बसनेवाले स्वदेशवासियों की सेवा करने के विचार का जन्म हुआ था।' दूसरी ओर, उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक से रोजगार की तलाश में बड़ी संख्या में भारतीय श्रमिक कनाडा और फिर अमरीका जाने लगे थे। इनमें सिखों और पंजाबियों की संख्या अधिक थी। समय बीतने के साथ अपनी लगन और परिश्रम से उन्होंने इन देशों में अपनी स्थिति को मजबूत कर लिया था। लेकिन अपने स्थानीय हमपेशा विदेशी साथियों की ईर्ष्या और नस्ली भेदभाव के कारण उन्हें दोनों ही देशों में घोर अपमान, अन्याय और अमानुषिक व्यवहार का सामना करना पड़ा।

भारतीय श्रमिकों के प्रवेश से स्थानीय श्रमिकों की स्थिति संकट में पड़ गई थी। वे भारतीय श्रमिकों की बराबरी नहीं कर पा रहे थे। अत: कनाडा सरकार ने (कनाडा ब्रिटिश उपनिवेश था) अपने माइग्रेशन ऐक्ट में परिवर्तन किया। ८ जनवरी, १९०८ को एक निर्णय लिया गया, जिसके अनुसार—''आज की तारीख से···कनाडा में सिर्फ वही प्रवेश कर सकेंगे, जो जिस देश के असली निवासी और नागरिक हैं, सीधे यात्रा द्वारा कनाडा आएँगे।'' कनाडा सरकार की यह आज्ञा ही सख्ती के साथ केवल हिंदुस्तानियों पर लागू होनी थी, क्योंकि उनका अपना देश परतंत्र था, उनकी सरकार उनका साथ नहीं देती थी। इस निर्णय के परिणामस्वरूप प्रवासी भारतीय अपने परिवारों को नहीं बुला सकते थे और न ही नए लोग कनाडा में प्रवेश पा सकते थे, क्योंकि भारत से कोई भी जहाज सीधे कनाडा के लिए नहीं जाता था। एक अन्य आदेश द्वारा यात्रियों के पास २०० डॉलर की राशि होना भी आवश्यक कर दिया गया। यह एक कठिन शर्त थी।

उपर्युक्त परिस्थितियों में गुरदित्त सिंह ने कुछ निर्णय लिये। इन निर्णयों के पीछे दो कारण समझ में आते हैं। उनका विचार था कि यात्राओं से व्यक्ति का दृष्टिकोण विस्तृत होता है। उन्होंने लिखा था कि स्वतंत्र देश के वासियों के संपर्क में आने से स्वयं हमारे मन में भी स्वतंत्रता की भावना जाग्रत् होगी और पराधनी देश की नपुंसक प्रजा में विदेशी शासन से मुक्त होने की उत्कंठा बढ़ेगी। द्वितीय, कनाडा और भारत के मध्य सीधी यात्रा की व्यवस्था करके वे एक ओर कनाडा जाने के इच्छुक भारतीयों की कठिनाई का समाधान करते और दूसरी ओर बाबा के लिए यह लाभप्रद व्यवसाय भी होता।

सुप्रसिद्ध लेखिका। स्वतंत्रता सेनानियों पर विशेष लेखन। पत्र-पत्रिकाओं में लेख आदि निरंतर प्रकाशित। 'कानपुर : एक सिंहावलोकन' स्मारिका भी। सन् १९७०-७२ में पी.पी.एन. कॉलेज में अध्यापन कार्य के बाद अब लेखन में रत।

बाबा गुरदित्त सिंह ठेकेदारी छोड़कर मलाया से हांगकांग आ गए थे। १९०९ में वे कलकत्ता आए। कलकत्ता में उन्होंने एक जहाज की व्यवस्था करने का प्रयास किया, जिसमें उन्हें सफलता नहीं मिली। वे पुन: हांगकांग वापस गए । वहाँ पर उन्होंने 'कामागाटा मारू' नामक एक जापानी जहाज को किराए पर लेने में सफलता पाई, जिसे हांगकांग से शंघाई, चीन, योकोहामा, जापान होते हुए वैंकूवर (कनाडा) पहुँचना था। जहाज में ५०० यात्रियों की क्षमता थी। ५०० यात्रियों ने टिकिट लिये। तभी २६ मार्च, १९१४ को नकली टिकट बेचने का आरोप लगाकर बाबा को बंदी बना लिया गया। इस काररवाई का उद्देश्य भारतवासियों के आवागमन में व्यवधान डालना था। उनके मार्ग में इतनी कठिनाइयाँ और बाधाएँ उत्पन्न की जाएँ, ताकि वे विदेश जाने का सपना न देख सकें। बाद में जमानत पर बाबा को छोड़ा गया। तब तक केवल १६५ यात्री शेष रह गए थे। बाबा को भारी हानि हुई। इन्हीं परिस्थितियों में ४ अप्रैल, १९१४ को जहाज हांगकांग से रवाना हुआ। शंघाई में यात्रियों की संख्या ३७६ हो गई। सभी यात्री ब्रिटश भारत के नागरिक थे।

२३ मई, १९१४ को कामागाटा मारू वैंकूवर पहुँचा। तट पर लंगर डालने से पहले के सारे नियमों का पालन किया जा चुका था, किंतु जहाज को तट पर लगाने और यात्रियों को उतरने की अनुमति इमिग्रेशन

विमाग की ओर से नहीं मिली। इसके पीछे कंजरवेटिव एम.पी. एच.एच. स्टीवेंस तथा इमिग्रेशन अफसर मि. रीड की प्रमुख भूमिका रही। जहाज बीच समुद्र में खड़ा रहा। बाबा के तमाम पत्र-व्यवहार के बाद मि. हॉपकिंसन को वार्त्तालाप के लिए भेजा गया। उन्होंने किसी समझौते तक पहुँचने के लिए गुप्त रूप से २०,००० पौंड की माँग की, जिसे बाबा ने स्वीकार नहीं किया। वस्तुत: यह गुरदित्त सिंह को फँसाने के लिए एक षड्यंत्र था। इस घटना के बाद और भी सख्ती बढ़ा दी गई।

यह बात ध्यान देने योग्य है कि कनाडा सरकार कामागाटा मारू के जापानी कर्मचारियों को भोजन-पानी की पूरी सुविधा प्रदान कर रही थी। दूसरी ओर जहाज के अन्य यात्री भूख-प्यास से तड़प रहे थे। अनेक अवसरों पर छीना-झपटी की नौबत आ जाती थी। १९ जुलाई, १९१४ को कनाडा सरकार ने जहाज को बंदरगाह छोड़कर वापस जाने का आदेश दिया। जिसे बाबा तथा यात्रियों ने स्वीकार नहीं किया। उसी दिन यात्रियों को आतंकित करने के लिए १३५ पुलिस के सिपाहियों तथा कुछ अधिकारियों को 'सी लायन' नामक स्टीम बोट के द्वारा कामागाटा मारू के निकट भेजा गया। यात्रियों पर इंजन द्वारा पानी फेंका गया। यात्रियों ने भी जान हथेली पर रखकर परिस्थितियों का सामना किया। उन्होंने जहाज में रखे कोयले के भंडार की मदद से पुलिस पर कोयलों की वर्षा करके उन्हें भागने के लिए विवश किया। यह घटना 'द सन' नामक समाचार-पत्र में कुछ इस तरह प्रकाशित हुई—''हिंदुओं की चीखती-चिल्लाती भीड़ ने पुलिसकर्मियों पर कोयले के ढेर तथा ईंटों की वर्षा की। यह कोयले रूपी जल प्रवाह के नीचे खड़े होने जैसा था।'' इसके बाद ही युद्ध पोत 'रेनबो' को जहाज की ओर भेजा गया, ताकि बाबा तथा यात्री भयभीत होकर स्वत: वैंकूवर छोड़कर वापस चले जाएँ। साथ ही यात्रियों को गोलियों से भून डालने की धमकी भी दी गई। जहाज रेनबो की तोपों के निशाने पर था।''

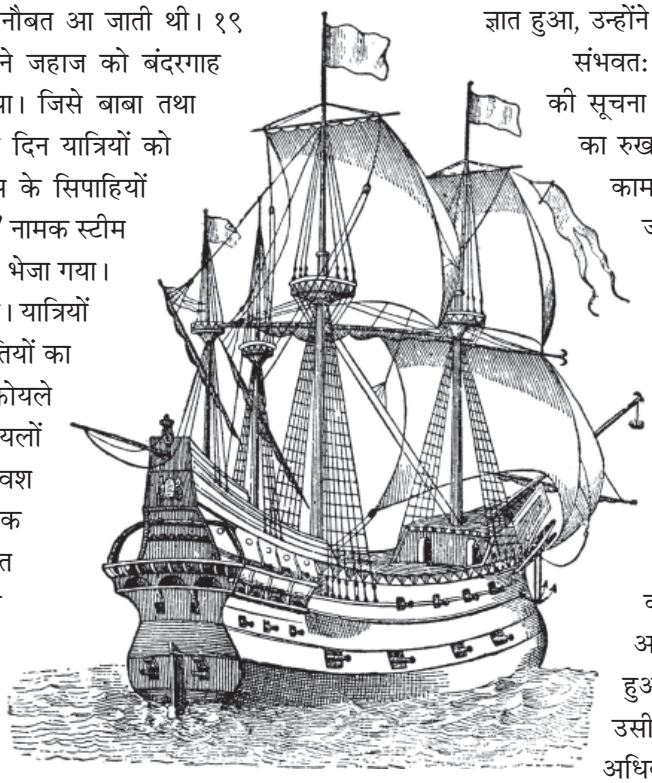

कामागाटा मारू के दुर्भाग्य के ये सारे समाचार कनाडा और अमेरिका के प्रवासी भारतायों को मिल रहे थे। उन्होंने उसपर होनेवाले अन्याय और अत्याचारों का घोर विरोध किया। अनेक सभाएँ हुईं। एक 'तटवर्ती कमेटी' बनाई गई। हसन रहीम और सोहन लाल पाठक इसके मुख्य सदस्य थे। वैंकूवर के डेमिनियन हॉल की एक सभा में यह निर्णय लिया गया कि यदि जहाज के यात्रियों को कनाडा में उतरने की अनुमति नहीं दी गई तो कनाडा निवासी भारतीय उन्हीं के साथ भारत जाएँगे और वहाँ विप्लव का आरंभ करेंगे। तटवर्ती कमेटी ने कामागाटा मारू की २०,००० डॉलर की अगली किश्त का भी प्रबंध कर दिया। एक वकील मि. बर्ड के द्वारा सुप्रीम कोर्ट में मुकदमा भी दायर करवाया गया। यद्यपि सुविधाएँ न मिलने के कारण मि. बर्ड को सफलता नहीं मिल सकी।

इसके अतिरिक्त जहाज के यात्री तथा कनाडा के प्रवासी भारतीय परस्पर सांकेतिक भाषा में समाचारों का आदान-प्रदान करते थे। एक पहाड़ी पर खड़े होकर प्रवासी भारतीय जहाज के यात्रियों को देखा करते थे। दोनों ओर से संकेतों का आदान-प्रदान हुआ। इन्हीं संकेतों के माध्यम से भारतीयों को यह संदेश मिला कि अगले दिन यात्रियों ने जहाज की भट्ठी के चारों ओर एकत्र होकर आत्मदाह का निर्णय लिया है। इसके बदले में वैंकुवर के भारतीयों ने निर्णय लिया कि जहाज के जलते ही नगर में आग लगा दी जाएगी। बाबा को जब यह ज्ञात हुआ, उन्होंने आत्मदाह के निर्णय को रोक दिया।

संभवत: कनाडा सरकार को उपर्युक्त गतिविधियों की सूचना मिलती रही होगी। इसी कारण सरकार का रुख थोड़ा नरम हुआ। सरकार की ओर से कामागाटा मारू की वापसी यात्रा के लिए जहाज पर खाद्य सामग्री आदि की व्यवस्था की गई, साथ ही उसके किराए का भी दायित्व लिया गया। २३ जुलाई, १९१४ को कामागाटा मारू ने एशिया की ओर प्रस्थान किया। लेकिन अभी यात्रियों की विपदाओं का अंत नहीं होना था। मार्ग में भी यात्रियों को अनेक बाधाओं का सामना करना पड़ा। १६ अगस्त को जहाज योकोहामा पहुँचा। वहाँ भी यात्रियों को उतरने की अनुमति नहीं मिली। १८ अगस्त को जहाज कोबे के लिए रवाना हुआ। २१ अगस्त को वहाँ पहुँचने पर भी उसी स्थिति का सामना करना पड़ा। स्थानीय अधिकारियों द्वारा यात्रियों से असम्मानजनक व्यवहार किया गया। एक और समस्या सामने आई। जहाज का गंतव्य कलकत्ता था। कोबे में ज्ञात हुआ कि अब जहाज को मद्रास जाना होगा। इस सूचना से यात्रियों में उथल-पुथल मच गई। अंतत: कोबे स्थित ब्रिटिश काउंसिल जनरल ने जहाज को कलकत्ता जाने की अनुमति दे दी। जहाज १६ सितंबर, १९१४ को सिंगापुर पहुँचा। वहाँ उसे तट से पाँच मील पहले ही रोक दिया गया। आगे की घटनाएँ इस प्रकार हैं—

२६ सितंबर को कामागाटा मारू कुल्पी पहुँचा। अचानक उसे वहीं रोक दिया गया। दो दिनों तक यात्रियों की तलाशी लेने के बाद उसे कलकत्ता प्रस्थान करने की अनुमति मिली। कलकत्ता से लगभग १७ मील पहले बजबज में उसे पुन: रोका गया। सभी यात्री सशंकित थे। बाबा उपस्थित अधिकारियों से भी मिले, लेकिन कोई संतोषजनक उत्तर नहीं मिला, सिवा इसके कि यात्रियों को जहाज छोड़कर रेल-मार्ग द्वारा पंजाब जाना पड़ेगा। जहाज तथा यात्री दोनों ही पुलिस और सेना के

नियत्रंण में थे। प्रथम विश्वयुद्ध आरंभ हो चुका था। यूरोप में ऐसे भारतीयों की सख्या पर्याप्त थी, जो सशस्त्र क्रांति के द्वारा इस अवसर का लाभ उठाकर भारत में अंग्रेजी राज्य का अंत करना चाहते थे। अत: भारत की अंग्रेजी सरकार ने 'Ingress into India Ordinance' पास करके भारत सरकार को एक विशेष अधिकार प्रदान किया था, जिसके अंतर्गत वह देशवासियों के एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने की स्वतंत्रता को नियंत्रित कर सकती थी। कामागाटा मारू के यात्रियों के साथ यही किया जा रहा था। उनपर संदेह किया जा रहा था कि या तो वे गदरी हैं अथवा गदर आंदोलन से प्रभावित हैं।

संक्षेप में, अधिकांश यात्रियों ने सीधे पंजाब जाने से इनकार कर दिया। यात्रियों ने विभिन्न तरीकों से शासकीय आज्ञा का प्रतिरोध किया। तमाम नाटकीय घटनाओं के उपरांत अंतत: उन्हें पुलिस की गोलियों का सामना करना पड़ा। १८ सिख मारे गए। २९ लापता हो गए तथा शेष बंदी बनाकर बिना अदालती काररवाई के जेल भेज दिए गए। बाबा गुरदित्त सिंह बच निकलने में सफल हो गए। इस सर्च घटनाक्रम में कुछ बातें ध्यान देने योग्य हैं। यात्री निहत्थे थे, क्योंकि बजबज पहुँचते ही पूरे जहाज तथा यात्रियों की तलाशी ली गई थी। यात्रियों का सामान जब्त कर लिया गया था। जहाज से उतरते समय वे खाली हाथ थे। केवल गुरुग्रंथसाहब ही उनके पास था। भोजन-पानी भी उन्हें नसीब नहीं हुआ था।

यह संक्षिप्त घटनाक्रम इस बात का साक्षी है कि यह पूरी यात्रा अत्यंत दु:खद, कष्टप्रद, अपमानजनक, गैर-कानूनी तथा साम्राज्यवादी मानसिकता की पोषक रही। यात्रियों से पशुतुल्य व्यवहार किया गया। संपूर्ण वृत्तांत को विस्तार से पढ़ते समय यात्रियों के कष्ट को महसूस करके हृदय में जो पीड़ा होती है, उसे व्यक्त करने के लिए भाषा असमर्थ है। इससे भी पीड़ादायक यह तथ्य है कि उस समय भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने अंग्रेजी सरकार के इस अन्याय के विरुद्ध एक शब्द भी नहीं कहा, इसके बजाय उसका लक्ष्य प्रथम विश्वयुद्ध में अग्रेजों को सहयोग देना रहा।

इस यात्रा के सूत्रधार बाबा गुरदित्त सिंह की ही सहानुभूति प्रवासी भारतीयों के प्रति थी। उसी कारण उन्होंने उनकी यात्रा के मार्ग में आनेवाली बाधाओं को दूर करने के लिए कामागाटा मारू को किराए पर लिया था। इन यात्राओं से उन्हें भविष्य में अच्छा लाभ भी मिलता। बाबा ने कभी भी कहीं अन्याय और अत्याचार से समझौता नहीं किया। वह यही कहते रहे कि उनका पक्ष कानून के दायरे में है। अत: न उन्होंने रिश्वत दी, न ही विदेशियों के आदेशों का पालन किया और न ही कोई समझौता किया। साम्राज्यवाद ने अपनी शक्ति का भरपूर प्रदर्शन किया, परंतु वह बाबा तथा उनके यात्रियों को झुका नहीं सकी। बाबा ने अपने स्वाभिमान व आत्मसम्मान के साथ कभी कोई समझौता नहीं किया।

बजबज घाट पर यात्रियों की हुई इन निर्मम हत्याओं पर देश-विदेश में बहुत कोलाहल मचा। पंजाब में तो हाहाकार मच गया। प्रवासी भारतीयों का स्वाभिमान पहले ही जाग चुका था, इस घटना ने उसे और अधिक जगा दिया। वहाँ बाबा का खुलकर समर्थन करने के साथ ही गदर आंदोलन की चर्चाएँ भी खुलकर होने लगीं। कनाडा, अमेरिका के गुरुद्वारे इन चर्चाओं का केंद्र बने। सभी इतिहासकारों ने स्वीकार किया है कि कामागाटा मारू की दु:खद घटना ने भारतीय स्वातंत्र्य आंदोलन को नवीन ऊर्जा प्रदान की।

आजादी के बाद १९५२ में भारत सरकार की ओर से बजबज के निकट कामागाटा मारू स्मारक बनाया गया, जिसे 'पंजाबी स्मारक' के नाम से जाना जाता है। स्मारक के बनने के बाद इस घटना की निंदा तथा इसके लिए क्षमा-याचना करने की लहर सी आ गई। अगस्त २००८ में कनाडा के प्रधानमंत्री हार्पर ने 'गदरी बाबियाँ द मेला' नामक उत्सव में कनाडा इतिहास के उस लज्जाजनक प्रसंग पर शोक प्रकट किया। २३ मई, २००८ को ब्रिटिश कोलंबिया की विधानसभा में एक स्वर से यह प्रस्ताव पारित किया गया—''यह विधानसभा २३ मई, १९१४ की घटना के लिए खेद प्रकट करती है, जब कामागाटा मारू के ३७६ यात्रियों को कनाडा द्वारा प्रवेश की अनुमति नहीं दी गई। यह सदन उन यात्रियों के लिए गहरा शोक प्रकट करता है, जिन्होंने हमारे देश में शरण लेनी चाही, लेकिन उन्हें इनकार कर दिया गया, वह भी ऐसे समाज द्वारा, जहाँ सभी संस्कृतियों के लोगों का स्वागत किया जाता है और उन्हें स्वीकार किया जाता है।'' इस वक्तव्य के ठीक आठ वर्ष बाद अभी २० मई, २०१६ को एक महत्त्वपूर्ण समाचार प्रकाशित हुआ कि ''कनाडा सरकार ने १०२ साल के बाद भारतीय लोगों के साथ हुए अन्याय के लिए उनसे माफी माँगी है। प्रधानमंत्री जस्टिन ढक ने बुधवार को संसद् में खड़े होकर १०२ साल पहले की गलती को गंभीर अन्याय बताते हुए भारतीय समुदाय से माफी माँगी।'' उन्होंने कहा, ''पूरा घटनाक्रम अफसोसजनक था। इसके लिए हमें खेद है। (जागरण, २०/०५/२०१६; पृ. २०)। प्रधानमंत्री के इस सदाशयतापूर्ण वक्तव्य से हृदय द्रवित हो उठा।

२००४ में अली काजिमी ने 'कॉण्टिनिअस जर्नी' नामक एक डॉक्यूमेंटरी फिल्म बनाई थी, जिसे अनेक पुरस्कार मिले। इसमें संदेह नहीं कि आज भी इस लोमहर्षक यात्रा की यादें लोगों के जहन में सुरक्षित हैं। ये यादें जब भी हमारे सामने आती हैं, हमें विचलित करती हैं, तब तत्कालीन शायर लाल चंद्र 'फलक' की तरह यह कहने को मन होता है—

*''हम तेरे मुल्क। से अय्यार चले जाते हैं।*
*ले सँभाल अपना तू घर-बार चले जाते हैं।*
*बेधड़क आते हैं यहाँ चीन-जापान के लोग,*
*वापिस एक हिंद के नादार चले जाते हैं।*
*बिजलियाँ बनके तेरे सिर पर गिरेंगी जालिम,*
*बिजलियों के जो भरे तार चले जाते हैं।''*

७४ कैंट, कानपुर-२०८००४
दूरभाष : ०९७९२७३३७७७

राम झरोखे बैठ के

# बड़े साहित्यकार का संकट

● गोपाल चतुर्वेदी

इससे कौन इनकार कर सकता है कि वह साहित्य का बड़ा और ऊँचा झाड़ है? ऐसा नहीं है कि बड़ा बनने का रास्ता आसान है। पहले कभी रहा होगा। अब तो पेड़ को भी लगातार देखभाल की जरूरत है। आसपास प्रदूषण है और जमीन में इतनी दीमक कि बीज या नन्हे पौधे को उगते ही चट कर जाए। तब इतना प्रदूषण अथवा प्रतियोगिता कहाँ थी? अच्छा लिखना ही काफी था, नाम और प्रसिद्धि पाने को। अब तो बाकायदा युद्धरत खेमे बन गए हैं साहित्य में। जितने दल देश की सियासत में सक्रिय हैं, साहित्य में उससे कम नहीं हैं। कोई आश्चर्य नहीं होगा, यदि कुछ ज्यादा ही हों! कोई अगर श्रेष्ठ लिख भी रहा है, तो क्या हुआ? पहले साहित्यिक जिज्ञासु पता करेंगे कि वह किस खेमे का है? अपने का होता तो खबर होती। आका को फर्शी लगाता, उनसे प्रमाण-पत्र लेता। शर्तिया विरोधी कैंप का है। इसमें प्रतिभा कैसे संभव है? बस रोजमर्रा की साहित्यिक महाभारत में स्वयं को निर्णायक मानकर वह उसे कौरव ही नहीं, उनका आका दुर्योधन भी घोषित कर दें, तो ताज्जुब नहीं है।

यों दुर्योधन घोषित होकर भी खुश होनेवालों की कमी नहीं है लेखकों में। यदि विरोधियों ने सौ में से एक माना तो इतना ही क्या कम है? लंका में आम राक्षस होने से बेहतर है, लंकेश्वर रावण होना। कम-से-कम खुद को राम समझनेवालों से उसकी सीधी टक्कर तो होगी, फिर ख्याति का भी प्रश्न है। सीता-हरण करना क्या सबके वश में है? अगर राक्षस ही बनना है तो सामान्य होने में क्या धरा है? वर्तमान समय में कन्या-हरण तो एक आम वारदात है। यदि लेना ही है तो किसी सत्ताधारी की पत्नी या पुत्री के साथ पंगा लेना है, वरना अखबार की सुर्खियों में स्थान पाने की संभावना कम ही है।

बड़े लेखक की दिक्कतों का अंत यहीं नहीं है। खेमाहीन का बड़ा बनना कठिन है। वह सफलता के उसूलों को झुठलाकर कैसे आगे बढ़े? लिहाजा, उसे हर खेमे के साथ जुड़ाव का प्रदर्शन करना है। खग जाने खग की ही भाषा। वह हर खेमे के सन्मुख उसके चुने हुए प्रिय शब्दों का ही प्रयोग करता है। अब वह कभी प्रगतिशील है, कहीं राष्ट्रीयता से ओतप्रोत। कभी सेक्युलर तो कभी मंदिर के सामने सिर झुकाए। इसमें कुछ गलत भी नहीं है। पर विवशता है। धर्म-निरपेक्ष भारतीय नीति-निर्माताओं ने सेक्युलर को धर्म का दर्जा दे दिया है।

अब जैसे कोई हिंदू है या ईसाई है, वैसे ही सेक्युलर है। तरक्कीपसंद वही हो सकता है जो सेक्युलर हो। कोई भी रेगुलर हिंदू सेक्युलर की गिनती में आने के काबिल नहीं है। जैसे सियासत का विभाजन है, वैसे ही साहित्य का भी। बड़े साहित्यकार का बड़प्पन यही है कि वह सबको उन जैसा दिखता है। इसे कोई शब्दों का ढोंग कहे या व्यवहार का स्वाँग, पर जीवन के नाटक में यह उसकी नामचीन कामयाबी है।

उसके मुखौटों के छिपे मुख की पहचान कठिन ही नहीं, असंभव है। वह कहता भी है कि उसकी प्रतिबद्धता इनसान से है, उस पर चस्पा लेबल से नहीं। यों वह स्वार्थसिद्धि के हर सत्ताधारी लेबल के साथ है। इस मामले में उसकी ऐसी सिफत है कि रंग बदलते गिरगिट भी उससे प्रशिक्षण लें। जिधर उसे सत्ता का सूरज उगता दिखता है, वह समय का ऐसा सच्चा सूरजमुखी है कि अपने साहित्यिक जुड़ाव को पीठ दिखाकर, उसी दिशा में रुख करने में समर्थ है। मीन-मेख के कई धुरंधर इसी प्रतिभा को उसकी सफलता का राज बताते हैं। कुछ की मान्यता है कि वह खोजू प्रतिभा का धनी है। तभी तो उसने खोज-खोजकर हर छोटे-बड़े पुरस्कार को हथियाया है। कई प्रशंसक इस मत के हैं कि वह सही समय पर धरती पर अवतरित हुए हैं। कहीं सूर-तुलसी के जमाने में पैदा हुआ होता, तो बिना सम्मान-पुरस्कार के क्या पता आत्महत्या कर लेता!

बहरहाल, वह जीवित ही नहीं, उसके लेखन को कालजयी बतानेवालों का भी अभाव नहीं है। कुछ के अनुसार वह खुद युग-प्रवर्तक है। उस पर शोध करनेवालों का मानना है कि उनका उससे अधिक विनम्र व्यक्ति से शायद ही पाला पड़ा हो। वह स्वयं अपने बारे में लेखों की फोटोप्रति, चाय-पकौड़ी के साथ उन्हें समर्पित करता है, यह कहते हुए कि वह मिष्टान्न भी उन्हें अवश्य खिलाता, पर देश में बढ़ते हुए मधुमेह के प्रति सजग है और नहीं चाहता है कि युवा उसके समान इस रोग से सताए जाएँ। आज के इस स्वार्थी संसार में परमार्थ को समर्पित ऐसे व्यक्ति कहाँ मिलेंगे?

उसने देश की हर समस्या पर सारगर्भित लेखन किया है। हर बड़े लेखक के समान वह अपने लेखन के विषय का गंभीरता से अध्ययन करता है। जब उसने भारतीय समाज में महिलाओं की भूमिका पर लिखने का मन बनाया तो उनके पास और नजदीक जाकर ऐसा करीबी अध्ययन किया कि उसकी पत्नी अलग रहने के कगार पर आ गई। जब यह

विवाद निजी से किसी खोजू साहित्यकार की अनुकंपा से सार्वजनिक हो गया, तो बड़े साहित्यकार ने बयान दिया, ''यह सब किसी के दूषित मन के दुराग्रहों की शरारत है। मैं और मेरी पत्नी साथ हैं और हमेशा साथ रहेंगे। यह व्यर्थ में मेरे चरित्र पर कीचड़ उछालने का प्रयास है। इसे होली बीतने के बाद की मूर्खतापूर्ण भ्रामक ठिठोली की संज्ञा ही दी जा सकती है।''

इसी बीच महिलाओं की एक संस्था ने लेखक की अनैतिक हरकतों के खिलाफ मोर्चा खोल दिया है। अब वह जिस भी समारोह में पधारते हैं, महिला मोर्चा उनकी 'हाय हाय' करता है। वह इसे कुछ विरोधियों द्वारा प्रेरित उनके चरित्र हनन की ऐसी असफल साजिश बताते हैं, जिसकी सफलता की कोई संभावना नहीं है। इससे एक सुखद परिवर्तन आया है। पहले वह अकेले जाते थे। अब वह हर समारोह में अपनी पत्नी को ले जाना नहीं भूलते हैं। उनके मन में ऐसा अपराध-बोध है कि मिलना तो दूर, लेखिकाओं से वह कतराते हैं।

**साहित्यकार ने अपने लेखन में बाजार की खूब धज्जियाँ उड़ाई हैं। उसने कुछ दुकानों को 'भला और विश्वसनीय' बनाकर उनका माल भी मुफ्त में पाया है। जो मौका चूके, वह बड़का साहित्यकार कैसा? जो गुणवत्ता में धनी होकर भी बड़े न बन पाए, वह हर अवसर को भुनाने की कला में अनभिज्ञ होने से गुमनामी के अँधेरे से रोशनी की सफलता का सफर तय करने में असमर्थ रहे हैं, वरना उसके प्रतियोगी होते। बहरहाल, उसने बाजार से ब्रांड बनने का गुण सीखा है। यह आवश्यक है कि माल में गुणवत्ता हो, तभी वह प्रचार के माध्यम से ब्रांड का दर्जा हासिल करने में कामयाब है। नहीं तो गुणवत्ता वाला माल भी बिना प्रचार धरा का धरा रह जाता है दुकानों पर।**

कुछ जानकारों का आरोप है कि यह उदासीनता केवल एक दिखावा है। एक मित्र प्रकाशक ने उनकी अधिकतर पुस्तकें छापी हैं। वह उसकी गृह-पत्रिका से जुड़े हैं। प्रकाशक के सौजन्य से वहाँ उन्होंने एक दफ्तर बना लिया है। यहाँ उनकी चहेतियों का साम्राज्य है। उनकी हैसियत इस लीला केंद्र में उस बूढ़े कन्हैया की है, जो खुद तमाशा बन चुका है। अब गोपियाँ उससे छेड़छाड़ करती हैं। उसका मजाक उड़ाना उनकी दैनिक चर्या का अंग है।

जिस लगन से उसने महिला समस्याओं पर लेखन के लिए उन पर ध्यान दिया है, वैसे ही बाजार पर। बाजार की ओर उसका ध्यान सबसे पहले 'वैलेंटाइन डे' के कारण आकृष्ट हुआ। उसके बाद तो मदर, फादर, पत्नी, पति जैसे दिवसों की बाढ़ आ गई। उसे एहसास हुआ कि यह सारी बहूद्देशीय कंपनियों की साजिश है, अपना सामान बेचने के लिए। बाजार दृढ निश्चय से पारंपरिक जीवनपर्यंत संबंधों पर कुल्हाड़ी चलाने से बाज नहीं आ रहा है। कितना हास्यास्पद है कि एक दिन कोई 'मदर्स डे' मनाकर बूढ़ी माँ को पूरे साल के लिए भुला बैठे? या फिर पति और पत्नी एक घटिया गिफ्ट देकर वर्ष में एक बार प्रेम जताएँ और फिर पूरे साल स्वच्छंदता से वैवाहिक बंधन से आजाद रहें।

उसे यह भी खयाल आया कि बाजार में प्रचार आवश्यक है। इसीलिए जब अपनी आकर्षक मुसकान फेंकती किसी सुंदरी की तस्वीर हाथ में प्रचारित टूथपेस्ट दिखाते छपती है, तो देखनेवालों के अवचेतन में उसका आकर्षण और वह टूथपेस्ट गड्ड-मड्ड हो जाते हैं। 'यदि सुंदर दिखना है तो इसी दँत-मंजन का प्रयोग करना है।' सुंदरी के चक्कर में हमारे समझदार साहित्यकार पर ऐसा दुष्प्रभाव पड़ा है कि वह अनजाने में ही इस प्रचारित पेस्ट का प्रयोग करने लगा है। बाजार के असर से वह पत्नी को जन्मदिन और 'वाइफ्स डे' पर उपहार पेश करता है। इसका एक लाभ भी है। पत्नी को पीठ पीछे धोखा देने का उसका अपराध-बोध कुछ कम-सा हो जाता है।

इसके 'साइड इफेक्ट' और भी हैं। लड़कियाँ उसे शेखचिल्ली समझती हैं। वह उनकी खिल्ली का पात्र है। बात तब हद से गुजर गई, जब एक लड़की ने पीछे से उनकी गंजी होती खोपड़ी पर तबला बजाने का अभिनय किया और सामने बैठी उसकी सहेलियाँ अचानक 'खीं-खीं' करने लगीं। इस अनपेक्षित व्यवधान से नवलेखन पर साहित्यिक प्रवचन करता साहित्यकार चौंका और बोला, ''क्या हो गया?'' उसके सवाल से कमरे में सन्नाटा छा गया। कोई क्या उत्तर देता? सच्चाई हमेशा खतरनाक होती है। उसे कौन बताता कि मधु उसकी गंजी चाँद पर पीछे खड़े होकर तबला बजाने का हवाई अभ्यास कर रही थी।

हर हरकत की उम्र होती है। जो यौवन में स्वाभाविक लगता है, वही अधेड़ावस्था में अरुचिकर। साहित्यकार की कन्या-रुचि अब वैसी ही मनोरंजक है, जैसे कोई धीर-गंभीर दिखनेवाला मोटा शिक्षाशास्त्री या थानेदार रात को शराब के नशे में काल्पनिक संगीत की धुन पर भीड़ भरे चौराहे की शोभा बढ़ाकर ठुमके लगाए। आसपास मजमा लगना लाजमी है। यह भी लाजमी है कि कोई पियक्कड़ को घर पहुँचाकर इस दिलकश नजारे के अंत का प्रयास न करे। वर्तमान का सर्वव्यापी मीडिया इस आह्लाद की सार्वजनिक आग में आहुति डालने की भूमिका निभाता है। ओबी वैन और कैमरे की प्रेरणा से दर्शक और जोर से खिलखिलाते हैं। बिना वरदी का थानेदार भी सामान्य तुंदियल अधेड़ लग रहा है और प्राध्यापक-शिक्षाशास्त्री भी। वैन के साथ आई लड़की ने एक सज्जन से सवाल किया, ''आप जानते हैं कि यह नृत्य कला के थिरकते आराधक कौन हैं?'' वहाँ सब इन हस्तियों से अनजान थे। बहरहाल 'शहर की हलचल' में इस दिलकश मुफ्तिया प्रदर्शन को स्थान मिल गया। नतीजतन, एक कॉलेज और दूसरा थाने से निलंबित हो गया है।

साहित्यकार ने अपने लेखन में बाजार की खूब धज्जियाँ उड़ाई हैं। उसने कुछ दुकानों को 'भला और विश्वसनीय' बनाकर उनका माल भी मुफ्त में पाया है। जो मौका चूके, वह बड़का साहित्यकार कैसा? जो गुणवत्ता में धनी होकर भी बड़े न बन पाए, वह हर अवसर को भुनाने की कला में अनभिज्ञ होने से गुमनामी के अँधेरे से रोशनी की सफलता का सफर तय करने में असमर्थ रहे हैं, वरना उसके प्रतियोगी होते। बहरहाल, उसने बाजार से ब्रांड बनने का गुण सीखा है। यह आवश्यक है कि माल में गुणवत्ता हो, तभी वह प्रचार के माध्यम से ब्रांड का दर्जा हासिल करने में कामयाब है। नहीं तो गुणवत्ता वाला माल भी बिना प्रचार धरा का धरा

रह जाता है दुकानों पर।

आज हर सामान्य कलमघिस्सू भी इस प्रबल आत्मविश्वास के साथ कागज काले करता है कि वह कालजयी साहित्य का रचयिता है। सब बाजार से परिचित होने के कारण धुआँधार प्रचार में जुटते हैं। उनके लेखन का माल घटिया होने की वजह से शायद ही एकाध अपवाद सिर्फ प्रचार से कामयाब हो पाता है।

बड़े साहित्यकार का अरमान बाजार की नकल पर लेखन का ब्रांड बनना रहा है। इसके लिए उसने समानधर्मा लेखकों की टोली एकत्र की। उनमें से दो प्राध्यापक थे। दोनों शिक्षा के पारंपरिक पीठ-खुजाई के जरिये पैसा कमाने के सिद्धांत में पारंगत। परीक्षा के परीक्षकों का चयन इसी लेन-देन के उसूल पर होता है कि आप हमें परीक्षक बनाओ, हम आपको। दोनों कमाएँ, भले ही छात्रों के भविष्य का निर्णय अपने चेलों से करवाएँ। इसी उसूल को अपनाकर सब एक-दूसरे के प्रचार में भिड़ गए। दीगर है कि वह अपनी लेखकीय काबिलीयत के कारण आगे पहले भी था और प्रचार की वजह से और ज्यादा जाना जाने लगा। पीछे छूटों का जलना-भुनना स्वाभाविक है।

बड़े साहित्यकार होने के अन्य लाभ भी हैं। कुछ को हर प्लेट का चमचा बनने का शौक है। उसकी प्लेट भी बिना किसी प्रयास के चमचों से भर गई है। चमचे निरुददे्श्य दृश्य तो घेरते नहीं हैं। सबका स्वार्थ है। कोई सम्मान पाकर पहचान का भूखा है तो कोई लेखक का नजदीकी बनकर प्रचार का। कोई अपने लेखन का प्रमाण-पत्र पाने का तलबगार है तो कोई संस्तुति लिखवाकर पुरस्कार का। चमचों का आग्रह स्वीकार करते-करते उसके हाथ दु:ख गए हैं। उसने चमचा-संस्कृति का जमकर विरोध किया है। आज वह स्वयं उसका शिकार है। इधर चमचों के शोर से उसके कान पक गए हैं। चमचों में कुछ खास हैं, कुछ आम। सबकी अपनी-अपनी अपेक्षाएँ हैं। उनमें आपसी डाह और बैर भी है। कुछ आम, खास बनने की कोशिश में हैं, कुछ खास ऐसों को रोकने की। इस संघर्ष और अर्थहीन हलचल में ब्रांड बनना तो दूर, बस उसके आसपास बैंड सा बज रहा है, कभी गाली-गलौज तो कभी अर्थहीन कोलाहल का। लेखन के एकाग्र पल अब उसे मुहाल हैं। वह स्वयं अनिर्णय में है कि क्या करे?

कभी-कभी अकेले में वह सोचता है कि जीवन की अहर्निष भाग-दौड़, जुगत-जुगाड़ ने उसे दिया क्या है, चंद पुरस्कार। सम्मान, पहचान के अलावा? हिंदी की खासियत है कि वह अपने दिग्गज लेखकों को भी भूलने में माहिर है। क्या पाठक उसे याद रखेंगे, ब्रांड बनने के वाबजूद या बिना ब्रांड बने भी? फिलहाल वह चमचों से छुटकारा पाना चाहता है। वह उसे मन-ही-मन भाते हैं, पर सताते भी हैं, उसके लेखन का स्थायी अवरोध बनकर। उन्हें बरदाश्त करना क्या उसकी विवशता है?

साहित्यकार का विचार है कि उसका साहित्य राष्ट्रीय संपत्ति है, जिसके एवज में उसकी आर्थिक देखभाल जैसे अकादमियों की अध्यक्षता, समितियों की सदस्यता, लाखों के पुरस्कार आदि सरकार का कर्तव्य है। हमें डर है। उसका सर्वथा निजी संकट कहीं साहित्य के राष्ट्रीय संकट में तब्दील न हो जाए।

९/५, राणा प्रताप मार्ग
लखनऊ-२२६००१

## लेखकों से अनुरोध

- मौलिक तथा अप्रकाशित-अप्रसारित रचनाएँ ही भेजें।
- रचना फुलस्केप कागज पर साफ लिखी हुई अथवा शुद्ध टंकित की हुई मूल प्रति भेजें।
- पूर्व स्वीकृति बिना लंबी रचना न भेजें।
- केवल साहित्यिक रचनाएँ ही भेजें।
- प्रत्येक रचना पर शीर्षक, लेखक का नाम, पता एवं दूरभाष संख्या अवश्य लिखें; साथ ही लेखक परिचय एवं फोटो भी भेजें।
- डाक टिकट लगा लिफाफा साथ होने पर ही अस्वीकृत रचनाएँ वापस भेजी जा सकती हैं। अतः रचना की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- किसी अवसर विशेष पर आधारित आलेख को कृपया उस अवसर से कम-से-कम तीन माह पूर्व भेजें, ताकि समय रहते उसे प्रकाशन-योजना में शामिल किया जा सके।
- रचना भेजने के बाद कृपया दूरभाष द्वारा जानकारी न लें। रचनाओं का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय होगा।

कहानी

# जीवन की सार्थकता

● गोपाल नारायण आवटे

रचना के परीक्षा परिणाम कल सुबह घोषित होने वाले हैं। न जाने क्यों, रात इतनी लंबी लग रही है, लग रहा है मानो सुबह होगी ही नहीं। मैं न जाने कितनी शंका-कुशंकाओं को मन में समेटे परिणाम की प्रतीक्षा कर रही हूँ।

शाम को जतिन और भूमिका का फोन भी आया था, उन्होंने भी पूछा था कि रचना के परीक्षा परिणाम कब आएँगे? कुछ औपचारिक बातें करते-करते मेरा गला भर आया तो उन्होंने 'सॉरी' कहकर फोन काट दिया था। अजीब सा खालीपन चारों ओर व्याप्त है। लगता है, आसमान का सूनापन मेरे जीवन में घुल गया हो। सबकुछ लगता है मानो कल की ही बात हो। जब मैं विचार करती हूँ तो आँखों से झर-झर आँसू बहने लगते हैं। मैं भी विचार करती हूँ कि किसी से अपने दु:ख को नहीं बताऊँगी, लेकिन ये गिरते आँसू चुगली कर देते हैं। पतिदेव ने कई बार काँधे का सहारा दिया, सँभाला भी, लेकिन उनके काँधे को आँसुओं से ही गीला कर दिया था।

सुबह जब अखबारवाला घर में अखबार फेंककर गया, तो दौड़कर मैंने उसे उठा लिया, पास में ही यह आकर खड़े हो गए थे। रचना···रचना मैंने उसे समूचा खोज लिया, लेकिन नंबर तो कहीं था ही नहीं। मैं उदास हो गई, तब इन्होंने अखबार लिया और चौंक गए, ''अरे, पूरे प्रदेश में सेकेंड टॉप पर रही—ये देखो फर्स्ट पेज पर उसका फोटो।'' हँसती-मुसकराती रचना का फोटो था। रचना के फोटो और उसके इतने अधिक नंबर लाने पर मैं जोरों से रो पड़ी। आशीष ने मुझे अपने पास कर लिया। ये आँसू खुशी के थे या दु:ख के, मैं समझ नहीं पा रही थी, लेकिन मैं रो रही थी बहुत जोरों से। तब ही जतिन और भूमिका के फोन भी आ गए!''

''बधाई हो, बधाई हो!''

''धन्यवाद,'' मेरे मुँह से निकला, लेकिन यह धन्यवाद कहना कितना खोखला था, यह मैं जान रही थी। अखबार मेरे हाथों में था और वह रचना का फोटो भी, जिसे मैंने सीने से लगा रखा था। रचना प्रदेश में सेकेंड टॉप आई थी और मैं दु:ख मना रही थी। अपने आँसू पोंछकर चाय बनाई और आशीष को दी, वह बहुत चालाक है—अपने आँसुओं को चुपचाप पी जाता है, एक शब्द भी नहीं कहता, लेकिन उन्हें देखकर मैं समझ गई थी कि किचन में जब मैं गई थी, तब वह जी भर कर रो लिये थे।

सुबह हो चुकी थी, एक दर्जन से अधिक फोन बधाइयों के आ चुके थे। आशीष कार्यालय जाने को निकल गए थे। मैं अपने बँगले में अकेली रह गई थी। काम करनेवाली को भी मैंने हटा दिया था, ताकि मैं स्वयं काम करके अपने समय को काट सकूँ। मैं ड्राइंग-रूम में आकर बैठ गई। सामने खिड़की खुली हुई थी और नीम का पेड़ अपनी छाँव धरती पर फैला

सुपरिचित कथाकार। अब तक छब्बीस कहानी-संग्रह, पाँच व्यंग्य-संग्रह, दो नाटक, सात उपन्यास, पाँच कविता-संग्रह एवं ढेरों संपादित कृतियाँ। 'डॉ. भीमराव अंबेडकर राष्ट्रीय सम्मान', 'डॉ. अंबिका प्रसाद वर्मा दिव्य पुरस्कार', 'राष्ट्रीय साहित्य गौरव सम्मान', 'रत्न भारती सम्मान' सहित डेढ़ दर्जन पुरस्कार प्राप्त।

रहा था, उसमें लगे नन्हे-नन्हे सफेद फूलों की खुशबू में अजीब सी कड़वाहट थी, जो साँसों में भरने पर भी बुरी नहीं लगती है। स्मृतियों के पुष्प नीम के सूखे पुष्पों की तरह झरने लगे थे। हल्की हवा के झोंके के साथ ढेर सी स्मृतियाँ आ रही थीं। कानों में रचना की आवाज थी। बेटी का बिछोह कोई माँ से पूछे, क्योंकि रचना मेरी बेटी ही नहीं, सहेली भी थी। हमेशा हँसती, गीतों को गुनगुनाती वह नकल करती थी। जब शाम को हम एकत्र होते तो वह पुरानी फिल्मों के कलाकारों की हूबहू नकल करती थी। आशीष और मैं हँस-हँसकर लोटपोट हो जाते थे। परिवार में हम एक और हमारी एक के नियम को लागू करके रचना के अतिरिक्त हमारी कोई संतान नहीं थी। वह पढ़ाई में औसत थी, लेकिन कब पढ़ाई कर लेती थी, ज्ञात ही नहीं होता था। मैं नाराज होकर कहती थी, 'पढ़ाई कर ले, वरना फैल हो जाएगी।'

'आज तक कभी फैल हुई?' वह उल्टा प्रश्न करती थी।

'अच्छे से पढ़ाई कर ले, बढ़िया नौकरी मिल जाएगी।' मैं उसे कहती तो वह गले में बाँहें डालकर प्रतिप्रश्न करती, 'मम्मी, आपने तो पी-एच.डी. किया है, फिर नौकरी क्यों नहीं की? छोड़ो ये नौकरी, मैं तो अच्छे पढ़े-लिखे बढ़िया नौकरीवाले से शादी करूँगी, ऐश, मम्मी ऐश!' वह बहुत नाटकीय ढंग से कहती। मैं गुस्सा भी होती और नाराज भी, 'नालायक सुधर ले।'

'बिगड़ी कहाँ हूँ, मम्मी।' हँसते हुए कहती, 'देखो ना, आपने भी इतनी पढ़ाई करके पापा के साथ ही जीवन काट दिया, मैं भी अपनी माँ के बताए रास्ते पर ही चलूँगी।' हवा में हँसी और मस्ती तैर जाती थी।

पूरे घर की रोनक रचना थी। कभी वह चुप रहती तो आशीष और मैं बहुत चिंतत हो जाते थे। एक बार उसने हँसकर कहा, 'मम्मी तुम मेरी शादी कर दोगी, उसके बाद अकेले कैसे रहोगी?'

'इसी शहर में लड़का देखूँगी, ताकि तू आती-जाती रहे।'

'ओह, लंबी प्लानिंग है। मम्मी, वैसे भी मैं कभी तुमसे दूर नहीं जाऊँगी' कहकर वह लिपट गई थी। मैं उसके बालों में हाथ फेरने लगी थी। यह वह क्षण होते थे, जो जीवन में हमेशा अमर होते हैं, जहाँ माँ का

स्नेह पुत्री में प्रवाहित होता है।

परीक्षाएँ प्रारंभ हो चुकी थीं। रचना अपनी पूरी ताकत लगाकर पढ़ाई में जुटी हुई थी। जब भी वह पेपर देकर आती, मैं पूछती, 'पेपर कैसा रहा?'

'मम्मी, सब ही छात्र-छात्राएँ एक ही उत्तर देते हैं, अच्छा रहा और फेल हो जाते हैं।' कहकर वह हँस दी थी।

'लेकिन मैं जानती हूँ, तू फेल नहीं होगी।' मैंने कहा था।

'थैंक्यू मम्मी, सच तो यह है कि मैं जीवन में कभी असफल होना नहीं चाहूँगी, मुझे असफलता से घृणा है।'

'बिटिया, असफलता जीवन की सफलता की प्रथम सीढ़ी है, जैसे अँधेरे के साथ प्रकाश, सुबह के साथ शाम, जीवन के साथ मृत्यु, उसी तरह सफलता के साथ असफलता जुड़ी होती है।' मैंने उसे समझाया।

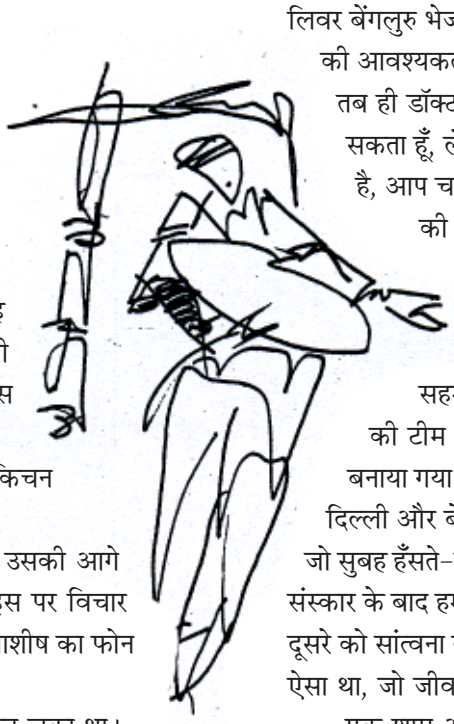

वह बच्चों की तरह ललककर कहने लगी, 'मम्मी, मैं प्रकाश को पसंद करती हूँ, मैं सुबह को पसंद करती हूँ, मैं जीवन को पसंद करती हूँ, मैं मौत के बाद भी जीवन जीने में विश्वास करती हूँ।' बड़ी दृढता से उसने कहा।

'पगली कहीं की!' कहकर मैं उठकर किचन में चली गई थी।

अंतिम पेपर देने वह गई और हम अब उसकी आगे की पढ़ाई हेतु कौन सा कॉलेज ठीक रहेगा, इस पर विचार कर रहे थे। लगभग ग्यारह बजे के आसपास आशीष का फोन आया कि 'तुरंत अस्पताल पहुँचो।'

'आखिर बात क्या है?' लेकिन फोन कट चुका था।

मैंने दरवाजे बंद किए और ऑटो से तुरंत अस्पताल की ओर निकल पड़ी। मुझे आशीष दरवाजे पर ही मिल गए, 'क्यों क्या बात है?' मैंने चिंता से भरे स्वर में पूछा।

'प्लीज अंदर चलो।' मैं आशीष के पीछे-पीछे धड़कते दिल से चल पड़ी। आई.सी.यू. में रचना बेहोश पड़ी थी। मैं चीख पड़ी। आशीष ने मुझे सँभाला और कहा, 'इसकी स्कूटी एक कार से टकरा गई थी, यह आठ-दस फीट दूर जा गिरी।'

'अब कैसी है?'

'वह ठीक नहीं है, उसका ब्रेन डेड हो गया है, मशीनों के सहारे जीवित है।' बहुत कठोर हृदय से आशीष ने मुझे बताया।

'इसका मतलब?' मैंने बात अधूरी छोड़ दी थी।

'बिल्कुल सही सोच रही हो, हमारी बेटी अब जीवित नहीं रहेगी।' आशीष ने कहा तो मैं चीख पड़ी, 'ऐसा मत कहो, कोई-न-कोई चमत्कार होगा और वह बोल उठेगी।'

'ऐसा नहीं होगा, यह सच्चाई है।' कहकर स्वयं आशीष रो उठा था। हमारी बातचीत में डॉ. संजीव कुमार दो-तीन बार आकर कुछ कहने की चेष्टा करते हुए दिखलाई दे रहे थे। मैं जोरों से रो रही थी। अचानक कानों में रचना की वह बात सुनाई दी, 'मम्मी, मैं मरने के बाद भी मरना नहीं चाहती, लेकिन अब क्या संभव है?'

आशीष ने मुझे सांत्वना देते हुए कहा, 'मैं तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा था।'

'क्यों?'

'डॉक्टर ने मुझे समझाया है कि यदि आप अपनी बेटी का लिवर, हार्ट दान करना चाहें तो हमें ग्रीन कोरीडोर बनाकर तुरंत हार्ट दिल्ली और लिवर बेंगलुरु भेजना होगा, क्योंकि वहाँ दो ऐसे मरीज हैं, जिन्हें ऐसे अंग की आवश्यकता है।'' कहकर आशीष मेरे चेहरे की ओर देखने लगा, तब ही डॉक्टर भी पास आ गए, 'मैडम, मैं आपके दु:ख को समझ सकता हूँ, लेकिन आपकी बेटी का ब्रेन पूरी तरह से डैमेज हो चुका है, आप चाहें तो दो व्यक्तियों को जीवन मिल सकता है।' डॉक्टर की आवाज में अजीब सा निवेदन था।

मेरे कानों में रचना की पुन: वही आवाज गूँजी, 'मैं मरने के बाद भी जीना चाहती हूँ।'

आखिर रचना का अंतिम दर्शन करके मैंने भी सहमति दे दी थी। तत्काल उसे ओ.टी. में ले गए। डॉक्टरों की टीम आ गई थी। प्रेस के लोग आ गए, एक ग्रीन कोरीडोर बनाया गया और लगभग आधे घंटे में ही रचना का दिल, लिवर को दिल्ली और बेंगलुरु भेज दिया गया। रचना की देह को हम ले आए। जो सुबह हँसते-खेलते गई थी, वह पीली पड़ी, चुपचाप पड़ी थी। अंतिम संस्कार के बाद हम दोनों पति-पत्नी बहुत अकेले हो गए और दोनों एक-दूसरे को सांत्वना देते रहे। समय घावों को भर देता है, लेकिन यह घाव तो ऐसा था, जो जीवनभर हरा रहता।

एक शाम अचानक जतिन नाम के किसी युवक का फोन आया। आशीष ने ही उससे बात की, लेकिन मैं नहीं समझ पाई कि आखिर आशीष बात करते-करते क्यों रो पड़ा था?

'क्या बात हो गई आशीष?' मैंने आशीष से पूछा। हाथ में फोन रखे-रखे ही उसने कहा, 'जानती हो उस तरफ कौन है?'

'कौन है?' मैंने आश्चर्य से पूछा।

'रचना, अपनी बेटी।'

'क्या कह रहे हो?'

'हाँ, रचना का दिल बोल रहा है।'

'क्या मतलब?' मैंने घोर आश्चर्य से प्रश्न किया।

'तुम ही बात करो।' कहकर आशीष ने फोन मुझे दे दिया।

'हैलो मम्मीजी, नमस्ते'

'कौन?'

'मैं जतिन बोल रहा हूँ।'

'कौन जतिन?'

'बेंगलुरु से, जिसे रचना दीदी का हार्ट लगाया गया है।' जतिन ने कहा।

'ओह, कैसे हो बेटा?'

'मैं एकदम ठीक हूँ, डॉक्टर ने अभी रेस्ट करने को कहा है, ठीक होते ही मैं आऊँगा।' उधर से भावुकता भरी आवाज थी।

'जरूर-जरूर, अपना ध्यान रखना बेटा।'

'जी मम्मीजी', कहकर फोन कट गया।

मैं विचित्र भावों से भर गई थी। आशीष के चेहरे को देख रही थी। हम दोनों के मध्य मौन पसरा था, लेकिन इस मौन के बाद भी हम एक-दूसरे को समझ रहे थे।

ठीक दो दिनों बाद सुबह-सुबह यह बाथरूम में थे और मैं किचन में थी, तब फोन की घंटी बजी। मैंने फोन उठाया तो उधर से आवाज आई कि मुझे रचना की मम्मी से बात करनी है।'

'मैं ही बोल रही हूँ, लेकिन बेटी, वह अब इस दुनिया में नहीं है।' मेरी आवाज भीग गई थी। शायद रचना की सहेली होगी। सोचा फोन काट देगी, लेकिन ऐसा हुआ नहीं, उसने बहुत शांत स्वर में कहा, 'मम्मीजी, आप यह कैसे कह सकती हैं कि वह इस दुनिया में नहीं है, उसका लिवर मेरे शरीर में काम कर रहा है, मैं दिल्ली से भूमिका बोल रही हूँ।'

'ओह! तुम हो, कैसी हो बेटी?' मेरी आवाज काँप रही थी।

'मम्मीजी, मैं ठीक हूँ, आपका फोन नंबर मिल गया तो थैंक्स कर रही हूँ। बहुत जल्दी मैं आऊँगी, अगर आप भी दिल्ली आएँ तो यहीं ठहरें, यह जान लें कि एक बेटी आपकी यहाँ पर भी है।'

'जरूर-जरूर, अपना ध्यान रखना,' कहकर मैं आगे कुछ नहीं बोल पाई थी। गला रुँध गया था, फोन काटना पड़ा था।

मेरी तंद्रा टूटी, दोपहर की धूप उतरकर शाम बन रही थी। मुझे ऐसा लगा कि ईश्वर ने हमें रचना के जाने पर एक पुत्र और एक पुत्री दे दिए। रचना की इच्छा हमने पूरी करके उसे मरने के बाद भी मरने नहीं दिया था। लगा—कुछ सार्थक करके जीवन को रचना के बलबूते पर अन्य लोगों के लिए जीने लायक बना दिया था।

सोहागपुर,
जिला : होशंगाबाद-४६१७७१ (म.प्र.)
दूरभाष : ०७५७५-२७८३३६

लघुकथा

# ऐजी, सुनते हो!

● रितेंद्र अग्रवाल

शादी के भव्य समारोह में मैंने एक रिश्तेदार की श्रीमतीजी को कहते सुना—'ऐजी, सुनते हो!' हालाँकि आजकल ऐजी का प्रचलन कम है। अधिकतर पत्नियाँ पति का नाम लेती हैं।

ऐसे ही एक बार एक जवान महिला को 'ऐजी' का संबोधन करते सुना, तो पूछा, ''क्यों, नाम नहीं लेतीं?''

''जी, वे मुझसे बड़े हैं, इसलिए।'' ऐसे ही पड़ोस में रहनेवाली महिला अपने पति को 'गुड़िया के पापा' कहकर संबोधित करती है। उनका भी यही जवाब था। वे उम्र में मुझसे बड़े हैं। महिलाएँ पति का नाम नहीं लेतीं, इसका मतलब यह नहीं है कि वह स्टेटस में छोटी हैं या समान नहीं हैं।

ऐसा भी नहीं है कि केवल हिंदी बोलनेवाली महिलाएँ ही नाम नहीं लेतीं। तमिल में 'एन्ना के केरेला', तेलुगु में 'ये वान्दी', मराठी में 'आ हो' कन्नड़ में 'गन्डा'। ये शब्द सुनने में जरूर अलग हैं, पर अर्थ या उद्देश्य एक ही है।

उत्तर भारत में अकसर महिलाएँ 'ऐजी सुनते हो' न कहकर पप्पू के पापा, गुड़िया के पिताजी आदि कहकर संबोधित करती हैं। समाजशास्त्र में इसे 'टैक्नोनिमी' कहते हैं।

मेवाड़ में पति का नाम लेने को असम्मानित समझा जाता है। ऐसा भी सोचा जाता है कि पति का नाम लेकर संबोधित करने पर पति का जीवन कम हो जाता है या आयु घट जाती है।

कभी-कभी न चाहने पर भी कि 'ऐजी, सुनो जी', कहा जाए लेकिन पारिवारिक विवशता के चलते करना पड़ता है, क्योंकि साथ रहते हैं। कभी-कभी कोई बंधन नहीं होता, फिर भी नाम नहीं लेते। जैसे मेरे एक मित्र की पत्नी—'सुनो' या 'लव' का संबोधन करती हैं।

कभी-कभी जैसा घर में देखते हैं, स्वयं भी करते हैं। जैसे हमारे पड़ोस में रहनेवालों की बेटी। उसने कभी नाम लेते नहीं सुना, अत: वह भी नहीं लेती। कभी-कभी शादी तय होते ही माँ बेटी को सचेत कर देती है कि नाम नहीं लेना है।

कभी-कभी महिलाएँ अपनी इच्छा का संबोधन दे देती हैं। जैसे इंडिया, लव, स्वीट आदि। पूछने पर पता चला कि इज्जत देने के लिए। एक साहिबा 'जान' इस्तेमाल करती हैं। पता करने पर बताया, ''काफी तकलीफ में थे, मिलने पर नया जीवन (जान) इन्हीं से मिला, इसलिए।''

ऐसा नहीं है केवल महिलाएँ ही नाम नहीं लेती। पति भी अकसर 'सुनती हो', 'पप्पू की माँ', 'अरे सुनो' आदि संबोधन इस्तेमाल करते हैं।

आज के आधुनिक जमाने में सभी नाम लेते हों, ऐसा नहीं है। कभी-कभी लोग पुराने रिवाज अपनाने में आनंद महसूस करते हैं।

आज भी महिलाएँ या पुरुष साथी का नाम न लेकर गौरवान्वित महसूस करते हैं। सोच है कि अगर नाम लेने से आयु घटती है तो क्यों लिया जाए नाम।

फिर नाम लेने से कभी-कभी बच्चे भी नाम से पुकार लेते हैं।

अत: 'ऐजी सुनते हो' का प्रयोग कीजिए और आनंदित रहिए।

११/५०० मालवीय नगर
जयपुर-३०२०१७
दूरभाष : ७५९७४३६४५६

# बोले यही कबीर

● **घमंडीलाल अग्रवाल**

कई मुखौटे एक मुख, दुर्लभ है पहचान।
इनसानों के वेश में, घूम रहे शैतान॥

एक बाप छह बेटियाँ, गायब मुख का तेज।
पेट काटकर जोड़ना, पूरी उम्र दहेज॥

मैली चादर सत्य की, सिंहासन पर झूठ।
गाँव-गाँव वायदे, नगर-नगर लूट॥

छोटा कद है बाप का, आदमकद है पूत।
इसीलिए निशिदिन करे, पूत नई करतूत॥

कहा पेट ने पीठ से, खुलकर बारंबार।
तेरे मेरे बीच में, रोटी की दीवार॥

मुझको मेरा प्यार दे, लौटा मेरी प्रीति।
नई सदी, भाई नहीं, मुझको तेरी रीति॥

मौसम आया उग गई, खेत-खेत में ज्वार।
शायद संभव हो सके, बस्ती का उपचार॥

कत्ल हुआ वो रात को, निकली मुख से चीख।
भोर हुए लेने लगी, सच्चाई फिर सीख॥

चलीं बेटियाँ द्वार से, नयनों भरकर नीर।
एक अकेलापन हुआ, बाबुल की जागीर॥

आग लगी है शहर में, जश्न मनाते काग।
लोग तमाशायी हुए, अपने-अपने राग॥

यश-अपयश कुछ भी मिले, अपनाई जब पीर।
मीरां ने भी यह कहा, बोलें यही कबीर॥

निशिगंधा यह देखकर, हुई शर्म से लाल।
भीड़ उन्हीं के साथ थी, जिनके हाथ मशाल॥

सीखा हमने उम्र भर, सच्चाई का पाठ।
शब्द जम गए होंठ पर, देह हो गई काठ॥

जो भी जैसा है दिखे, होता उससे भिन्न।
नेक आदमी में मिले, एक अजूबा जिन्न॥

सरसों पीली हो गई, हरा हो गया धान।
फिर संपन्न किसान है, फिर कंगाल किसान॥

रिश्वत आई शहर में, लुप्त हो गया न्याय।
भोली जनता सह रही, पग-पग पर अन्याय॥

बूढ़े हिंदुस्तान को, लगा अजूबा रोग।
मरते हैं कुछ लोग जब, जीते तब कुछ लोग॥

सत्य बोलते थे सदा, जब वो सत्ताहीन।
झूठ बोलने लग गए, अब वो सत्तासीन॥

टूटी बाबा की कमर, जोड़ा इतना अर्थ।
कल उसकी बिटिया जली, अर्थ गया सब व्यर्थ॥

रात दीपकों ने किया, खुलकर ये ऐलान।
दूर करेंगे तिमिर का, हम मिलकर अभिमान॥

करते हैं कुछ लोग यों, जीवन का श्रृंगार।
एक आँख में नीर है, एक आँख में प्यार॥

आज आदमी कर रहा, खुलकर कत्लेआम।
चिड़ियाघर में सिंह सब, फरमाते आराम॥

आजादी ने ढँक लिया, यों सारा परिवेश।
लगी मानने कोकिला, कौवों के आदेश॥

पूँछ हिलानी सीख ली, जिसने मेरे यार।
सम्मानों का हो गया, घर उसके भंडार॥

नदी किनारे वह रहा, प्यासा सारी रात।
समझ नहीं पाई नदी, उसके मन की बात॥

ऐसा पलटी खा गया, सत्ता वाला खेल।
खास आदमी खुश बहुत, आम रहा दुःख झेल॥

आजादी के अर्थ को, देनी होगी दाद।
जो भी मन हो कीजिए, दंगे-खून-फसाद॥

नई शताब्दी में गया, सूख नयन का नीर।
हो बैठा है इसलिए, नर बेहद बेपीर॥

सुपरिचित बाल साहित्यकार। कई विधाओं की ७२ पुस्तकें तथा पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। भारत सरकार के सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय के प्रतिष्ठित 'भारतेंदु हरिश्चंद्र पुरस्कार', चिल्ड्रन्स बुक ट्रस्ट पुरस्कार एवं हरियाणा साहित्य अकादमी पुरस्कार सहित अब तक ११९ पुरस्कार-सम्मान प्राप्त।

प्राणों की आहुति चढ़ा, करे प्रेम प्रतिदान।
निष्ठुर जग में जानवर, नर से अधिक महान॥

गजदंतों से सीखिए, जीवन का नव दौर।
खाने के हैं दूसरे, दिखलाने के और॥

दिशा-दिशा में व्याप्त है, हिंसा-भय-आतंक।
उग्रवाद ने पा लिये, सबसे ज्यादा अंक॥

रिश्ते-नाते हो गए, ज्यों बधाई के पत्र।
नजर कहीं आता नहीं, अपनापन सर्वत्र॥

कुछ चीजें महँगी हुईं, कुछ में दे दी छूट।
बजट मचाए इस तरह, खुल्लमखुल्ला लूट॥

कोई तो हँसकर मिले, कोई होकर तंग।
दुनिया में व्यवहार के, अपने-अपने ढंग॥

हुए जा रहे हैं सजल, क्यों बाबा के नैन।
बोल न कोई भी रहा, हँसकर मीठे बैन॥

७८५/८, अशोक विहार,
गुरुग्राम-१२२००६ (हरियाणा)
दूरभाष : ०९२१०४५६६६६

व्यंग्य

# फाइल मिल गई

● रमेशचंद्र

यमराज का विशाल न्यायालय आत्माओं से खचाखच भरा हुआ था। न्याय के सिंहासन पर यमराज विराजमान थे। वे एक आत्मा के पाप-पुण्य के बारे में अपने अकाउंटेंट चित्रगुप्त के मुख से सुन रहे थे।

कई आत्माएँ कतारबद्ध खड़ी अपनी बारी की प्रतीक्षा कर रही थीं। इतने में एक यमदूत एक आत्मा को लेकर उपस्थित हुआ। यमदूत ने अपनी कमर को नब्बे डिग्री के कोण पर झुकाते हुए यमराज को प्रणाम किया।

''महाराज की जय हो!''

यमराज ने ओ.के. में सिर हिलाया और साथ आई हुई आत्मा को घूरकर देखा। फिर यमराज ने एक हुंकार भरी, तो बाहर मोर्चे में खड़े उनके वाहन यानी भैंसे ने भी हुंकार का प्रत्युत्तर दिया। यमराज ने गंभीर घोष करते हुए कहा, ''तुम इस दुरात्मा को ले ही आए।''

''जी, महाराज!'' यमदूत ने झुककर विनम्रतापूर्वक कहा।

''यह बड़ी दुरात्मा है। इसने तुम्हें परेशान तो नहीं किया?'' यमराज ने दुरात्मा को क्रोध की दृष्टि से देखते हुए यमदूत से पूछा।

''महाराज! इस दुरात्मा ने बड़ी मुश्किल से अपना शरीर छोड़ा। मुझे काफी मशक्कत करनी पड़ी।'' यमदूत ने अपनी परेशानी बयाँ करते हुए कहा।

''हाँ, मैं जानता था, यह बड़ी मुश्किल से ही यहाँ आएगी! खैर, अब तुम बँगले पर जाकर मैडम से मिलो। वे कोई काम बताएँगी, उसे करके फिर अपने घर चले जाना।'' यमराज ने उसे आदेश देते हुए कहा।

''जो आज्ञा प्रभु!'' यह कहकर यमदूत बाहर निकल गया।

पहलेवाली आत्मा का निर्णय करने के पश्चात् यमराज ने चित्रगुप्त से कहा, ''इस दुष्टात्मा का प्रकरण पहले ले लो।''

''जी, अभी प्रस्तुत करता हूँ।'' कहकर चित्रगुप्त उसकी फाइल ढूँढ़ने लगे।

वह दुष्टात्मा यमराज और चित्रगुप्त को टुकुर-टुकुर देखती रही।

जब काफी देर तक फाइल नहीं मिली, तो यमराज झल्लाकर बोले, ''क्या आज फाइल पुटअप करने का मूड नहीं है, चित्रगुप्त!''

''प्रभो! वही ढूँढ़ रहा हूँ, पता नहीं कहाँ रखने में आ गई।'' चित्रगुप्त अलमारी में फाइलों की उठापटक करते हुए बोले।

''तो इसका मतलब तुम फाइलों को जहाँ चाहे रख देते हो!'' यमराज ने घोर गर्जन करते हुए कहा।

सुपरिचित रचनाकार। देश की विभिन्न प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में कविता, कहानी, व्यंग्य, लघुकथा आदि प्रकाशित व पुरस्कृत। संप्रति सेवानिवृत्त वाणिज्यिक कर अधिकारी, अब स्वतंत्र लेखन।

गर्जन सुनकर न्यायालय में सभी कर्मचारी और आत्माएँ सन्नाटे में आ गए। इधर चित्रगुप्त काँपने लगे। किंतु कुछ बोले नहीं। न्यायालय में उपस्थित सभी की दृष्टि चित्रगुप्त पर ही लगी थी।

चित्रगुप्त फाइलों में उस प्रकरण को ढूँढ़ते हुए पसीना-पसीना हो गए। चिंता की लकीरें उनके ललाट पर स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रही थीं।

यह देखकर वह आत्मा, जिसे दुष्टात्मा से संबोधित किया था, ने व्यंग्यात्मक मुसकान के साथ यमराज की ओर देखा, तो यमराज की आँखों से क्रोध की चिनगारी बरसने लगी। वे उसे देखकर बोले, ''तुम क्यों हँस रहे हो?''

''प्रभो! लगता है, आपके न्यायालय में भी वैसी ही धाँधली है, जैसी पृथ्वीलोक के न्यायालय में है।''

यह सुनकर यमराज के तन-बदन में आग लग गई। उनकी भुजाएँ और मूँछें एक साथ फड़क उठीं। वे चीखकर बोले, ''तुम मेरे कोर्ट की तौहीन कर रहे हो? यहाँ धाँधली रूपी परिंदा भी पर नहीं मार सकता!''

''भले ही वह प्रकरण मार देता हो!'' धीरे से उस आत्मा ने कहा, तो यमराज के सुकर्णों ने तुरंत सुन लिया। वे फिर चीखे—

''क्या बका तुमने?''

''कुछ नहीं प्रभो! मैं तो सिर्फ यही कह रहा था कि जब धाँधली नहीं है, तो फिर प्रकरण यानी फाइल कहाँ गायब हो गई?'' उस आत्मा ने धीरे से कहा।

''क्यों चित्रगुप्त! यह दुष्टात्मा क्या कह रही है?''

''प्रभो! यह व्यर्थ बकवास कर रही है। अभी उसकी फाइल खोलकर इसके पापों का हिसाब बताता हूँ।'' चित्रगुप्त ने फिर फाइलों को उलटते-पलटते हुए कहा।

यमराज अधीरता से चित्रगुप्त की हरकत देखकर आग-बबूला होते रहे। उधर वह आत्मा व्यंग्य से मुसकराती रही। यमराज जैसे-तैसे अपने

आपको कंट्रोल किए हुए थे। जब उन्होंने उस आत्मा को व्यंग्य से मुसकराते हुए देखा तो पूछ बैठे, ''कहीं वह फाइल तुमने तो गायब नहीं कर दी?''

''प्रभो! मैं तो अभी-अभी आपके सामने उपस्थित हुआ हूँ, भला मैं ऐसा निकृष्ट कार्य कैसे कर सकता हूँ!''

''क्या भरोसा, तुम जैसी दुष्टात्मा कुछ भी कर सकती हैं!'' यमराज ने उसकी बात का जवाब देते हुए कहा।

''प्रभो! मैंने जीवन भर पापकर्म किए हैं। यहाँ तक कि झूठ, बेईमानी, धोखेबाजी, चोरी, ठगी, सभी कुछ, लेकिन फाइल जैसी चीज की चोरी कभी नहीं की।''

उस आत्मा की बात सुनकर यमराज दाँत पीसकर बोले, ''ठीक है! ठीक है! तुमने क्या किया, क्या नहीं, यह सब पता चल जाएगा, जरा तुम्हारी फाइल तो मिले।''

**यह सुनकर चित्रगुप्त के हाथ-पाँव फूल गए। घबराहट में उनके हाथ से एक फाइल छूटकर नीचे गिर पड़ी। जैसे ही उन्होंने नीचे झुककर उसे उठाया, तो वह वही फाइल थी। वे हर्ष से उछल पड़े और बोले, ''प्रभु! मिल गई फाइल! मिल गई!''**

फिर चित्रगुप्त को संबोधित करते हुए बोले, ''चित्रगुप्त! यदि आज तुमने फाइल ढूँढ़कर मेरे सामने पुटअप नहीं की, तो तुम्हारी खैर नहीं! मैं तुम्हें सस्पेंड कर दूँगा।''

यह सुनकर चित्रगुप्त के हाथ-पाँव फूल गए। घबराहट में उनके हाथ से एक फाइल छूटकर नीचे गिर पड़ी। जैसे ही उन्होंने नीचे झुककर उसे उठाया, तो वह वही फाइल थी। वे हर्ष से उछल पड़े और बोले, ''प्रभु! मिल गई फाइल! मिल गई!''

१०१-सी, पार्श्वनाथ नगर, अन्नपूर्णा मार्ग
इंदौर-४५२००९
दूरभाष : ९८२७५२८६०३

# आज और कल

दोहे

● राजेंद्र टेलर 'राही'

बढ़ते भौतिकवाद ने, बदला अब अंदाज।
मिले-जुले परिवार थे, टूट रहे हैं आज॥

पाला-पोसा चाव से, दी सपनों को पाँख।
बड़ा हुआ दिखला रहा, बाबूजी को आँख॥

प्रगति के साधन सभी, हो जाते बेकार।
सुरसा के मुख सी बढ़े, जनसंख्या रफ्तार॥

वादों की थी रोशनी, जगमग करती रात।
इन नेताओं का कभी, आया नहीं प्रभात॥

गया शहर बेटा लिये, आशाओं की पाँख।
दरसन को तरसा करें, अब वो बूढ़ी आँख॥

खत्म हुई वो दोस्ती, गया प्रेम व्यवहार।
मौसम सा बदला करे, इंसां का व्यवहार॥

किस विध चहके बचपना, और चेहरे पर ओज।
नाजुक तन पर लादते, भारी बस्ता बोझ॥

आँखों का पानी गया, तालाबों से नीर।
नेह नीर को तरसती, इंसां की तकदीर॥

हवा जहर पानी अशुद्ध, शोर रहा भरपूर।
धीरे-धीरे जा रहा, सुख मानव से दूर॥

करता आशा फूल की, बोता है तू शूल।
कल-कल बहती थी नहीं, उड़ती है अब धूल॥

आँखों पर पट्टी बँधी, भूल रहे यह बात।
नर नारी का इन दिनों, कम होता अनुपात॥

बड़ी हो रही बेटियाँ, चिंता की है बात।
करवट करवट बदलते, बीती सारी रात॥

दिन तो बाहर कट गया, आई धुँधली रात।
मन में घुटकर रह गए, बूढ़े के जज्बात॥

धरती से आकाश का, हुआ नहीं संवाद।
बादल तो बरसे नहीं, आँखों में बरसात॥

भरी जिंदगी में कभी, सुनी न मन की बात।
जाने पर है पक रहा, मीठा मीठा भात॥

कल-कल बहती थी नदी, उड़ती है अब रेत।
वक्त फिसलता जा रहा, मानव अब तो चेत॥

सूखे कुएँ और बावड़ी, सूखे सब तालाब।
मानव की करतूत का सबसे बड़ा जवाब॥

पहले तो सोचा नहीं, व्यर्थ बहाया नीर।
जल स्तर नीचे गया, कोसें अब तकदीर॥

फव्वारे छिड़काव के, बहता नीर फिजूल।
बूँद-बूँद है कीमती, सभी गए हम भूल॥

खींचा खूब जमीन से, लेना रखा याद।
देना भूली धरा अब, किसे करें फरियाद॥

भूल गए हम सब, पुरखों की वह आन।
ओ पानी के बुदबुदे, पानी को पहचान॥

दुनिया के बाजार में, इंसां हैं हैरान।
चीजें महँगी हो गईं, सस्ता है ईमान॥

उसकी पीड़ा का भला, कैसे हो अनुमान।
जीवन तो कटता गया, बाकी हैं अरमान॥

जल है तो ही कल है, जीवन इसको जान।
कुदरत के दरबार का, यही बड़ा फरमान॥

दिल में खाए जा रहे, प्रश्न सभी को आज।
कहाँ गए वो शख्स, हम करते जिन पर नाज॥

प्रिंसिपल, राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय,
रायपुर पाटन (सीकर)
राजस्थान-३३२७१८
दूरभाष : ०९६८०१८३८८६

कहानी

# बिरयानी

● ललित सिंह राजपुरोहित

''तुम्हारी माँ के हाथों में जादू है, जब भी मैं उनके हाथ की बनी कोई भी चीज खाता हूँ, तो बस जी करता है, खाता ही रहूँ, वाह! कितनी स्वादिष्ट बिरयानी है।'' निमेश बिरयानी को स्वाद ले-लेकर खा रहा था और निशा उसके चेहरे को गौर से देख रही थी। निमेश के मुख पर मुसकराहट देखकर वह अपनी मुसकान को भी छुपा न सकी। निमेश बड़े चाव से बिरयानी इस तरह खा रहा था गोया छोटे बच्चे को उसकी मनपसंद कोई डिश मिल गई हो। निमेश की खुशी उसके गालों में पड़ रहे गड्ढों से साफ झलक रही थी। चावल का एक दाना जब निमेश की मूँछों में चिपक गया, तो निशा ने बड़े प्यार से अपनी ओढ़नी को तर्जनी उँगली में लपेटकर निमेश की मूँछ पर लगे चावल के दाने को हटा दिया।

अल सुबह स्वप्नलोक में सैर कर रही निशा के चेहरे पर मुसकान तैरने लगी। बेपरवाह होकर पूरे बिस्तर को घेरकर लेटी हुई निशा नींद में ही बुदबुदा रही थी। उसे जगाने के लिए आई माँ निशा को यों नींद में मुसकराते हुए देखकर ठिठक गई। वे हैरत भरी निगाहों से निशा के चेहरे की भाव-भंगिमाओं को बड़े गौर से देख रही थीं। उन्हें समझ में आ गया था कि निशा कोई बड़ा ही मीठा सपना देख रही है, तभी तो नींद में इतना मुसकरा रही है। माँ को बखूबी पता है कि बचपन से ही निशा की आदत है, जब भी वह कोई सुहाना सा सपना देखती है, तो नींद में मुसकराने लगती है। निशा का यों नींद में मुसकराना माँ को बहुत भा रहा था। माँ चाहती थी कि निशा थोड़ी देर और सोई रहे, पर दीवार पर टँगी घड़ी की सुइयाँ जैसे भागी जा रही थीं।

''ऐ निशा! उठ···सात बज गए हैं···उठ ना!'' निशा की माँ ने निशा को बिस्तर से उठाते हुए कहा। सुबह-सुबह उसके चेहरे की ताजगी किसी छोटे बच्चे की तरह लग रही थी। माँ ने निशा के माथे को चूमते हुए कहा, ''उठ जा बेटा, बहुत काम पड़ा है।'' निशा मुसकरा रही थी, उसने अपनी आँखें बंद कीं और फिर मन-ही-मन मुसकराने लगी।

''ऐसा कौन सा सपना देखा, जो अब तक मुसकराए जा रही हो!'' माँ ने निशा की आँखों में झाँकते हुए पूछा।

निशा थोड़ी शरमा गई और झेंपते हुए बोली, ''कुछ भी तो नहीं माँ, बस ऐसे ही।'' बिस्तर से उठकर वह सीधे बगीचे की ओर आ गई।

सुबह-सुबह की ताजी हवा में साँस लेकर वह और भी अधिक प्रफुल्लित अनुभव कर रही थी। सुबह का मौसम कुछ ऐसा सुहावना था कि वह कुछ पल के लिए घर के अहाते में बने बगीचे में ही ठहर गई। उसकी नजरें रात की रानी के पौधे पर गईं, सफेद फूल अब भी उतने ही ताजा थे, जितने वे कल रात को खिले थे। ब्रह्मकमल के पौधे पर लगे फूल मुसकरा रहे थे। कल रात उसके यहाँ मामा एवं मौसी के परिवारों का जमावड़ा था, पूरे एक साल बाद दीदी, जीजाजी और उनका तीन साल का बेटा युवराज आया तो घर जैसे खुशियों से भर गया। नहीं तो निशा और उसके माता-पिता के अलावा घर में पेड़-पौधों और कोयल की कूक, मुरगे की बाँग और पक्षियों के कलरव के अलावा बस टी.वी. की ही आवाज गूँजती थी। जब तीनों अपने-अपने ऑफिस निकल जाते तो घर की दरो-दीवारें आपस में बतियाती थीं। घर के आगे बने बगीचे में निशा को देखकर पक्षियों का कलरव और भी बढ़ गया, कोयल अब और तेजी से कूकने लगी, मुरगियों का झुंड कहाँ पीछे रहता, पूरा दड़बा बाँग देने लगा। सुबह-सुबह उठते ही निशा आँगन में पक्षियों के लिए दाने बिखेर देती। घर के अहाते में लगे हुए पेड़ों पर रहनेवाले सभी पक्षी निशा को अच्छी तरह से पहचानने लगे थे।

कुशल कहानीकार। विभिन्न हिंदी पत्रिकाओं और समाचार-पत्रों में लेख, कविताएँ, कहानियाँ प्रकाशित। राष्ट्रीय नाटक अकादमी तथा ललित कला अकादमी द्वारा लघु नाटक लेखन विधा में प्रोत्साहन पुरस्कार। संप्रति मंगलूर ओ.एन.जी.सी में अधिकारी।

पक्षियों के लिए दाना लाने के लिए निशा रसोई की ओर चल पड़ी। रसोई में कदम रखते ही अचानक उसे कुछ याद आया, दौड़कर फ्रिज का दरवाजा खोला, तो आँखों में चमक आ गई। फ्रिज में बिरयानी से भरा टिफिन यों ही पड़ा था, जो कल रात उसने चुपके से सबकी नजरों से बचते-बचाते हुए रख दिया था। फ्रिज में रखे टिफिन को सही-सलामत पाकर वह वापस पलटी, पक्षियों के लिए दाना-चुग्गा लिया और फिर से बगीचे में लौट आई। पक्षियों के लिए दाना बिखेरते वक्त यह सोचते हुए जोर से हँस पड़ी कि 'यह कमबख्त निमेश, सपनों में भी पीछा नहीं छोड़ता!'

कल रात दीदी और जीजाजी के आने की खुशी में एक छोटी सी फैमिली पार्टी रखी थी, तो माँ ने सभी के लिए बिरयानी बनाई थी। इससे पहले कि माँ बिरयानी को पतीले से निकालकर काँच के दोने में डालती, निशा ने चुपके से एक टिफिन में बिरयानी भरकर उसे फ्रिज में रखी सब्जियों के पीछे छुपा दिया था। निशा जानती थी कि निमेश माँ के हाथों की बिरयानी चाट कर खा जाता है। कल रात उसने अपने मौसेरे भाई-बहनों के साथ मिलकर चुपके से कई जाम खाली कर दिए। एक वक्त ऐसा भी था, जब निशा को वाईन या बीयर पीना बिल्कुल भी अच्छा नहीं लगता था, पर जब से वह निमेश की सोहबत में आई है, बिल्कुल बदल

सी गई है। अब उसे वह सबकुछ पसंद है, जो निमेश को अच्छा लगता है। निशा अभी इसी उधेड़बुन में थी कि माँ ने फिर से आवाज लगाई, ''निशा! देख ७:३० बज गए हैं, जल्दी-जल्दी मेरा हाथ बँटा, नहीं तो सब ऑफिस को लेट हो जाएँगे।'' माँ की आवाज के साथ ही निशा रसोई की ओर चल पड़ी।

पापा नहा चुके थे, नहाने के बाद रोजाना की तरह सुबह-सुबह पूजा-पाठ में व्यस्त हो गए। इस समय जो कामकाजी महिला के हाल होते हैं, वही हाल निशा के भी थे। चूल्हा-चौका, साफ-सफाई, सुबह-सुबह सबके लिए नाश्ता बनाना आदि। सब अपने साथ लंच बॉक्स लेकर जाते हैं, तो लंच भी नाश्ते के साथ ही रसोई में पकता। एक कामकाजी महिला की यही दिनचर्या है। निशा भी जैसे अब इन सब कामों की अभ्यस्त हो गई थी। रसोई में प्याज छीलते-छीलते निशा को अचानक याद आया कि कल रात को मोबाइल की बैटरी डिस्चार्ज हो गई थी, तब से अब तक मोबाइल स्विच ऑफ ही पड़ा है। ओह···आज यह कारण था, जो, मेरे मोबाइल का अलार्म बजा ही नहीं। मन-ही-मन बातें करती हुई वह प्याज वहीं छोड़कर सीधा अपने कमरे में भागी और मोबाइल को चार्ज में लगाकर स्विच ऑन किया। मोबाइल में बिजली रूपी प्राण जैसे ही गए, स्क्रीन पर टेक्ट्स मैसेज बरसने लगे। सारे-के-सारे मैसेज निमेश के थे, कुछ गुस्से से भरे तो कुछ प्यार की सरगोशियों से लबरेज थे। व्हाट्सअप भी मैसेज से अँटा पड़ा था, पर मैसेज पढ़ने का समय कहाँ था!

'गुड मॉर्निंग प्लीज मीट मी एट ११ ए.एम. नियर माई ऑफिस, आई हेव ए सरप्राइज फॉर यू।' निशा ने तुरंत एक मैसेज निमेश के मोबाइल पर भेज दिया और वापस मोबाइल को चार्ज में रखकर कमरे से निकलने लगी, तो पाया कि युवराज उसके बिस्तर पर आराम से पाँव पसारकर सो रहा है, कल कितनी मस्ती की थी युवराज ने। कल की पार्टी में मजा ही आ गया। पीने के बाद तो जैसे पार्टी का सुरूर और बढ़ गया था। निशा के सामने निमेश का चेहरा उभर आया। हाँ, उसी ने तो सिखाया है सबकुछ, बुरा या भला, जो कुछ भी है, आज मेरे चेहरे पर जो चमक है, यह उसी के दम से है, नहीं तो उससे मिलने से पहले मैं कितनी तन्हा-तन्हा थी। विचारों में गोते लगाते हुए निशा अपने कमरे से बाहर निकली और रसोई के कामों में व्यस्त हो गई।

हमेशा की तरह माँ और पापा ऑफिस के लिए पहले निकल जाते और निशा लेट-लतीफ की तरह सबसे बाद में ऑफिस के लिए निकलती। बाद में इसलिए, क्योंकि वह कभी-कभी इसी बहाने ऑफिस जाने से पहले रास्ते में निमेश के साथ कॉफी पी लेती। जब सब घर से निकल जाते, तो घर में एकदम शांति छा जाती, पर जब से युवराज यहाँ आया है, घर की रौनक ही बदल गई है। इस बार गरमियों की छुट्टियों में पूरे एक महीने वह यहाँ रहेगा, निशा बहुत खुश नजर आ रही थी।

दीदी भी उठ चुकी थीं। जैसे ही दीदी रसोई में आईं, रोज की तरह फिर से वही राग अलापना शुरू कर दिया, ''माँ, निशा के लिए भी एक अच्छा सा लड़का देखकर उसके हाथ पीले कर दो, अब तो सरकारी नौकरी भी लग गई है, हजारों लड़के लाइन में खड़े हैं।''

''हाँ, कोशिश तो कर रहे हैं, एक लड़का है भी नजर में, पर बात अभी भी जस की तस है, आगे ही नहीं बढ़ी।'' माँ ने कहा।

इधर निशा मन-ही-मन मुसकराए जा रही थी, अपने आपसे ही बातें करने लगी, 'माँ, मैंने तो अपने लिए वर ढूँढ लिया है, बहुत जल्दी ही तुमसे मिलवा दूँगी।' निशा मन-ही-मन ठहाका मारकर हँसी। तभी उसकी माँ ने निशा की आँखों में आँखें डालकर इस कदर देखा, जैसे माँ ने उसके दिल में झाँककर उसके मन की बात पढ़ ली हो। निशा ने माँ से अपनी नजरें हटा लीं और नाश्ता बनाने के लिए जल्दी-जल्दी हाथ चलाने लगी। खिड़की से बाहर झाँका तो काले-काले बादलों ने आसमान को ढक लिया था, जैसे-जैसे दिन चढ़ रहा था, उमस भी बढ़ने लगी थी। जब तक नाश्ता बनता, निशा का बदन पसीने से तरबतर हो चुका था, उसने अपने कपड़े उठाए और गुसलखाने की ओर बढ़ चली।

नहाकर जब वह सीधे अपने कमरे में पहुँची, तो दर्पण के सामने खड़ी हो गई। कुछ समझ में नहीं आ रहा था कि क्या पहनूँ? पूरे एक सप्ताह के बाद आज वह निमेश से मिलने जा रही है, इसी खुशी में बस झूमे जा रही थी। अलमारी में रखे सभी ड्रेस एक-एक कर बाहर निकाल दिए, पर अभी तक तय नहीं हुआ था कि कौन सी ड्रेस पहनी जाए।

निमेश को ट्रेडिशनल सलवार-कुरता बहुत पसंद है। हाँ, पिछले जन्मदिवस पर उसने जो गिफ्ट दिया था, वही पहन लेती हूँ, फिर उस ड्रेस का कलर भी निमेश की पसंद का है। पीले रंग की ड्रेस निमेश को बहुत भाती है, जब भी वह मुझे इन कपड़ों में देखता है, तो उसका चेहरा दमकने लगता है, वह मेरी तारीफ करते नहीं थकता। आज जब वह मुझे इस ड्रेस में देखेगा, तो जरूर मेरी खूबसूरती की बात छेड़ेगा और कहेगा, 'ओह निशा हाउ ब्यूटीफूल यू आर, यह पीला रंग तुम पर कितना फबता है!' दर्पण में अपनी छवि से बातें करते-करते निशा के चेहरे पर लालिमा उभर आई। उसने पीले रंग का सलवार-कुरता पहना, जिसके किनारों पर काले रंग का बॉर्डर तथा बॉर्डर पर सुनहरे रंग में उकेरी गई बेलबूटी चमक रही थी। कलाई पर घड़ी बाँधते हुए जब घड़ी पर नजर गई, तो पूरे ९ बज रहे थे। बाहर कार की आवाज से निशा को समझ में आ गया कि माँ-पापा आज कार ले जा रहे हैं। रसोई की खिड़की से झाँकते हुए आसमान में छाए बादलों को देखते ही वह जान गई थी कि आज कार उसके हाथ नहीं आएगी। माँ का ऑफिस दूर है, तो पापा उन्हें छोड़ते हुए जाएँगे, बारिश का कोई भरोसा नहीं, कब टपक पड़े। निशा अपने आप से ही बातें कर रही थी।

''निशा···पापा कार ले गए हैं, तुम्हारी स्कूटी की चाबी और लंच बॉक्स डाइनिंग टेबल पर पड़ा है।'' टी.वी. हॉल से दीदी की आवाज गूँजी। निशा ने भी वापस हाँक लगा दी, ''ठीक है दीदी।''

निशा ने बिस्तर पर निगाह डाली, तो पाया कि युवराज अभी भी घोड़े बेचकर सो रहा है। वह धीरे से युवराज के पास गई और उसके माथे पर प्यार से चुंबन दिया। छोटे बच्चे सोते हुए कितने खूबसूरत लगते हैं, वह सोच ही रही थी कि एक नई स्मृति ने उसके होंठों पर एक बार फिर मुसकान बिखेर दी। उसे अनायास ही याद आया कि निमेश भी हमेशा

कहता है कि जब तुम सो रही होती हो, तो तुम्हारी मुसकान हर किसी को मोह लेती है। जब भी निमेश अपना प्रेम प्रकट करता है, तो वह भी इसी तरह प्यार से मेरे माथे को चूम लेता है। उसने नीले रंग की बिंदी अपने ललाट पर लगाई, मैचिंग की चूड़ियाँ, होंठों पर थोड़ी सी लिपस्टिक, काजल और आईलाइनर लगाया। निशा एक बार फिर दर्पण में अपने आपको निहारने लगी, वाकई बहुत खूबसूरत लग रही थी। गुनगनाती हुई कमरे से निकलकर सीधा किचन की ओर बढ़ी। उसने बिरयानी को फिर से गरम किया और टिफिन को अच्छे से पैक कर अपनी स्कूटी की डिक्की में रख दिया।

जब तक वह ऑफिस पहुँची, हल्की-हल्की बूँदाबाँदी शुरू हो गई थी। अपनी स्कूटी अभी पार्क कर रही थी कि उसके सामने अविनाश की कार आकर रुकी। अविनाश कार से नीचे उतरा और ऐनक उतारते हुए निशा को हैलो बोला। निशा ने भी आगे बढ़कर गर्मजोशी से अविनाश से हाथ मिलाया। अविनाश को यों अचानक सामने देखकर सोचने लगी कि कभी-कभी कुछ लोग जीवनभर पीछा नहीं छोड़ते, अविनाश पहले क्लामसमेट था, फिर एक दिन पड़ोसी हो गया, एक ही कॉलेज में दोनों ने पढ़ाई पूरी की और किस्मत देखिए, अब जॉब भी दोनों को एक ही कंपनी में मिली। भगवान् का शुक्र है, डिपार्टमेंट अलग-अलग हैं। निशा थोड़ी सी मुसकरा दी। निशा को मुसकराते देख अविनाश भी मुसकराया। अविनाश ने सोचा, शायद निशा ने उसे देखकर मुसकान बिखेरी है। निशा ने अपनी नजरें अविनाश के चेहरे से हटा लीं और स्कूटी की डिक्की से टिफिन निकालने लगी, तब तक अविनाश उसके पास आ गया।

''ओहो! दो-दो लंच बॉक्स! ये दूसरेवाला किसके लिए है?'' अविनाश आश्चर्य प्रकट करते हुए बोला।

''तुम्हें इससे मतलब···'' निशा ने तुनककर कहा।

''मतलब तो कुछ नहीं, वैसे कल तुम्हारे घर से बिरयानी की बहुत अच्छी खुशबू आ रही थी, कोई पार्टी-वार्टी थी क्या?'' अविनाश ने फिर प्रश्न उछाला।

''हाँ···वो दीदी और जीजाजी आए हुए हैं, तो मौसीजी और उनके बच्चे भी आए हुए थे। इसलिए एक छोटी सी फैमिली पार्टी थी।'' निशा ने बात को सँभालते हुए कहा।

''तो क्या हुआ, पड़ोसी के नाते ही बुला लेती। मैं भी जीजाजी से मिल लेता, अच्छा छोड़ो, यह बताओ कि इस दूसरेवाले टिफिन में कहीं कलवाली बिरयानी तो नहीं।'' अविनाश ने अपनी आँखों की पुतलियों को ऊपर-नीचे करते हुए तुक्का मारा।

''हम्म···जीजाजी अभी यहीं हैं, आज शाम को घर आकर मिल लेना, इसमें कौन सी बड़ी बात है। हाँ, दूसरेवाले टिफिन में बिरयानी ही है। अच्छा चलो, पंचिंग के लिए लेट हो रही हूँ, बाद में बात करते हैं।'' निशा पलटकर जाने लगी।

''चलो पार्टी में नहीं बुलाया, कोई बात नहीं, पर कम-से-कम यह बिरयानी तो खिला दो। देखो, मेरे मुँह में पानी आ रहा है। वैसे भी मैं तुम्हारे घर की बिरयानी खा-खाकर ही बड़ा हुआ हूँ, आंटी बिरयानी बहुत स्वादिष्ट बनाती हैं। लाओ, थोड़ा चखने तो दो।'' अविनाश लगभग जिद पर आ गया।

''नहीं···किसी और के लिए लाई हूँ, नहीं खिला सकती।'' अविनाश की बात काटते हुए निशा थोड़ा गुस्से में बोली। अविनाश तो जैसे सहम ही गया, बेचारे का चेहरा लटक गया। उसको लग रहा था कि मैं निशा का बचपन का दोस्त हूँ और मुझसे ज्यादा इंपोर्टेंट उसकी लाइफ में और कौन होगा? पर उसे कहाँ पता था कि जब से निमेश निशा के जीवन में आया है, उसने सभी दोस्तों की कमी को पूरा कर दिया है।

अविनाश गुडबाय बोलकर अपना लटका हुआ चेहरा लेकर निकल गया। निशा की नजरें उसकी पीठ पर गड़ी हुई थीं। सोचने लगी—अविनाश शायद बुरा मान गया, अपने रूखेपन के लिए वह अफसोस करने लगी और विचारों का आवेग उमड़ने लगा कि जब से निमेश उसकी जिंदगी में आया है, एक-एक कर सभी दोस्त पीछे छूटते जा रहे हैं। शायद निमेश के साथ ज्यादा टाइम स्पेंड करने तथा निमेश के डाउट्स को दूर करने के चक्कर में उसने अपने सभी दोस्तों से दूरी बना ली है।

सोचते-सोचते वह ऑफिस में आई और पंच करने के बाद सीधे अपनी चेयर पर आकर बैठ गई। कंप्यूटर ऑन किया, एक-एक कर फाइलों को निपटाने लगी, बार-बार घड़ी देखती, लग रहा था जैसे आज इस घड़ी को ब्रेक लग गए हैं, आगे ही नहीं बढ़ रही है। हमेशा यही होता है, जब भी निमेश से मिलने का समय होता है, तो इंतजार करते-करते वक्त बिताए नहीं बीतता और जब वह निमेश के साथ होती है, तो वक्त का पता ही नहीं चलता। ह···निमेश कितना झगड़ालू है, आधा समय तो उससे लड़ते-झगड़ते और उसके डाउट्स को दूर करने में ही बीत जाता है। पर उसका यों अनसिक्योर फील करना मुझे अच्छा लगता है। इससे कम-से-कम यह तो पता चल ही जाता है कि वह यह सोचकर भी डरता है कि कहीं मैं उसकी लाइफ से दूर नहीं चली जाऊँ, उसके इस स्वभाव की मैं आदी हो गई हूँ। धीरे-धीरे निमेश मेरी जरूरत बनता जा रहा है। अभी उसके दिमाग में विचारों के ज्वार उमड़ ही रहे थे कि शेट्टीजी मिठाई का डिब्बा लेकर उसके कैबिन में धड़धड़ाकर इस तरह आ गए जैसे कोई सुपरफास्ट ट्रेन अपने स्टेशन पर आई हो।

निशा के कैबिन में कुल चार सीट हैं, सामने बॉस बैठती हैं, पास की सीट पर स्टेनो पवित्रा मैडम बैठती हैं और गेट के पास की सीट पर सुषमा बैठती है। सुषमा मल्टी टास्किंग के पद पर बतौर कॉण्ट्रेक्ट काम करती है, कुल जमा पगार बहुत कम मिलती है, आजकल ठेकेदार अपने कर्मचारियों

को कहाँ पूरी तनख्वाह देते हैं, बड़ी मुश्किल से घर चलता है बेचारी का, हमेशा पैसों की तंगी बनी रहती है, पर सुषमा अपनी मुश्किलों को कभी भी अपने चेहरे पर नहीं झलकने देती।

''आज मिठाई किस खुशी में, शेट्टी सर?'' जब शेट्टीजी निशा के सामने अपने हाथ में लड्डू लेकर प्रकट हुए तो निशा ने संकोचवश पूछ ही लिया।

''प्रमोशन हुआ है तो मिठाई बाँटना तो बनता है।'' शेट्टीजी ने बड़े अदब से बताया।

निशा भी मुसकरा दी, उसने शेट्टीजी को प्रमोशन की बधाई दी, बदले में शेट्टीजी मुसकरा दिए। पलटकर सुषमा को दो लड्डू देते हुए कहा, ''यह दूसरावाला अपने बच्चे को दे देना।'' सुषमा ने उनके सामने हाथ जोड़कर आभार प्रकट किया, तो शेट्टीजी ने अपना हाथ हवा में लहरा दिया, जैसे आशीर्वाद दे रहे हों। शेट्टीजी के जाते ही सुषमा अपने हाथ में रखे दोनों लड्डुओं को एक साफ कागज में लपेटने लगी। जब सुषमा लड्डुओं को अपनी मेज की दराज में रखने लगी, तो निशा ने व्यग्रतापूर्वक पूछ लिया, ''सुषमा आज व्रत है क्या तुम्हारा या बाद में खाओगी?''

''नहीं मैडम, बच्चों के लिए रख दिए हैं, उन्हें लड्डू बहुत पसंद हैं। जब मैं अपने बच्चों को लड्डू खाते हुए देखूँगी, तो उनके मुख पर आई खुशी को देखकर ही मेरा मन तृप्त हो जाएगा।'' सुषमा ने सहजता से जवाब दिया।

सुषमा का जवाब सुनकर निशा मुसकराने लगी और शून्य की ओर ताकते हुए सोचने लगी कि यह माँ का प्यार ही है, जो अपनी इच्छाओं को ताक पर रखकर बच्चों की मुसकान देखना चाहती है।

''यह लो सुषमा, मेरी तरफ से भी तुम अपने बच्चे को दे देना। मुझे पता है कि छोटे भीम की तरह तुम्हारे बच्चे को भी लड्डू बहुत पसंद है।'' निशा ने अपनी मिठाई सुषमा को देते हुए कहा।

कुछ देर के लिए एकदम शांति छा गई, फिर फाइल में नोटिंग करते-करते अचानक खयाल आया कि निमेश के प्रति मेरे प्रेम में और सुषमा के अपने बच्चे के प्रति प्रेम में क्या कोई अंतर है? जिस तरह सुषमा ने अपने बच्चों के लिए मिठाई कागज की पुड़िया में सँभालकर रख ली है, ठीक उसी तरह कल मैंने भी बिरयानी बनते ही सबसे पहले निकालकर टिफिन में अलग से रख दी थी। यह भाव भी तो निमेश के प्रति मेरे निश्चल प्रेम का प्रकटन ही है। उतना ही निर्मल प्रेम, जितना सुषमा का अपने बच्चों की प्रति है। कभी-कभी निमेश भी बच्चों जैसा बन जाता है, छोटी-छोटी बातों पर तुनक जाता है, कभी बिदक जाता है, तो कभी रूठ जाता है, फिर बच्चों को गले लगाने पर जैसे वह मान जाते हैं, वैसे ही निमेश को भी बस एक बार जादू की झप्पी दे दो, तो वह सबकुछ भूल जाता है। निशा के होंठ, गाल और आँखें एक साथ मुसकरा रहे थे, वह प्रेम में अभिभूत थी। वह इसी कल्पना में थी कि जब निमेश इस बिरयानी वाले सरप्राइज को देखेगा, तो कितना खुश होगा।

बाहर बादलों की गड़गड़ाहट हो रही थी, जैसे ही बिजली के कड़कने की आवाज निशा के कानों में पड़ी, वह विचारों के समर से बाहर आई। उसे लगा, जैसे अभी थोड़ी देर पहले वह किसी दूसरे लोक में विचरण कर रही थी। तुरंत घड़ी की ओर नजर गई। ११ बजने में अभी भी १५ मिनट कम थे, बाहर हल्की-हल्की बारिश शुरू हो चुकी थी। निशा ने मोबाइल उठाया और निमेश को मैसेज किया, 'व्हेयर आर यू···!' निशा अपने मोबाइल में व्यस्त थी, उसी समय निशा की बॉस चैंबर से बाहर निकली और निशा की ओर मुखातिब होते हुए बोली, ''क्या बात है निशा, आज तुम बहुत सुंदर लग रही हो, कोई फंक्शन में जाना है या कोई और खास बात है?''

''नहीं मैडम, बस यों ही।'' निशा ने मुसकराते हुए कहा।

''अच्छा ठीक है, मुझे जी.एम. साहब ने बुलाया है, मैं उनके ऑफिस में जा रही हूँ।'' निशा की बॉस निशा को अपने जाने का कारण बताते हुए दरवाजे के बाहर दाखिल हो गई।

निशा ने फिर से घड़ी की तरफ देखा, ११ बजनेवाले थे, लेकिन निमेश का कोई अता-पता नहीं, न ही उसका कोई रिप्लाई आया और न ही फोन, निशा मन-ही-मन कुढ़ रही थी। वह उठकर खिड़की के पास खड़ी हो गई। खिड़की की दूसरी तरफ छोटी-छोटी बूँदें बरस रही थीं। ऑफिस के पीछे की तरफ स्कूल के मैदान में मछुआरों के बच्चे बारिश में खेल रहे थे, खिड़की के बाहर का नजारा निशा बड़े कोतुहल से देख रही थी। खिड़की के बाहर अपना हाथ बढ़ाकर निशा बारिश की बूँदों को अपनी हथेली में समेटने लगी। हथेली में भरे बारिश के पानी को देखते ही उसे याद हो आया कि निमेश को खाना खाते वक्त साथ में पानी पीने की आदत है। जल्दी-जल्दी खाना खाने के स्वभाव के कारण कई बार खाना गले में अटक जाता है, इसलिए जब भी वह कुछ खाता है, तो पानी जरूर साथ रखता है। जब निशा उसके साथ होती और निमेश के गले में खाना अटक जाता, तो निशा उसे चिढ़ाते हुए कहती—ओह···तो आपकी गर्लफ्रेंड आपको याद कर रही है और उस स्थिति में निमेश से न निगलते बनता न उगलते। इस बात का विचार आते ही निशा की हँसी छूट पड़ी। अगले ही पल उसने अपने आपको सँभाला।

निशा ने अपने बैग से पानी की बोतल निकाली और टिफिन के साथ रख दी, जिसमें वह निमेश के लिए बिरयानी लाई थी। इससे पहले कि वह अपनी सीट पर जाकर बैठती, उसकी टेबल पर पड़ा मोबाइल वाइब्रेट हुआ। निमेश का मैसेज था, 'हाय···आई एम एट डाउनस्टेयर्स, कम फास्ट।'

निशा ने तुरंत मैसेज का रिप्लाई दिया, 'वहीं रुको···मैं अभी एक मिनट में पहुँचती हूँ।' निशा ने टिफिन और पानी की बोतल उठाई और उसके पाँव अपने आप ही सीढ़ियों पर नीचे की ओर भागे जा रहे थे।

अधिकारी (रा.भा.), एम.आर.पी.एल.
पोस्ट-कुत्तेतूर, वाया काटिपल्ला
मंगलुरु-५७५०३० (कर्नाटक)
दूरभाष : ०९७३८३५४०७२

ललित निबंध

# लोकोत्तर या लोकायित काव्य

● **ओमप्रकाश सारस्वत**

अरुणोदय होते ही अवसन्न विश्वमन के विजड़ित द्वार, बंद घरों, हवेलियों के लौह कपाट, अंधगुहा मार्ग एवं चिंतन के शतसहस्रार देखते-ही-देखते खुलने-खिलने लग जाते हैं। सुनहरी सुबह का निर्मल-आलोक समस्त जड़-जंगम को अपने आगोश में भर लेता है। अणु-परमाणु दिपदिपा उठता है। एक अलौकिक-ज्योतिपर्व के महावतराण का मुहूर्त घटित हो जाता है।

स्वत:संभूत प्रज्ञान के आधान हमारे विश्वचेता ऋषियों ने अरुणोदय की इस महावेला का जब प्रथम-प्रथम साक्षात्कार किया, तब उनके हर्षातिरेक के निनाद से दिग्दिगंत स्पंदित हो उठा। दिशाएँ प्रसन्न हो खिलखिलाने लगीं। खगकुल नव-नव छंदों में गाने लगा। मरुत् मस्ती में झूम उठी और निरभ्र आकाश की हँसी और उज्ज्वल हो गई।

ऋषिकुल अगणित सिद्धमंत्रों, अनुपम स्तोत्रों, अनंत स्तुतियों से इस अपूर्वा के स्वागत-सत्कार में जुट गया। अक्षय ऊर्जा के इस रक्तलोहित गोले को देख संसार की धमनियों में खून की ललाई बढ़ गई। ऋषियों की कृतज्ञता, उनकी कल्पना, उनकी कविता एवं उनकी कला, नृत्य के अकूत गतिचारों में थिरकने लगी। उनका आर्षमन सहसा ही पुकार उठा, देखो रे, देखो! विधाता के इस अलौकिक लोकायित सद्योजात देव काव्य को—पश्य देवस्य काव्यम्। अलौकिक सोने की स्याही से लिखी यह स्वर्णिम कविता धरती की पट्टी पर पाली-दर-पाली बिखरी पड़ी है।

प्रत्येक उषाकाल में इसी कविता की भास्वरता विराजती है, । चरैवेति-चरैवेति से प्रेरित यह ज्योति, सतत प्रसरणशील और विकासशील है। यही देती है प्रत्येक प्राणि को अथाह उत्साह और अखंड विश्वास का संस्कार। यह सुषुप्ति की जागृति और जागृति की उपस्थिति है।

इसकी अक्षयता को देखकर ही तो कहा है कि यह चितिगर्भ काव्य, 'न ममार न जीर्यति।' लोकोत्तर होता हुआ भी लोकायित यह काव्य न कभी मरता (नष्ट होता) है और न कभी जीर्ण (पुराना) पड़ता है। यह विधाता की क्षण-क्षण नवीन रहने/होनेवाली सृष्टि है।

प्रात:-प्रात: इस ज्योतिपर्व को देखकर आनंदितचित्त ऋषि आस-पड़ोस को संबोधित कहे पुकार उठा—हे पुण्यात्माओ! हे निर्मल-विरुज मनो! आओ, इसे देखो, इसे जानो, इसे जियो, इसे पहचानो! इसका स्पर्श लो! इसकी तरलता में नहाओ। इसकी गुणता पर रीझो। इसकी रीति को जानो। इसकी वर्णवर्णिता को गुनो। इसके समतोल को देखो, न तोला भर अधिक और न माशा भर न्यून।

इस काव्य को काल का शाप नहीं लगता। समय का घुन इसमें छेद नहीं कर सकता। अजरता इसका स्वाभाविक धर्म है। नित्यता इसका

सुपरिचित साहित्यकार। अब तक पाँच हिंदी कविता-संग्रह, पाँच समीक्षा पुस्तकें, चार नाटक-संग्रह, एक ललित निबंध-संग्रह, संस्कृत में एक कविता-संग्रह, तीन समालोचना ग्रंथ, महाकवि कालिदास के 'मेघदूत' का हिंदी पद्यानुवाद और एक कविता-संग्रह पहाड़ी में। देश की अनेक संस्थाओं/अकादमियों से सम्मानित। संप्रति भारतीय इतिहास-चेतना से संबंधित कुछ प्रोजेक्ट्स पर कार्यरत।

प्राकृतिक गुण। एक दृष्टिमधुर सौंदर्य, इसकी स्थायी सत्ता है, इसलिए इस उत्तमोत्तम वैश्विक महाकाव्य की उदारता का आनंद लो। इसके विज्ञान को, स्वरों की उदात्त, अनुदात्त स्वरित शैलियों में, वाणी के परा, पश्यंती, वैखरी रूपों में नव-नव छंदों में बिखराओ। परमचैतन्य का शरीक यह, हमारी आत्माओं का सगोत्री है। यह हमारी आत्मभूता है। यही है वह दिव्य आभा/चेतना, जो आप में, हम में, सब में ब्रह्मांडीय ज्योति की तरह पिंड-पिंड और कण-कण में व्याप्त है। इससे निजता बढ़ाओ, इसमें अपनत्व जगाओ।

ये कल-कल निनादिनी सरिताएँ इसकी प्रेरणा से गतिशील हैं। पंछियों के कंठों में इसी के गीत और परों में इसी की उड़ान है। इसके कहने पर ही आता है सूर्य। इसी के आने पर रँभाती हैं धेनुएँ। धेनुएँ, जो अपने अपरप्राण बछड़ों को देखते ही स्रवित हो उठती हैं। जैसे अलौकिक गौ-वाणी, ऋषि को देखकर अवतरित होती है। ऐसी ही किसी प्रभात वेला को देखकर ऋषि ने कहा कि यह उषा-

*देवानां चक्षु: सुभगा वहन्ती श्वेत नयन्ती सुदृशीकमश्वम्।*
*ऊषा अदर्शि रश्मिाभिर्व्यक्ता, चित्रामघा विश्वमनु प्रभूता॥*

अर्थात् यह उषा देवों की दर्शनमयी आँख; दिव्य दृष्टि को, धरती पर लाती हुई; उसे लोकायित बनाती हुई, पूर्ण दृष्टिवाले सूर्य का नेतृत्व करती सुखदात्री रश्मियों द्वारा व्यक्त होकर अपने विभिन्न-विचित्र ऐश्वर्यों से परिपूर्ण, अपने जन्म को सब में व्यक्त कर रही है। यहाँ पर उषा के प्रकाश; उसकी सामर्थ्य को अलौकिक शक्तिमत्ता से संयुक्त माना गया है। इसीलिए वह उषा-गोमती, अश्वावती, वीरवती है। यह गोमती उषा सर्ववीरा ता अश्वदा अश्वनवत् सोम सुत्वा, अर्थात् वह उषा मनुष्य के लिए कई प्रकार की पूर्णताओं, शक्ति, आंतरिक चैतन्य और प्रसन्नता को लाती है, जो अपनी ज्योतियों, रश्मियों से भास्वर है। सब संभव बलों, शक्तियों से संपन्न है। मनुष्य को जीवन की शक्ति प्रदान करती है,

जिससे वह परम सत्ता के दिव्य आनंद का अनुभव कर सके। यहाँ पर उषा के उस उज्ज्वल और व्यावहारिक रूप को अभिव्यक्त किया गया है, जो व्यक्तियों को अज्ञानताओं से मुक्त कर, उनके बंद द्वारों को खोल, ज्ञान के महाप्रकोष्ठ में प्रवेश कराती है।

आपने देखा होगा कि अरुणोदय पर एक हल्की पद्मप्रभा सी आभा पृथ्वी की शिरा-शिरा में, उसके अंत:करण में संचरित हो जाती है। यही आभा व्यक्ति को, उसके सत्य, उसकी सुंदरता, उसके गार, उसकी शांति, उसकी कांति, उसकी मनोज्ञता, उसके अपनत्व, उसके मनुष्यत्व, उसकी पूर्णता का आभास कराती है। इसी आभा से बनता है व्यक्ति, द्रष्टा, स्रष्टा, प्रष्टा और मनस्वी। कस्मै देवाय हविषा विधेम् में इसी की प्रश्नात्मकता है। निर्णय के निबिड़-संकुल पलों में भी यही है निश्चयात्मिका। कहीं यह अनुभवों/ज्ञान की प्रतीतियों के आधार पर रागारूण, नीलाभ, कुंकुमवर्णि, गुलाबी, रागमय, रक्ताभ, पीताभ, नीलाभ है, तो कहीं यह ज्योतिस्वरूपा अरुणोदय। ये सब नाम, रूप-रंग, हमारी कलादीर्घाओं में वर्णों, प्रतीकों, बिंबों, प्रकाश, उत्साह/खुशी, मंगल, स्वस्तिक एवं लौकिक-अलौकिक वैभव की इबारतें बनकर वर्णित हुए हैं।

मनीषी कहते हैं कि यही पावन ज्योति व्यक्ति के मूलाधार के घुप्प अँधेरों में प्रसुप्त-कुंडलिनी को जगाकर स्वाधिष्ठान, मणिपूर अनाहत, विशुद्ध, आज्ञा और सहस्रार के चक्र-दर-चक्र, दर्रों-दर-दर्रों, घाटियों-दर-घाटियों, बीहड़ों-दर-बीहड़ों, सँकरे-से-सँकरे गुहामार्गों, खतरों भरे प्राणघाती मौकों से ऊर्ध्वारोहण कराकर दिव्य चेतना का संस्पर्श कराती है। इस आभा का अमोघ तेज, गहन से गहनतर और व्यापक से व्यापकतर है। परम लोकों के दीपों में इसी प्रभा की लौ है। यह सामान्य मन, बुद्धि वाक् से परे है। उपनिषद् कहते हैं, यतो वाचा निर्वतन्ते अप्राप्य मनसा सह। जहाँ इस ज्योति का स्रोत है और जो परम-आलोक का मूल है, वही सभी ताराओं, सभी सूर्यों और आकाशगंगाओं में वितन्वित है। उस पावनप्रकाश की यात्रा, जन्म-जन्मांतरों की साधनाओं से प्रापणीय है।

मैं आपको बड़ी दूर ले आया, परंतु यात्राओं-जिज्ञासाओं से ही दूरियाँ और प्राप्तियाँ पास आती हैं। ऋषि ने इस उषाकाल को, परम लावण्य का परम कोष, कांति का वृहद् केंद्र, गहन क्रांति का पहला पल, मादकता का मूल और आप्यायित कर देनेवाली सनातन मधुरिमा का पुंजीभूत रूप कहा है। उस अत्यंत लुभावने वातावरण में स्नात होने को कौन समुद्यत नहीं होगा? इस समुदय से विमोहित होकर महाद्रष्टा ने इस काल को ऋग्वेद के बीस सूक्तों में उछल-उछलकर विवेचित किया है। ऋषि के सारे विशेषण इस विश्व सुंदरी के लिए सोच-सोचकर सजाई गई रेशमी शय्याएँ हैं। उसने परमलालित्यपूर्ण इस प्रकृतियोषा को सर्वोच्च सौंदर्य सत्ता मानकर अपनी अनुस्तुतियों के अनेक अंतरपट खोले हैं। भारतीय साहित्य में नारी के संदर्भों में उभारे सारे सौंदर्यवाची विशेषणा पर्याय इसी परंपरा में शालीन स्तरीयता के उदाहरण हैं—वेद में जिन, पृथ्वी, उषा, वाक् आदि को देवता कहा गया है, वे सब नारी गुणात्मा हैं।

नारी के श्रेष्ठत्व में देवत्व के गुणों का अभिधान है। पिता के घर की लाडली ये पति की प्रियाएँ हैं। ये अपने कुल की शोभा होकर भी पति के घर का गार हैं। ये विवाह काल तक ब्रह्मचारिणी, उच्चशिक्षा, संस्कारसंपन्ना तथा अपना पति चुनने में स्वतंत्र हैं। ये घर के कामों में दक्ष और रणकौशल में निपुण हैं। ऋग्वेद में पत्नी पति के प्रति प्रेम रखनेवाली, एकनिष्ठ तथा हर काम में सहभागिनी कही गई है। असती, विपथगामिनी और पति से द्वेष रखनेवाली नारी असंस्कारी बताई गई है। ऐसे ही पति भी, अपनी पत्नी के प्रति एकनिष्ठ, सदाचारी और सच्चरित्रवान् होना काम्य है।

वैदिक साहित्य में उषा के बहाने नारी की प्रकृति को ही उपन्यस्त किया गया है। उषा की ही तरह लोक की नारी की भी विभिन्न भूमिकाएँ हैं। वह कहीं सूर्य की प्रेयसी है तो कहीं चमकीले कपड़े पहने एक नर्तकी। सूर्य युवक की तरह उसका पीछा करता है। कहीं यह रात्रि की छोटी बहन है तो कहीं स्वर्ग की दुहिता। ऋषि द्वारा प्रयुक्त अधिकाधिक रिश्तों के नाम, परवर्ती भारतीय रचनाओं एवं हमारे समाज के कौटुंबिक संबंधों में सादर गृहीत हैं। इससे भारतीय समाज-परिवारों में, रिश्तों के नामकरण में एकरूपता आई है। इस दृष्टि से भारत के चिंतकों की विश्वपरिवार को यह अन्यतम देन है। इससे एक सुदृढ सामाजिक व्यवस्था को मानक आधार मिला है।

ऋषि ने नारी को पुरुष की अर्द्धांगिनी कहकर व्यक्ति मनोविज्ञान, समाज-विज्ञान, शरीर-विज्ञान, मानवीय संरचना विज्ञान के एक बहुत बड़े रहस्य को उजागर किया है। शरीर विज्ञानी जानते हैं कि हर पुरुष में नारी के और हर नारी में पुरुष के आधे-आधे तत्त्व/गुण रहते हैं। नारी से पुरुष बनने और पुरुष से नारी बनने की सच्चाई को शल्यचिकित्सा विज्ञान ने 'अब टेबल पर ऑपरेट कर' यथार्थत: दिखा दिया है। हमारे यहाँ दर्शन में शिव-शक्ति के योग/संयुक्ति की महापरिकल्पना, इसी तथ्य को समक्ष रखकर की गई है। कहते भी हैं 'जहाँ शिव वहाँ शक्ति' और 'जहाँ शक्ति वहाँ शिव'। शिव-शक्ति अथवा पुरुष-स्त्री, दोनों का सत्य ही मिलकर सृष्टि का संपूर्ण सत्य बनता है। विश्व में जहाँ कहीं भी कोमलता, करुणा, दया, प्रेम-माया, ममता, सौंदर्य, स्नेह और आकर्षण है, वहाँ नारी है और जहाँ कठोरता, पौरुष, साहस, ऊर्जा, ओज और दृढता है, वहाँ पुरुष है। सृष्टि रहस्य का न्याय, दोनों की सहभागिता, समवर्तिता और समरसता पर आधारित है।

रक्षम् के चारों ओर भीमकाय, शत-सहस्रभुजमहारक्षकों को देखकर मैं निश्चय नहीं कर पा रहा था कि ये उन्नतकंधर महाशैल किस दीर्घतपा, महातपा, उग्रतपा, कृछ्रतपा/परमतपा महर्षि की यज्ञाहुतियों से निर्मित संसार है। सत्य, न्याय, परोपकार और तप के प्रचार के लिए ऋषि के अन्यत्र स्थानांतरित हो जाने पर गर्वाभिभूत, स्वाभिमानसंयुत, दर्पप्रेरित, नैतिक हौसलों और अडिग साहस के जीवंतरूप ये देवदारु अपनी संततियों समेत दृढ़चरण हो व्यवस्थित हैं। मुझे लग रहा है कि अपनी कर्मभूमि/तपोभूमि को तजते समय, महोग्र तप:पूत पिता के इन पुत्रों ने (पितृऋण से मुक्ति हेतु) प्रतिज्ञा कर कहा होगा कि हे पिता! जाओ, हम सदा सावधान, जाग्रत्, अनिमेष आपकी यशस्काय कीर्ति को, आपकी पवित्र भारती के आकाश को, आपकी पुण्याहुतियों की पवित्र यज्ञभूमि और

कल्याण-कामनाओं की इस उत्स पुण्यप्रसू को सदा-सर्वदा अक्षुण्ण और संरक्षित रखेंगे। जब तक आप नहीं लौटते, हम तब तक अपनी इस जन्मभू को परिवारित किए रहेंगे। निर्मल मन की गहराइयों से निकले वचन अपनी संपूर्ण संभावनाओं में प्रतिफलित होते हैं। महामना उस ऋषि के वश्यवाक् पुत्रों की ब्राह्मीवाणी अपनी संपूर्ण सत्यता में यथार्थ सिद्ध हुई।

रक्षम् की इस विरज-नीरुज उषा की प्रकृति हर किसी को रंजित करने में सक्षम है। इसने अपने मोहपाश में सबको बाँधा है। जितने जलचर, भूचर और खेचर हैं, वे सब अपार इस स्वर्गीय आभा पर विमुग्ध हैं। यहाँ रक्षम् की करुणा, वसपा की पावन धारा में मिलकर चट्टानों के महाकांतार के स्रोतों में विगलित हो बुद्ध की महाकरुणा का महोत्सव रच रही हैं। यहाँ का पत्ता-पत्ता, पादप-पादप, तृण-वीरुध, लता-वल्लरियाँ सब इस धरती का गान गा रहे हैं। एक-दूसरे के सुर में सुर मिलाते हुए ज्यों 'हाँ में हामी' भर रहे हैं। मैं इन सबसे अभिभूत हूँ। इसके आत्मीय सत्कार से विनत हूँ। मैं अंतरात्मना मुदित हूँ। किंतु ऊँची-ऊँची चट्टानें, असंगठित नुकीले प्रस्तर, कराल काल की तरह मुँह बाए अभिशापों की तरह खड़े हैं। मुझे उनसे भय लग रहा है। मैं मूलत: एक भयापन्न प्राणी हूँ। मैं मनुष्येतर हरकतों से डरता हूँ। इतना ही नहीं, मैं तो मानवीय दुर्बलताओं, अनीति, दुष्टता, धृष्टता, ईर्ष्या से भी भय खाता हूँ। निर्लज्जता, अमर्यादा, अनैतिकता मुझे विकंपित कर देते हैं। प्रभु, मुझे नैतिक साहस दें, ताकि मैं हितकर मूल्यों पर अडिग रहूँ।

२२ मई, २०१५ की विमल-अमल प्रात: है। भगवान् विष्णु अपने प्रभुविष्णु महाकाव्य के प्रथम अध्याय का अवतार कर रहे हैं। वे अग्रिम स्वर्ण अध्यायों की रूपरेखा बाँध रहे हैं। पंछियों के असंख्य स्वरों में प्रकृति अपनी हजार जिह्वाओं से अहोभाग्यता का समुच्चार कर रही है। बड़ा उल्लसित विहान है। सदानीरा वसपा में ऋषिकुल की रूहें नहा-धोकर तर्पण-अर्चन-वंदन कर पुण्यात्मा प्रवाहिनी के तट पर रचनाओं का उत्सर्जन कर रही हैं। वसपा ऋषियों की शुभाशंसाओं/प्रशंसाओं से संस्कारित है और सद्य:स्नाता उषा भी युवती, प्रौढ़ा, नवोढ़ा, योषिता, कामिनी, कांता, भामिनी, मामा, कमनीया कमालानना, पद्मा, पद्मजा, शुश्रा, कल्याणी, पद्मवर्णा, भास्वरा हो समुनुला दिखाई दे रही है। एक स्वर्गिक आनंद, वसपा के अल्हड़ सौंदर्य से अभिभूत अठखेलियाँ कर रहा है। मेरा मन उस समय आंतरिक विशदता से लघु-लघु, गुरु-गुरु, मोहित-विमोहित हो रहा था। मैं अचंभित, हर्षित, गर्वित था।

मैंने अपने फोन-कैमरे से उस दिव्य आभा का, उस मनोरम दृश्य का, उन गिरि-शिखरों पर उतरती सोन प्रभा के कई चित्र कैद कर लिये।

**वातावरण बहुत ही शांत और उत्सवनुमा था। बेटे ने चारों ओर के शिखरों पर उतरती स्वर्णाभा के अनेक मनोरम रूप अंकित किए। मैं उसकी प्रसन्नता और सक्रियता देखकर मुग्ध था। हर क्लिक पर उसके मुख से 'वाह' निकल रहा था। गुलाबी ठंडक लिए उस प्रात: में भी स्वर्गिक आतप जब तक गेस्ट हाऊस के आँगन तक नहीं उतर आई, बेटे ने उस दिव्य आपदस्नात समय की एलबम तैयार कर ली। तभी उसकी माता और माता की सहेली ने भी हमें ज्वॉइन कर लिया और अपनी नारी-सुलभ प्रकृति के अनुसार, 'हमें हिल्लोलित करके क्यों नहीं जगाया' के उलाहने के साथ यथारुचि कुछ चित्र संगृहीत किए।**

मैं तत्काल अपने साथ आए आत्मीयों को जगाने का आदेश-गर्भित अनुरोध करने लगा। बेटा, मेरी आवाज सुनकर उसी समय अपना कैमरा लेकर बाहर आ गया। तब मैंने जाना कि मन से पुकारो तो आत्मा सुनती है। पुत्र अपनी आत्मा का कायांतरण है। कहा भी है—आत्मा वै जायते पुत्र:।

वातावरण बहुत ही शांत और उत्सवनुमा था। बेटे ने चारों ओर के शिखरों पर उतरती स्वर्णाभा के अनेक मनोरम रूप अंकित किए। मैं उसकी प्रसन्नता और सक्रियता देखकर मुग्ध था। हर क्लिक पर उसके मुख से 'वाह' निकल रहा था। गुलाबी ठंडक लिए उस प्रात: में भी स्वर्गिक आतप जब तक गेस्ट हाऊस के आँगन तक नहीं उतर आई, बेटे ने उस दिव्य आपदस्नात समय की एलबम तैयार कर ली। तभी उसकी माता और माता की सहेली ने भी हमें ज्वॉइन कर लिया और अपनी नारी-सुलभ प्रकृति के अनुसार, 'हमें हिल्लोलित करके क्यों नहीं जगाया' के उलाहने के साथ यथारुचि कुछ चित्र संगृहीत किए। वैसे जागने को बहाना और जगाने को इशारा भर पर्याप्त होता है, परंतु...। देह के अंदर स्थित प्रज्ञाकूट की तरह अनेक चक्रों से परिवारित प्रकृति के विशुद्ध चक्र-सा प्रतीत होती पर्वतकूट माला हजारों कल्पनाओं और लाखों संभाव्यताओं को उजागर कर रही थी। रक्षम् की लोकोतर छटा तन-मन को सहलाकर आत्मा तक को नहला रही थी।

कभी प्राग्ज्योतिषपुर गए सिद्ध गुरु गोरखनाथ ने वहाँ कामाक्षी मंदिर के यहाँ पर्वतों से उतरे अनघ प्रकाशप्रवाह को देखा, तो भूमा उस माहात्म्य का भेद अनेक रूपों में दृष्टिपथ में अक्षरांकित हो गया। देहलोक के प्रज्ञाचक्रों का साक्षात्कार कर चुकी उनकी प्रतिभा की आँख ने कामरूप की सिद्ध-प्रसिद्ध 'कामाख्या पीठ' को आध्यात्मिक चक्रों के समांतर पाया। सिद्धप्रवर की पश्यंती मेघा प्रकटी और वे बोल उठे—

आधारं प्रथमं चक्रं, स्वाधिष्ठानं द्वितीयकम्।
योनिस्थानं द्वयोर्मध्ये पङ्कज च चतुर्दलम्॥
तन्मध्ये प्रोयते योनि:, कामाख्या सिद्ध वन्दिता।

अर्थात् प्रथम चक्र जो मूलाधार है और दूसरा जो स्वाधिष्ठान, इन दोनों के मध्य है योनिस्थान और वही काम (रूप) पीठ है। मूलाधार संज्ञक, गुदा के समीपस्थ चतुर्दल कमल के मध्य त्रिकोणाकृति योनि है—यही कामाख्या पीठ कहलाती है। मुझे लगा कि सब ओर से रक्षित यह रक्षम् भी इस देवधरा की विरजा योनिस्थली है, जो सहस्रों जीवात्माओं की जननी है।

सभी सात चक्रों के अपने-अपने स्वरूप हैं, जो कमल दलों की तरह विवेचित हैं। ये अपनी-अपनी विशिष्टताओं के द्योतक हैं। कुंडलिनी

जिस-जिस पद्म चक्र के दलों का विकचन करती है। वे दल साधक-योगी को अपनी-अपनी सामर्थ्यों से भर देते हैं। आत्मद्रष्टा योगियों ने मूलाधार के चार, स्वाधिष्ठान के छह, माणिपूर के दस, अनाहत के बारह, विशुद्ध के सोलह, आज्ञा के दो और सहस्रार के हजार दल/पत्र करे हैं। इन पत्रों के संपर्क में आने पर बुद्धि तत्तत् कार्यों की अचूक क्षमता-दक्षता पा जाती है। कुंडलिनी के प्रथम चक्र मूलाधार से संपर्क हो जाने पर विद्या-आरोग्य की प्राप्ति, दूसरे चक्र के संपर्क से काव्य-प्राप्ति, तीसरे से विविधविद्या-सामर्थ्य, चौथे से ईशत्व, पाँचवें से वक्तृता, छठे आज्ञा से वाकसिद्धि और अंतिम सातवें चक्र के संपर्क से मुक्ति प्राप्ति कही गई है। शरीर के पंचतत्त्वों से भी क्रमशः मूलाधार का पृथ्वी तत्त्व से, स्वाधिष्ठान का जल से, मणिपूर का तेज से, अनाहत का वायु से, विशुद्ध का आकाश से, आज्ञा का महत् से और सहस्रार का तत्त्वातीत निःसीम से योग माना गया है। इन तत्त्वों के क्रमशः रक्त, सिंदूरी, नील, अरुण, धूम्र, श्वेत और वर्णातीत रंग कहे गए हैं। मनीषी सातों चक्रों का संबंध उत्तरोत्तर, भूः, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः, और सत्य लोकों से भी जोड़ते हैं। इन सभी चक्रों का विकास हो जाने पर व्यक्ति सतत अनेक लोकों के संपर्क में आने की योग्यता हासिल कर लेता है। आत्मविज्ञान इन चक्रों के स्थान के बारे में पहले चक्र मूलाधार की स्थिति गुदा व योनि, दूसरे की पेडू तीसरे की नाभि, चौथे की हृदय, पाँचवें की कंठ, छठे की भ्रूमध्य और सातवें सहस्रार की संस्थिति मस्तिष्क में कहता है। कुछ साधक अन्नादि पंच कोशों और त्रिनाड़ियों सषुम्नादि से भी कुंडलिनी जागरण ऊर्ध्वारोहण को अनुसूत्रित करते हैं।

मैं सोच रहा था कि हमारी यात्रा भी कई सँकरे मार्गों, बीहड़ दर्रों, भयावह मोड़ों से होती हुई, मूलाधार, शिमला से प्रारंभ होकर रामपुर के स्वाधिष्ठान से चलकर, वांगतू के मणिपूर से चढ़कर साँगला की अनाहत वैली से गुजरती हुई रक्षम् के विशुद्ध द्वार पर पहुँची है। अगले दिन छितकुल के आज्ञाचक्र को छूकर प्रदेश के सीमोत्तर देश में मनसा प्रवेश हेतु तत्पर है। आत्मा आज एक अनिर्वचनीय आनंद का अनुभव कर रही थी।

रक्षम् से हिमाचल के अंतिम सीमावर्ती गाँव छितकुल की दूरी एक घंटे भर की है। वहाँ जाने के लिए हम सभी बहुत उत्साहित थे। होते भी क्यों न? प्रदेश के आखिर एक सीमांत गाँव को देखने का दुर्लभ अवसर मिल रहा था। रक्षम् रेस्ट हाऊस के चौकीदार को धन्यवाद कहकर हम लक्ष्य की ओर अग्रसर हुए। गहरे गड्ढों, भयंकर खाइयों के साये मन-मस्तिष्क पर हावी थे। देखते-ही-देखते सँकरे मार्ग को प्रशंसनीय धैर्य, सावधानी और तत्परता से स्ववश करते हुए उत्सव ने सूचना दी कि छितकुल कुल बीस मिनट का सफर है। तभी हम भूर्जवृक्षों के एक बड़े प्राकृतिक उपवन में प्रवेश कर गए। हमने तत्काल गाड़ी रोक दी। असंख्य वर्षों से असंख्य रूपों में जिनकी महिमा गाई जाती रही है, हमने उन परम पवित्र वृक्षों के दर्शन करके स्वयं को धन्य माना। मैंने उत्सव को इन वृक्षों की महत्ता, गुणवत्ता, श्रेष्ठता तथा उपयोगिता के बारे में बताया। मैंने कहा, बेटे! हमारे हस्तलखित उस आदि आर्ष ज्ञान के संरक्षक ये भूर्जवृक्ष ही हैं। इनके ही पत्रों और छाल पर हमारे प्रथम आचार्यों ने वेद-वेदांग, उपनिषद्, आरण्यक एवं ब्राह्मण ग्रंथ आरेखित किए। तरह-तरह के छोटे-बड़े वृक्षों की एक साथ अवस्थिति को देखकर, मन सहअस्तित्व। सहवर्तित्व के बोध से उल्लसित हो उठा। मैंने उस उत्सर्गपरायण महान् वृक्ष परंपरा को मन-ही-मन शत-सहस्रशः प्रणाम किए। जिस वृक्ष संतति ने सरस्वती की रक्षा अपनी खाल-छाल देकर की। यह वृक्ष परंपरा सर्वथा-सर्वदा नमस्य है। धन्य है यह महा देश, वृक्ष तक अपनी जननी, जन्मभूमि तथा संस्कृति की सुरक्षा हेतु वीरों की तरह सदा तन-प्राण तक न्योछावर करने को तत्पर रहते हैं।

जी-६, नॉल्जवुड कॉलोनी
शिमला-१७१००२ (हि.प्र.)
दूरभाष : ०९४१८०५४०५४

लघुकथा

# लड़खड़ाते कदम

● रीता गुप्ता

पचहत्तर वर्षीय बूढ़े माँ-बाप जब अपने रोजमर्रा के कार्य करने में अक्षम होने लगे तो अड़ोसी-पड़ोसी और रिश्तेदारों ने उनके बेटे को खबर भेजना शुरू कर दिया कि आकर ले जाए उन्हें हमेशा के लिए अपने साथ। वीजा-पासपोर्ट बनवाने और भी कई बाधाओं को पार कर बिहार के एक अंदरूनी गाँव से दोनों पहुँच गए सिडनी (ऑस्ट्रेलिया); जहाँ बेटा एक अंग्रेजन से ब्याह कर गृहस्थी जमाए हुए था। दोनों बिटिर-बिटिर ताक रहे थे, डरे-सहमे से बेटे की गृहस्थी में। बेटा पूरे तनाव से लगा हुआ था उन्हें वहाँ के तौर-तरीके और ढंग सिखाने में। पर कहीं पक्के घड़े पर मिट्टी चढ़ती है।

उस दिन भी बिल्डिंग के कॉरिडोर में गरम मसालों और सरसों तेल की बदबू (खुशबू) भर गई थी। अगरबत्ती के धुएँ से फायर अलार्म बज गया था। बालकनी से साड़ी लटक गई थी। बिल्डिंग की सेक्रेटरी ने दो बार चेतावनी दे दी थी। अब बेटा और माँ-बाप दोनों का आत्मविश्वास डगमगा गया था। सिर पर हाथ रखे बेटा दुःखी स्वर में बोल उठा, 'का करी ए बाबु, कईसे का करीं कि राउआ के इहाँ हाम राख सकीं?'

'ना बबुआ! अब हमनी के वापस भेजिए द, तोरो दिक्कत होखत बा हमनी के कारन।' माई ने कहा।

तभी अब तक निर्लिप्त सी रहनेवाली बहू ने आकर सास-ससुर की हथेलियों को थाम लिया और अंग्रेजी में गिटपिटाते हुए कुछ कहा, भले ही भाषा समझ नहीं आई, पर भावनाओं ने दिल के तार जोड़ लिये।

रायगढ़, छत्तीसगढ़
दूरभाष : ९५७५५६४८५२

# जी गांधी

*मूल* : **कंनाडिगा नारायणा**
*अनुवाद* : **डी.एन. श्रीनाथ**

अरुण गांधी कंधे से लैपटॉप का बैग उतारकर जब व्हील चेयर पर बैठ गया तो एक नौकर आया, जिसने सफेद वरदी पहन रखी थी। उसने एक लिफाफा अरुण गांधी को दिया और उसका हस्ताक्षर लेकर चला गया। हर रोज ऐसे कई पत्र आते थे, यह सहज ही था। मगर आज अस्वाभाविक रूप से लिफाफे पर उसका नाम दर्ज था। उसने कौतूहलवश उसे खोलकर देखा तो उसमें पिंक कार्ड था।

अरुण गांधी अभी-अभी ए.सी. होंडा सिविक कार से उतरकर आया था, फिर भी सारे बदन से पसीना बह रहा था। न जाने क्यों आँखों के आगे अँधेरा छा गया। आगे का सबकुछ एक निर्वात के सामन···शून्य-शून्य दिखने लगा। उसने ऐसी एक संभावना की निरीक्षा की थी, मगर यह इतनी जल्दी अपने ही जड़ में आकर पैठ जाएगी, इसकी कल्पना भी उसे नहीं थी।

'अमरीका का रिसेशन और कर्नाटक की कंपनी का क्या रिश्ता··· इंडियन इकनॉमी बहुत मजबूत है,' ऐसा उसने कल ही अपने दोस्तों के साथ लंच में बड़बड़ाया था। कंपनी ने परसों ही पचास लोगों का संदर्शन लिया था और दस लोगों का चयन कर लिया था। इसी कंपनी में वह दूसरे बड़े ओहदे पर था। उन सबों ने नौकरी के लिए उससे सिफारिश लेने के लिए उसे इंप्रेस करने की कोशिश की थी। उनमें से कुछ लोगों को पता था कि अरुण गांधी का फैसला ही अंतिम है। अलग-अलग कंपनियों के जान-पहचानवालों से, जो बड़े-बड़े ओहदों पर थे, यों ही फोन भी करवाए थे। अरुण गांधी ने इन सबके नाम लिख लिए थे और बड़ी चालाकी से उन्हें ही महसूस करा दिया था कि वे सचमुच इस कंपनी के लिए योग्य ही नहीं हैं, मगर अब···

अरुण गांधी ने देखा—एक चेक था। अपने इतने दिनों के पगार का हिसाब करके अंतिम व्यवस्था की गई थी। चौदह दिनों का पगार सत्तर हजार रुपए! अर्थात् महीने के डेढ़ लाख रुपए। कल ही जिन दस लोगों को नौकरी पर लिया गया था, उन सबका पगार कुल मिलाकर एक लाख रुपए नहीं होता था। यानी उसे निकालने से दस लोगों को नौकरी और पाँच लोगों की पगार बच गई थी।

अरुण गांधी ने सोचा कि एम.डी. के चेहरे पर त्यागपत्र फेंककर कह दूँ कि मुझे नौकरी से निकालनेवाले तुम कौन होते हो, तुम्हारी घटिया कंपनी में नौकरी करने के लिए मेरी भी इच्छा नहीं थी। मगर फिर सोचा कि सात साल पहले वह खाली हाथ बेंगलुरु आया था, इस कंपनी ने उसे आसरा दिया था, एक करोड़ का अपार्टमेंट दिया था, सभी सुविधाओं से

सुप्रसिद्ध लेखक एवं अनुवादक। कन्नड़-हिंदी में परस्पर अनुवाद की साठ पुस्तकें प्रकाशित। साहित्य अकादमी का अनुवाद पुरस्कार, कर्नाटक साहित्य अनुवाद अकादमी पुरस्कार, कमला गोयनका अनुवाद पुरस्कार, गोरूर पुरस्कार, विश्वेश्वरैया साहित्य पुरस्कार आदि पुरस्कारों से पुरस्कृत।

भरपूर कार दी थी। ऐसी कंपनी को बुरी तरह से गालियाँ देकर अपने को कृतघ्न कहलाना अच्छी बात नहीं। मगर कार और घर की याद आते ही सोचा कि कितनी किश्तें बाकी हैं···तो तुरंत बैंक को फोन किया। उत्तर आया कि आधी रकम जमा हो गई है। उसे तसल्ली हुई। अगर बाकी आधी रकम न चुकाने पर बैंक से सुपारी पानेवाले गुंडे ढूँढ़ते हुए आएँगे और सबकुछ अपने कब्जे में ले लेंगे तो? यह सोचकर और परेशान हो गया।

उसके सह-कर्मचारियों ने सोचा कि अब तक यह हमारा बॉस था, रिसेशन के शिकार में फँस गया; उन्होंने ऐसा अभिनय किया, मानो वे इसके बारे में जानते ही नहीं। वे इस पर एक नजर रखते हुए इसकी सभी धड़कनों को खुशी से महसूस करते हुए अपने-अपने काम में लग गए थे। वे भूल गए थे कि इसी पल या दूसरे ही पल में उन्हें भी नौकरी से निकाले जाने का पत्र आ सकता है। वे अरुण गांधी पर नाराज होकर कभी-कभी तिरछी नजरों से देखते हुए सोचते थे कि यह हम पर ही बासिस्म करता था, अब किस पर करता है, देखेंगे!

अरुण गांधी को लगने लगा कि उसे कोई देख रहा है। उसने चारों ओर नजर दौड़ाई। कोई भी उसकी ओर नहीं देख रहा था, मगर फिर लगा कि सभी उसकी ओर ही देख रहे हैं। वह काँटों की कुरसी पर बैठा है, ऐसा उसे एहसास हुआ। उसे लगा कि उसे सबकी नजर बचाकर दौड़कर चले जाना चाहिए।

फिर भी एक बार एम.डी. से बात करूँ, यह सोचकर उस कमरे में गया। एम.डी. ने उसे ऐसे देखा, मानो वह सबकुछ जानता है, कहने के लिए कुछ भी बचा नहीं है। उसने एक मुसकराहट फेंकी। गांधी ने सोचा कि इसके साथ बातचीत करने का कोई फायदा नहीं है। और वह जुगुप्सा में उठकर आया।

□

अरुण गांधी सूटकेस के जैसे लैपटॉप के बैग को तिपाई पर फेंककर सोफे पर बैठ गया। सामने की दीवार पर टँगी हुई पोपले मुँहवाले गांधी

की तसवीर पर उसकी नजर पड़ी। पोपले मुँहवाला गांधी हँस रहा था। उसे लगा कि उसके भूतपूर्व एम.डी. के समान गांधी भी उसे देखते हुए जुगुप्सा में हँस रहा है। उसे अपमान का एहसास हुआ।

इस गांधी की वजह से ही उसे इतना सबकुछ अपमान झेलना पड़ा। वह इतना नाराज हुआ कि उसने सोचा, गांधी की फोटो को ही फाड़ देना चाहिए। प्राइमरी स्कूल से बी.ए. करने तक उसके दोस्त उसे 'ये गांधी···वो गांधी···' कहते और खिल्ली उड़ाते थे।

एक बार उसकी इच्छा हुई कि यह नाम उससे कैसे चिपक गया, इसके बारे में शोध करना चाहिए। पिताजी के गले का कॉलर पकड़कर पूछना चाहा, मगर उनको गुजरे बीस साल हो गए थे। गांधी उनका सातवाँ बेटा था। आज नाम रखेंगे, कल रखेंगे, ऐसा सोचते-सोचते दिन बीतते गए और घर में उसे 'पापच्ची' नाम से पुकारने लगे, आखिर यह नाम ही रह गया, ऐसा माँ ने बताया था।

जब घर-घर आकर स्कूल में भरती कराने का अभियान चल रहा था, तब अरुण गांधी खेल रहा था। तभी मास्टरजी ने उसे पकड़ लिया। उन्होंने उसकी परीक्षा लेनी चाही और उससे दाहिने हाथ से बाएँ कान को पकड़वाकर देखा। लिख लेने के लिए उससे नाम पूछा। तभी मालूम हुआ कि उसका नाम ही नहीं रखा गया है। पास में जो खड़ा था, उससे मास्टर ने मजाक किया कि इसे नाम का ही पता नहीं, फिर जन्मतिथि के आगे क्या लिखना। तभी उसके बड़े भाई ने कहा, ''मुझे मालूम है।'' फिर वह दौड़कर अंदर गया और अपनी नोटबुक में उसकी जन्मतिथि, जिसे उसने लिखकर रख दिया था, ढूँढ़ लाया और उन्हें दे दी। उसकी जन्मतिथि दो अक्तूबर थी, यह देखकर पुराने जमाने के मास्टर को अचरज हुआ और वह बड़बड़ाया, 'इस लोकतंत्र में कौन क्या बनेगा, किसे पता।' उन्होंने सोचा कि यह लड़का भी आगे बड़ा आदमी बन सकता है। फिर उन्होंने उसका नाम 'गांधी' रख दिया।

अरुण गांधी जब बड़ा हुआ और कॉलेज में पढ़ने लगा तो अपने गांधी नाम से परेशान हुआ। उसने यह नाम बदल लेना चाहा और नोटरी के पास गया। मैंने बांड पेपर में 'गांधी' नाम को बदलकर 'अरुण' नाम रख लिया है, इस आशय से एफिडेविट लिखकर नोटरी के आगे रखा, तो उन्होंने एक बार इसके चेहरे को देखा, गांधी के साथ गौरव की जो-जो बातें जुड़ी हुई हैं, पट्टी बनाकर उपदेश दिया, ''तुम चाहो तो अरुण गांधी नाम रख लो।'' उसी दिन से यह गांधी, अरुण गांधी हो गया।

अरुण गांधी के पास कोई वाहन नहीं था, इसी वातावरण में वह बड़ा हुआ। उसने कभी नहीं सोचा था कि एक दिन वह हवाई जहाज में बैठकर विदेश जाएगा। मगर जब वह अंतिम साल में पढ़ रहा था, तो एक कंपनी ने उसे नौकरी के लिए चुन लिया था। उस कंपनी ने नहीं पूछा था कि तुम्हारे पास कार या मोटरसाइकल है? कंपनी ने उसे हवाई जहाज में बैठाकर विदेश भेज दिया था।

**अरुण गांधी को 'गांधी' आज न जाने क्यों अधिक आकर्षक लगा। वह फिर गांधी को देखने लगा, मानो उसने गांधी को कभी नहीं देखा हो। जितना भी देखता, फिर-फिर देखने की इच्छा होने लगती। उसे लगने लगा कि गांधी की हँसी की गहराई में कुछ-न-कुछ है। गांधी की तसवीर में अपने आपको देखने लगा···अब उसकी नौकरी छूट चुकी थी, इस संदर्भ में तो गांधी और भी ज्यादा पास आने लगे थे। गांधी आत्मीय लगने लगे।**

अपने देश में तो गांधी नाम से उसे कई अपमानों का सामना करना पड़ा था, मगर विदेश में उसे बड़ा गौरव मिला था, जिसका वर्णन करना असंभव है। यह शायद उस गांधी का वंशज ही होगा, ऐसा सोचकर कई लोग गर्व का अनुभव कराते थे। कुछ लोग इसे इंदिरा गांधीजी के परिवार का होगा, यह सोचकर इसका आदर करते थे। कुल मिलाकर इसका हर काम आसान हो जाता था।

अरुण गांधी ने गांधी के फोटो को देखा, नजर गढ़ाकर देखा···फोटो की उस हँसी में एक तरह का अपनापन था, प्यार था, शांति थी। बुद्ध की मुसकराहट में, बाहुबली की स्थितप्रज्ञता में, बसवण्णा के अंतरंग में जो कुछ रहा होगा, वह उसे गांधी की हँसी में देखने लगा।

अरुण गांधी को 'गांधी' आज न जाने क्यों अधिक आकर्षक लगा। वह फिर गांधी को देखने लगा, मानो उसने गांधी को कभी नहीं देखा हो। जितना भी देखता, फिर-फिर देखने की इच्छा होने लगती। उसे लगने लगा कि गांधी की हँसी की गहराई में कुछ-न-कुछ है। गांधी की तसवीर में अपने आपको देखने लगा···अब उसकी नौकरी छूट चुकी थी, इस संदर्भ में तो गांधी और भी ज्यादा पास आने लगे थे। गांधी आत्मीय लगने लगे।

गांधी ने सोचा कि बाहर जाने से अपमान का सामना करना पड़ेगा, वह पूरे सप्ताह घर में ही बैठा रहा। इंटरनेट में खोजकर जहाँ-तहाँ संभव हो सका, अपने रिज्यूम के साथ अर्जी भेज दी। विदेशों में नौकरी की जो संभावना थी, सबकी जाँच की। मगर कहीं भी नौकरी न पाकर छटपटाया। सोचा कि घर से बाहर आकर जिन-जिन का परिचय था, वहाँ जाकर नौकरी ढूँढ़ू, मगर जिस कंपनी में वह पहले काम कर रहा था, उसका मालिक मैं ही हूँ, ऐसा उसने व्यवहार किया था। अब उनके पास नौकरी की माँग लेकर जाऊँ तो वे क्या सोचेंगे!···उसका अपमान करेंगे, अगर अपमान न भी करें तो भी, कल वह कंपनी बंद नहीं होगी, इसकी गारंटी ही क्या है?

बीवी ने याद दिलाया कि इस महीने का किश्त चुकाया नहीं गया है। आखिरी बार जो पगार मिली थी, उसे उधार पर दिया गया तो नौकरी मिलने तक क्या खाएँगे? बीवी को कैसे पालूँ? पिछले साल ही उसकी धूमधाम से शादी हुई थी। विदेशी कंपनी में नौकरी, डेढ़ लाख की पगार है, यह बात कहकर माँ ने वधु के घरवालों के सामने प्रशंसा की थी और ज्यादा दहेज की माँग भी की थी। मगर लड़की के पिता ने मुसकराते हुए घोषणा की थी कि मैं इतना दहेज दूँगा कि आप कल्पना भी नहीं कर सकते। मगर माँ ने बेटे के सामने अनुमान व्यक्त किया था कि यह

दिखावा मात्र है, क्या सचमुच इतना दहेज देंगे?

बैंक से मैनेजर का फोन आया और उसने बताया कि कार की किश्त अभी तक नहीं आई है। इसने अगले सप्ताह देने की बात कही। मगर मैनेजर ने कहा, ''पता चला है कि आपको नौकरी से निकाल दिया गया है, यह सच है, सर?'' वह आगबबूला हो गया, ''इससे तुम्हें क्या लेना-देना है? हाथ लगा तो दो-चार तमाचा जड़ दूँगा।'' उसने रिसीवर नीचे पटक दिया।

घर में बैठे-बैठे गांधी की व्याकुलता बढ़ने लगी। उसने सोचा, अगर एक दिन मैं घर में रह जाऊँ तो इतना ऊब जाता हूँ, फिर घर में रहनेवाली औरतों की और जेल में बंद कैदियों की क्या हालत होती होगी? दूसरों से अपनी तुलना करके उसे तसल्ली हुई। सिर पर टोपी और आँखों पर काला चश्मा लगाकर बाहर आया, ताकि कोई उसे तुरंत पहचान न सके। मगर बेंगलुरु के लोगों ने उसकी ओर नजर उठाकर भी नहीं देखा। उसने एक बड़ी कंपनी में डेप्युटी मैनेजर की हैसियत से काम किया था, अब नौकरी से हाथ धोकर सड़क पर उतर आया है, कोई भी उसकी ओर नजर उठाकर नहीं देख रहा है, इसका उन्हें कोई परवाह नहीं है और अपने-अपने मतलब से दूसरों को पीछे धकेलने के जोश में आगे-आगे दौड़ रहे हैं, ऐसा उसे लगा। फिर भी एक तरह की तसल्ली हुई। मगर फिर लगा कि बेंगलुरु में करोड़ों लोगों के बीच वह एकमात्र अकेला है। उसने टोपी और ऐनक उतार दी और सोचा कि कोई उससे बातें करे। वह व्याकुलता से तड़पने लगा। अपार्टमेंट की सोलह मंजिल पर जहाँ उसका घर था, आकर कुरसी में धँसकर बैठ गया। बीवी से फैन का स्विच ऑन करने को कहा। मगर बीवी ने कहा, ''बेस्काम वाले फ्यूज लेकर चले गए हैं, अभी तक शुल्क भरा नहीं, ऐसा कहकर चले गए हैं।''

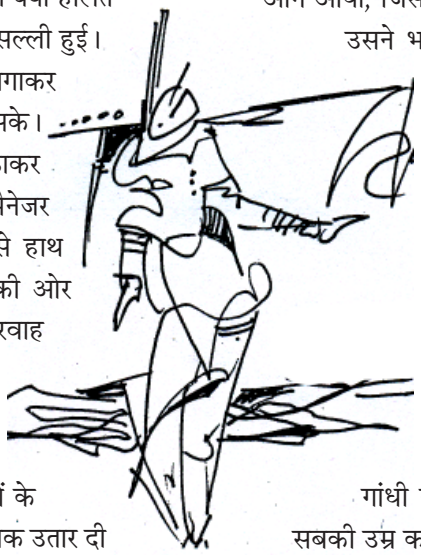

''तो क्या इन लोगों का कानून बड़ा है!'' उसने अपनी बीवी से कहा, ''इनका कानून बढ़िया है। पैसे भरने के लिए समय नहीं मिला, भर दूँगा, ऐसा कहना चाहिए था।'' वह बीवी पर नाराज हुआ। मगर बीवी ने कहा, ''आपको बिल भरने की क्षमता नहीं है, उनके बारे में कहते हो।'' उसे लगा कि बीवी ने तमाचा मार दिया है। इधर उसे नौकरी नहीं है, बीवी भी उसे तुच्छता से देख रही है।

गांधी फोटो फिर हँस पड़ा, ऐसा एहसास हुआ। वह कहीं भी जाए, गांधी फोटो उसी ओर मुड़कर उसे देख रहा है। वह नाराज होकर देखने लगा। अगर गांधी उसका बाप या दादा होता तो उसके गले का पट्टा पकड़कर पूछा जा सकता था। लंच के वक्त टिफिन बॉक्सों के आगे बैठकर बातें करते समय कहा जाता था कि इस गांधी से ही देश का नाश हुआ है, यह व्यर्थालाप उसे याद आया। अरुण गांधी का मन हुआ कि गांधी से सचमुच हमारे देश को कितना फायदा हुआ है, कितना नुकसान हुआ है, इसके बारे में एक सर्वेक्षण करना चाहिए।

अरुण गांधी रोज गांधी-भवन आने लगा और गांधी से संबंधित हर पुस्तक पढ़ने लगा, मानो सबकुछ खा रहा हो। यह अपने क्षेत्र से संबंधित मामला है, इस कारण से गांधी के आर्थिक चिंतन में रुचि लेने लगा। गांधी के बारे में और कुछ भी पढ़ने लगा। 'मैं एक आधुनिक मनोवृत्तिवाला आदमी हूँ, मुझे अपनी ओर आकर्षित करना गांधी के बस की बात नहीं है', ऐसा अरुण गांधी ने सोचा था। मगर अब वह उस पर निछावर हो गया था।

किश्तों को समय पर भरा नहीं गया; बैंकवाले घर और कार को अपने अधिकार में लेने के लिए आए। अरुण गांधी खुद उन्हें देने के लिए आगे आया, जिसे देखकर सबको आश्चर्य हुआ। बीच में आई बीवी को उसने भगवद्गीता का उपदेश देते हुए कहा, ''जब हम यहाँ आए थे, तब हम कुछ भी नहीं लाए थे। जाते वक्त भी कुछ भी लेकर नहीं जाते। अगर हम कुछ कमाते तो वह यहीं कमाते हैं और कुछ खोते हैं तो वह भी यहीं खोते हैं···।'' मगर बीवी बैंकवालों से झगड़ा कर रही थी कि अब तक हमने जिन किश्तों को भरा है, उन पैसों में जो फर्क होता है, उसे तो लौटा दीजिए।

□

गांधी जयंती का दिन था। गांधी-भवन में एक युवक को देखकर लोगों को आश्चर्य हुआ, जिसने खादी पहन रखी थी। वहाँ गांधी के समकालीन और गांधी के साथ रह चुके स्वतंत्रता-सेनानी भी मौजूद थे। उन सबकी उम्र कम-से-कम सत्तर पार हो चुकी है। यानी गांधी के देहांत के तीस साल बाद जन्म लेनेवाला एकमात्र युवक अरुण गांधी आज इस कार्यक्रम में उपस्थित है, इससे हमें बड़ी खुशी हो रही है, यह बात सभी कहते थे और अपनी पुरानी यादों की गठरी खोलकर परेशान कर रहे थे।

अरुण गांधी नाराज हो गया। वह उठ खड़ा हुआ। उसने सीधा आरोप लगाया कि सचमुच आपने ही गांधी की हत्या की है। सभी डर गए। वहाँ जो-जो इकट्ठा हुए थे, सोचा कि यह युवक संघ परिवार का होगा या उनका पक्का समर्थक होगा। वे सभी दंग रह गए। अरुण गांधी सीधा मंच पर आया और माइक पकड़कर कहने लगा—

''जैसा आप समझते हैं कि गांधी पैदा होते ही बड़ा व्यक्ति बन गया, ऐसी बात नहीं है··· मगर वक्त ने उन्हें बड़ा आदमी बना दिया। उस समय भारत को आजादी की आवश्यकता नहीं होती तो गांधी एक अच्छे वकील के रूप में रहकर मर जाते। आप सभी को गांधी समझ में ही नहीं आए हैं। आपने गांधी को समझने की कोशिश भी नहीं की।'' अरुण गांधी अपने को भूलकर कहने लगा, ''गांधीजी ने सारे राष्ट्र को और राष्ट्र के भविष्य को अपने सामने रख लिया था। इस प्रकार समग्र रूप से देखने पर ही एक स्पष्ट चित्रण मिल सकता है। अमरीका जैसा राष्ट्र जो ढाई सौ वर्ष पहले जन्मा था, एक ही आर्थिक कमजोरी को सह न सका और संकट का सामना करने लगा; मगर भारत को उसकी गरमी का अहसास नहीं हुआ, यह गांधीजी की दूरंदेश का ही परिणाम है। आज हम अपने

पाँव पर खड़े हैं, मगर अन्य देश दूसरों पर अवलंबित हैं। बस···

''मैंने आज तक दूसरों पर अवलंबित होकर फ्लैट, कार, सबकुछ हासिल किया था, यह सच है। मैंने जिस एक छोटी सी नौकरी पर विश्वास कर लिया था, हाथ से निकलते ही मुझे लगने लगा कि यह सब कुछ मेरा नहीं था, जो मेरा सबकुछ बन गया था। मैं उधार चुका न सका, बैंक में मेरे नाम पर जो-जो था, उनके कब्जे में चला गया। अगर मैं अपने ही ऊपर अवलंबित होता तो क्या यह सब घटित होता? यह एक छोटा-सा उदाहरण है, बस।

''इसी कारण से गांधी मुझे सिर्फ एक स्वातंत्र्य-सेनानी के रूप में और एक राजनेता के रूप में दिखाई नहीं दे रहा है, बल्कि एक अर्थशास्त्रज्ञ के रूप में दिखाई दे रहा है, एक समाजशास्त्रज्ञ के रूप में दिखाई दे रहा है, इस प्रकार सबकुछ के रूप में दिखाई दे रहा है।

''एक ही रेखा में गांधी को लिखिए—ऐसा कहने पर कलाकार एक प्रश्नचिह्न लिख देते हैं। सचमुच गांधी एक प्रश्नचिह्न ही हैं। मगर वे सिर्फ प्रश्नचिह्न बनकर ही नहीं रह पाते हैं और सबके जवाब के रूप में भी दिखाई देने लगते हैं, सताने लगते हैं। यही गांधी की ताकत है, शक्ति है।'' इतना कहकर वह बैठ गया।

गांधी को आगे बढ़ा ले जाने के लिए एक पर्याय व्यवस्था मिल गई, यह धन्यता भाव वहाँ उपस्थित बुजुर्गों के चेहरे पर नाचने लगा!

नवनीत, द्वितीय क्रॉस, अन्नाजी राव लेआऊट
प्रथम स्टेज, विनोबा नगर
शिमोगा-५७७२०४ (कनार्टक)
दूरभाष : ०९६११८७३३१०

कविता

# इतिहास हँस रहा था

● रामकुमार आत्रेय

### समय

समय उस तुनकमिजाज इनसान जैसा है
जो किसी से भी
मजाक कर तो लेता है,
पर सहता नहीं
इसलिए समय से मजाक मत करो।

समय जब जमकर बर्फ बन जाए
तब आग बनने में फायदा है
यदि वह पानी बनकर बहने लगे
तो पत्थर बन जाओ तुरंत
अगर वह खुद
भारी पत्थर बनकर
रोक ले तुम्हारी राह
तब तुम्हारा भला इसी में है
कि उसी वक्त
नदी का रूप धारण कर बहने लगो।

### नई दुनिया

खिड़की जो किसी भी मकान में
लगी होती है
निश्चय ही दिखाने भर के लिए
नहीं लगी होती,
बदबू भरी पीड़ादायक घुटन
लगातार महसूस होने के कारण
मैं खोल देता हूँ
खिड़की के कपाट खटाक से
चाहकर भी उखाड़ नहीं पाता हूँ
उसमें लगी मजबूत सलाखें
और जाली को,
हालाँकि रुक-रुककर
ताजा हवा आ रही थी भीतर
पर बदबू भरी घुटन थी
कि कम होने का
नाम ही नहीं ले रही थी,
काफी देर में समझ में आया कारण
कि भीतर वाली खिड़की तो
मैंने खोली ही नहीं
मेरे अपने भीतर की खिड़की,
बहुत ताकत लगी
जंग लगे कपाटों को खोलने में
खुलते ही मुझे लगा
कि मैं एक नई दुनिया में हूँ
और जिंदा भी हूँ।

### सूखे में कमल

मासूम पलकों पर
अटका एक आँसू
क्या पोंछा कि अचानक
उदासी की सूखी झील में
एक कमल खिल उठा।

### जिंदगी

जी हाँ
वह भूख खाता है
प्यास पीता है
वह मौत जीता है
अपने घाव खुद सीता है।

### इहितास की हँसी

वे जिद पर उतारू थे
कि बदलकर रहेंगे इतिहास
इतिहास हँस रहा था
एक निश्चिंत हँसी,
उनकी जिद को देखकर
कि खुद को बदले बिना
कौन बदल पाया है इतिहास?

### पसीने की खुशबू

फूल कहीं भी उगा लो
उग जाएँगे
खिलने पर
खूब सुंदर भी लगेंगे
निश्चय ही,
परंतु मस्त कर देनेवाली खुशबू
सिर्फ उन्हीं फूलों में होगी
जो फूल उस स्थान पर उगे होंगे
जहाँ कभी किसी का पसीना गिरा होगा।

८६४-ए/१२, आजाद नगर
कुरुक्षेत्र-१३६११९
दूरभाष : ०९४१६२७२५८८

कहानी

# दरवाजा खोलो

● उपासना सियाग

'ठक! ठक! दरवाजा खोलो!

रात के तीन बजे थे। सुजाता ठक-ठक की आवाज की ओर बढ़ी चली जा रही थी। बहुत बड़ी लेकिन सुनसान हवेली थी। चलते-चलते तहखाने के पास जाकर सुजाता के कदम रुक गए। कमरे का दरवाजा हलका सा खुला था। नीम रोशनी में देखा, दुलहन का सा लिबास पहने फूल कँवर खड़ी थी।

''यह यहाँ कैसे! यह तो मर गई थी! फिर क्या करने आई है?'' सुजाता का कलेजा जैसे मुँह की ओर आ गया। फूल कँवर उसकी ओर देखती हुई मुसकराए जा रही थी।

बहुत बरस हुए फूल कँवर को अपने देवर की दुलहन बनाकर लाई थी। तब भी मुख पर ऐसी ही प्यारी सी मुसकान थी। देवर वीरेश को पुत्र की तरह पाला था। वीरेश की माँ, सुजाता के पति राज सिंह की सौतेली माँ थी। वीरेश छोटा ही था तब उसकी माँ भी चल बसी। ठाकुर साहब ने बड़े बेटे राज सिंह की शादी कर दी। सुजाता ने वीरेश को मातृवत् स्नेह दिया। यह स्नेह और भी गहरा हो गया, जब उसके पति और ससुर दोनों पारिवारिक रंजिश में मार दिए गए।

अब दोनों देवर भाभी रह गए इतनी बड़ी हवेली और जायदाद के साथ। उसने बहुत मुश्किल से वीरेश की परवरिश की। युवा होने पर सुजाता को राय दी गई कि अब उसे वीरेश का ब्याह कर देना चाहिए। परिवार बढ़ेगा। रौनक लगेगी। वंश भी तो आगे बढ़ेगा! वह चाहती तो नहीं थी कि वीरेश का विवाह हो, लेकिन चाहने से क्या होता है। विवाह तो करना ही था। ना करने का कारण भी तो कोई नहीं था।

सुकुमार वीरेश और फूलों सी नाजुक फूल कँवर।

बरसों बाद हवेली में रौनक लगी थी। सब खुश थे कि अब हवेली में छाई उदासी हट जाएगी और खुशियाँ ही खुशियाँ होंगी। आज दुलहन के शुभ कदम पड़े हैं। कल को खानदान के वारिस की किलकारियाँ भी गूँजेंगी।

लेकिन सुजाता खुश क्यों नहीं थी! उसे वीरेश छिनता हुआ क्यों नजर आ रहा था। उसने उसे पाल-पोसकर बड़ा किया था। बैरियों से बचाकर रखा। क्या हुआ जो वीरेश को जन्म नहीं दिया था! पाला तो एक माँ ही की तरह था! तो फिर उलझन क्या थी? क्यों सुजाता फूल कँवर के वजूद को सहन नहीं कर पा रही थी? माँ थी तो माँ की तरह ही व्यवहार करती न! यह सौतिया डाह उसे क्यों डस रहा था? सीने पर साँप लोट रहे थे। वह चहलकदमी कर रही थी तेजी से। साँस तेज चल रही थी जैसे कि

सुपरिचित रचनाकार। अब तक नौ साझा काव्य संग्रह, एक साझा लघुकथा संग्रह। ज्योतिष पर लेख। कहानी और कविताएँ विभिन्न समाचार पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। २०११ का 'ब्लॉग रत्न' अवॉर्ड तथा जय-विजय रचनाकार सम्मान।

रुक न जाए कहीं।

सहनशक्ति जब असहनीय हो गई तो वह दौड़ पड़ी वीरेश के कमरे की तरफ। दरवाजे पर आकर रुकी। हृदय से एक पुकार भी उठी कि वह यह क्या करने जा रही है। लेकिन स्त्री के एकाधिकार की प्रवृत्ति कई बार सोचने-समझने की शक्ति खत्म कर देती है। वह बुदबुदा उठी, 'नहीं, वीरेश मेरा है! मेरा बच्चा है! उसे कोई दूर नहीं कर सकता मुझसे!' दरवाजा पीटने लगी।

''दरवाजा खोलो! दरवाजा खोलो!''

वीरेश ने घबराकर दरवाजा खोला। सुजाता उसे धकेलकर अंदर चली गई। कमरे में इधर-उधर नजर दौड़ाई और आश्वस्त सी हो गई। कहीं कोई हलचल नहीं दिखी। कमरे में सजाए फूल अभी अनछुए से ही थे। गहरी साँस भरकर वीरेश के पास जाकर अपने आँचल से उसका माथा पोंछने का उपक्रम करने लगी।

''अरे मेरे बच्चे! कितनी गरमी है यहाँ! चल मेरे साथ! मैं हवा में सुलाती हूँ!'' नववधु को आग्नेय दृष्टि से देखती, वीरेश को खींचती ले गई।

और फूल कँवर! वह एकदम से घटित हुई घटना से सकते में आ गई थी। उन दोनों के पीछे बढ़ी तो थी लेकिन लाज ने कदम रोक दिए। जिन आँखों में नवजीवन के सपने भरे थे, उनमें आँसू भर गए। वहीं जमीन पर बैठ गई। रोती रही..., फिर न जाने कब आँख लग गई।

उधर वीरेश ने कमजोर आवाज में प्रतिरोध भी किया कि गरमी नहीं है, अगर होगी भी तो पंखा चलाया जा सकता है। वह सुजाता का अधिक विरोध नहीं कर पाया। मन की भावनाओं पर संकोच हावी हो गया। वह भी वहीं सो गया।

तीन महीने बीत गए। सुजाता ने कोई-न-कोई बहाना बनाकर वीरेश और फूल कँवर को एक छत के नीचे एक होने ही नहीं दिया। फूल कँवर सहमी सी रहती और वीरेश संकोच में रहता। अपने मन की बात कभी

कह ही नहीं पाया। फूल कँवर मायके भी जाती तो वीरेश को बहाने से घर पर ही रोक लिया जाता। शायद सुजाता ने जैसे प्रण ही कर लिया था कि अगर उसे सुख नहीं मिला तो वह दुनिया की किसी भी औरत को सुखी नहीं रहने देगी।

दिन-रात समान हुए हैं कभी! मौसम भी तो बदलते हैं। फिर फूल कँवर के जीवन में ईश्वर ने पतझड़ और गरम लू तो नहीं लिखी थी! संयोग से सुजाता को मायके से बुलावा आ गया और उसे जाना पड़ा। आशंकित तो थी वह लेकिन कोई बस नहीं था हालात पर।

अब वीरेश और फूल कँवर अकेले ही थे।

उस रात बहुत बारिश हुई। छाई उमस खत्म हो गई। हवा का ठंडा झोंका दोनों के हृदय को सुकून दे रहा था। हृदय का सुकून चेहरे पर गुलाब खिला रहे थे। तीन-चार दिन बाद सुजाता लौट आई। दोनों के चेहरों पर खिले गुलाब उसके हृदय में काँटों की तरह चुभ रहे थे।

**जब कोई पुरुष, स्त्री पर अत्याचार करता है तो इनसानों की न सही लेकिन ईश्वर की अदालत में इनसाफ की उम्मीद जरूर की जाती है। लेकिन यहाँ एक स्त्री थी दूसरी स्त्री पर अत्याचार करनेवाली! ईश्वर स्तब्ध हो जाता है ऐसे दृश्य देखकर। वह हैरान हो जाता है कि स्त्री को बनाते हुए वह पाँच तत्त्वों को गूँधते हुए कुछ ईश्वरीय अर्क भी समाहित करता है। यही ईश्वरीय अर्क स्त्री में दया और ममता भर देता है। फिर कोई स्त्री इतनी क्रूर कैसे हो सकती है?**

सुजाता ने अब भी अपना नाटक जारी रखा। रात होते ही पीड़ा का नाटक शुरू होता जो भोर होने तक थमता। तो क्या फूल कँवर के जीवन में चार दिन की चाँदनी ही थी?

'नहीं शायद!'

उसे कुछ दिनों से कुछ अजीब सा महसूस हो रहा था। तबीयत भी गिरी-गिरी सी थी। शायद ये किसी नन्ही जान के आने की आहट थी और उसे ही पता नहीं था। लेकिन सुजाता को भान हो गया था। वह तड़प उठी। सिर को, हाथों को दीवार पर मारा। खुद को लहूलुहान कर लेना चाहती थी। लेकिन तभी कुछ सोचकर फूल कँवर के कक्ष की तरफ भागी। उसे बालों से पकड़कर बाहर ले आई।

मासूम फूल कँवर घबरा गई। रोते हुए कारण पूछने लगी कि उसका क्या कसूर है?

''कसूर पूछ रही हो? बताओ कहाँ जाती हो? किससे मिलती हो? किसका पाप है?''

''पाप! मैंने कोई पाप नहीं किया! आप क्या कह रही हो?''

''अरी ये जो पेट में पल रहा है तेरे!''

चौंक गई फूल कँवर। एक साथ कई विचार मन में आए। खुश तो होना चाहती थी, पर वह समझ नहीं पा रही थी कि क्या कहे क्या न कहे!

''मैंने कोई गलत काम नहीं किया! यह तो आपके देवर का ही जिज्जी...!''

''झूठ मत बोलो! अभी वीरेश को बुलाती हूँ!''

वीरेश खुद ही वहाँ पहुँच गया था शोर की आवाज सुनकर।

''बोलो वीरेश! ये क्या कह रही है? पाप किसी और का लिए घूम रही है और नाम तुम्हारा ले रही है!''

''हाँ बोलो, तुम बोलते क्यों नहीं कि यह बच्चा तुम्हारा ही है!'' फूल कँवर हाथ जोड़े गिड़गिड़ा रही थी।

कायर निकला वीरेश! गरदन झुका दी। खामोशी दुतरफा होती है। हाँ भी और न भी। सुजाता ने इसे न समझा। जबकि वह यह जानती थी कि फूल कँवर सच बोल रही थी।

कैसी विडंबना थी! वीरेश को मालूम था कि फूल कँवर सच बोल रही थी फिर भी चुप रहा। ऐसा भी क्या भय था उसे जो सच का साथ न दे सका। सुजाता को वीरेश की खामोशी का बल मिला। वह फूल कँवर को घसीटती हुई तहखाने में ले गई और बंद कर दिया। फूल कँवर की आर्त पुकार कोई नहीं सुन रहा था। नौकर भी थे लेकिन वे सब हुकुम के गुलाम और बेजुबान थे। किसी में इतनी हिम्मत नहीं थी कि मालकिन का विरोध कर सकें।

सुजाता ने वीरेश को मजबूर कर दिया कि वह उसकी बात माने और रात को तहखाने में लेकर गई। सुजाता में बेसुध फूल कँवर के प्रति नफरत ना केवल शब्दों और आँखों से बल्कि रोम-रोम से फूट रही थी।

''वीरेश, मार डाल इस कुलक्षिणी को! यह जीने के लायक नहीं है!''

फूल कँवर तीन दिन से भूखी थी। बोलने की भी क्षमता नहीं थी उठती तो क्या! पड़ी रही। मौत की बात सुनकर काँप उठी। जमीन पर घिसटकर दीवार की तरफ सरकने की कोशिश की। लेकिन जो सात जन्म का वादा करके हाथ पकड़कर लाया था वही साथ नहीं निभा पाया तो शिकायत किससे!

सुजाता ने फूल कँवर को घसीटकर चारपाई के पास पटक दिया। चारपाई का पाया उसके कलेजे पर रख दिया। वीरेश को कहा कि वह पाए पर जोर देकर फूल कँवर को मार डाले। वीरेश के एक बार तो हाथ काँपे लेकिन ना जाने क्या डर था उसे भाभी का। आदेश का पालन हुआ।

मर गई फूल कँवर! मर गई या जी गई यह कौन बताता।

परंतु ईश्वर जो दुनिया बनाता है, सबका रक्षक होता है! वह क्यों नहीं आया!

जब कोई पुरुष, स्त्री पर अत्याचार करता है तो इनसानों की न सही लेकिन ईश्वर की अदालत में इनसाफ की उम्मीद जरूर की जाती है। लेकिन यहाँ एक स्त्री थी दूसरी स्त्री पर अत्याचार करनेवाली! ईश्वर स्तब्ध हो जाता है ऐसे दृश्य देखकर। वह हैरान हो जाता है कि स्त्री को बनाते हुए वह पाँच तत्त्वों को गूँधते हुए कुछ ईश्वरीय अर्क भी समाहित करता है। यही ईश्वरीय अर्क स्त्री में दया और ममता भर देता है। फिर कोई स्त्री इतनी क्रूर कैसे हो सकती है?

भोर होने पर खबर फैला दी गई कि फूल कँवर करंट लगने से मर गई। उसके शव के पास सुजाता का विलाप दिलों को जैसे चीर रहा था।

माहौल बेहद गमगीन था। परंतु यह विलाप कैसा था? इसमें तो जैसे आह्लाद छुपा था। वीरेश खामोश था। मन में कुछ नहीं था। खुशी नहीं थी तो गम भी नहीं था।

फूल कँवर चली गई तो क्या हुआ। देवर को फिर से ब्याह लिया। रागिनी आ गई। उसे तो आना ही था। घर सूना कैसे रहता। वंश भी तो बढ़ाना था!

सुजाता ने रागिनी के साथ भी वही खेल शुरू कर दिया जो फूल कँवर के साथ करती थी। नववधु ने कुछ दिन तो देखा। फिर सोच-विचारकर कुछ निर्णय किया। वह सुजाता के कक्ष में गई। लाज-संकोच छोड़कर वीरेश से बोली, ''आप हमारे कक्ष में चलें। जिज्जी की सेवा करने को मैं हूँ! वह जब तक नहीं सो जातीं मैं उनके पैर दबाती रहूँगी!''

वीरेश भी शायद यही चाहता था। बस हिम्मत ही नहीं कर पा रहा था। पिंजरे से आजाद हुए पंछी की तरह जल्दी से बाहर निकल गया। रागिनी धीरे से सुजाता के पैरों की तरफ झुकी। सुजाता ने झट से पैर खींच लिए। खड़ी होकर रागिनी पर तमाचा मारने को हाथ उठाया। रागिनी ने हाथ पकड़ लिया। हर स्त्री तो फूल कँवर नहीं होती न!

''देखो जिज्जी! माँ हो तो माँ ही बनी रहो! सौतन बनने की कोशिश ना करो!'' हाथ झटककर कक्ष से बाहर आ गई।

यह तो होना ही था एक दिन! हर स्त्री तो फूल कँवर नहीं होती न! अब सुजाता की बारी थी सकते में आने की।

जीवन की गाड़ी चल पड़ी वीरेश की। वह खुद को अपराधी तो मानता था फूल कँवर का लेकिन कर भी क्या सकता था? हालाँकि रात के सूनेपन में एक चीख उसे जगा जाती थी। उसके बाद वह सो नहीं पाता था। अपने गुनाह के बारे में रागिनी को भी क्या बताता।

रागिनी! उसे जीवन के सभी रागों को सुर में ढालकर गाना आता था। अब उसे मातृत्व का सुर ढालकर ममता का गीत गाना था। वीरेश बहुत प्रसन्न था लेकिन सुजाता! वह तो खुश होने का दिखावा भी नहीं कर पा रही थी। अलबत्ता कोई-न-कोई कोशिश होती कि रागिनी का गर्भ समाप्त हो जाए। यह राज एक दिन वीरेश पर भी खुल गया। वह रागिनी को लेकर अलग घर में चला गया।

सुजाता क्या करती? उसने तो वीरेश को माँ बनकर पाला था।

नि:स्वार्थ! बेशक नि:स्वार्थ!

उसके अवचेतन मन में यही था कि जो भी उसे मिलता है छिन जाता है। इसलिए वह वीरेश के प्रति असुरक्षित थी। पारिवारिक रंजिश की वजह से और परदे की वजह से भी वह बाहर की दुनिया से अधिक संपर्क नहीं बना पाई। अपने ही खोल में सिमटी रही। काश कि कोई सुजाता को समझने वाला होता तो वह ऐसी नहीं होती। खुले दिल से वीरेश की दुनिया बसते देखती।

उसका अकेलापन और बढ़ गया। सूनी हवेली में वह अकेली थी। पागलों की तरह यहाँ-वहाँ हर कमरे में भागती। उसकी चीखों से सारी हवेली तड़प उठती। रागिनी, जो कि समझदार औरत थी, उसने वीरेश को सुजाता का ईलाज करवाने को कहा। कहा कि वह सुजाता के प्रति जिम्मेदारी से मुँह नहीं मोड़ सकता। आखिर उसी ने तो उसकी परवरिश की थी।

ईलाज से तन ठीक होते हैं मन नहीं। हालात से समझौता करने के अलावा सुजाता के पास कोई चारा भी नहीं था।

कलेजे में हूक सी उठती थी सुजाता के और वीरेश के भी। दोनों को ही उनका पाप जीने नहीं दे रहा था। वीरेश के घर में खुशियाँ तो आई थीं लेकिन कभी हृदय से महसूस नहीं कर पाया। कभी हँसता भी तो फूल कँवर का मरता, दर्द भरा चेहरा सामने खड़ा हो जाता। उसे याद था कि कैसे फूल कँवर के चेहरे पर दर्द था। वह चली गई, चिता की अग्नि में भस्म हो गई। दर्द छोड़ गई, सुजाता और वीरेश के हिस्से में।

सुजाता को लगता कि फूल कँवर उसके आस-पास ही मंडराती है। वह भयभीत रहती थी। किसी नौकर या नौकरानी को हवेली में रहने ही नहीं देती थी। रात को बार-बार दरवाजे पर अंदर लगी कुंडियाँ जाँचती। चलती तो ऐसे लगता कि कोई साया उसके साथ-साथ चल रहा है।

''आओ जिज्जी! मेरे साथ चलो!'' फूल कँवर बोली तो सुजाता बुरी तरह से चौंक उठी। अतीत की तंद्रा से जाग गई हो जैसे।

''नहीं! मैं तुम्हारे साथ क्यों जाऊँ? तुम हट जाओ मेरे सामने से! चली जाओ!''

पता नहीं यह फूल कँवर का भूत था या मन का वहम। भूत या वहम नहीं था तो यह सुजाता का पाप तो जरूर था जो आज उसके सामने खड़ा था। वह दौड़ पड़ी मुख्य दरवाजे के पास।

चीख रही थी, ''दरवाज़ा खोलो!''

दरवाजा पीट रही थी! ''दरवाजा खोलो!''

अंदर से बंद दरवाजे खुले हैं भला कभी!

दरवाजा खोलने के लिए कुंडी उसके सामने थी लेकिन वह बाहर से दरवाजा खुलने का इंतजार करती रही। काश कि वह अपने मन का दरवाजा बंद न करती।

सुबह दरवाजा तोड़ा गया तो सामने सुजाता मरी पड़ी थी। लहूलुहान, रक्तरंजित कलेजा फटा पड़ा था। सुना था कि उसे पेट में कैंसर हो गया था, शायद वही फूट गया हो। या क्या मालूम फूल कँवर ने ही?

नई सूरज नगरी
गली नंबर-७, ९वाँ चौक
अबोहर-१५२११६ (पंजाब)

# जो है अभी भी युवा

*मूल* : **बर्टोल्ट ब्रेष्ट**

*अनुवाद* : **बालकृष्ण काबरा 'एतेश'**

## मैं जाना चाहता हूँ उसके साथ···

मैं जाना चाहता हूँ उसके साथ, जिसे मैं प्रेम करता हूँ
मैं नहीं जानना चाहता कि क्या कीमत चुकानी होगी
मैं नहीं सोचना चाहता कि यह ठीक है या नहीं?
मैं नहीं जानना चाहता कि वह मुझे प्रेम करता है या नहीं
मैं उसके साथ जाना चाहता हूँ, जिसे मैं प्रेम करता हूँ।

## इसीलिए

मेरे प्यार ने
मुझसे कहा कि उसे मेरी जरूरत है।

इसीलिए
मैं अपना अच्छा खयाल रखता हूँ
ध्यान देता हूँ कि मैं कहाँ जा रहा हूँ
और डरता हूँ कि बारिश की एक बूँद भी
मुझे चोट पहुँचा सकती है।

## दुष्काल में प्रेम गीत

एक-दूसरे के लिए हममें नहीं था मित्रभाव
फिर भी हमने किया प्रेम किसी भी अन्य युगल की तरह
जब रात में हम होते एक-दूसरे की बाँहों में
चाँद लगता था तुमसे कम अजनबी।

और यदि आज मैं तुमसे बाजार में मिला
और दोनों ने खरीदी मछलियाँ,
तो इससे हो सकता है झगड़ा,
एक-दूसरे के लिए हममें नहीं था मित्रभाव
जब रात में हम होते एक-दूसरे की बाँहों में।

## भेजो मुझे एक पत्ती

भेजो मुझे एक पत्ती, लेकिन उस दूर उगी झाड़ी से
जहाँ पहुँचने में लगे तुम्हारे घर से
कम-से-कम आधा घंटा,
फिर वहाँ तक जाओगे तुम और होगे बलवान
और मैं रहूँगा तुम्हारा आभारी खूबसूरत पत्ती के लिए।

## प्रश्न

लिखो मुझे कि तुम क्या पहने हो, क्या ये गरम हैं?
लिखो मुझे कि तुम कैसे सोते हो, क्या तुम्हारा बिस्तर नरम है?
लिखो मुझे कि तुम कैसे दिखते हो, क्या पहले जैसे ही?
लिखो मुझे कि तुम्हें क्या कमी महसूस होती है, क्या मेरी बाँहों की?

बताओ मुझे क्या वे तुम्हें अकेला छोड़ देते हैं?
बताओ वे आगे क्या करनेवाले हैं? क्या तुम सह पाओगे?
तुम क्या कर रहे हो? क्या वही जो किया जाना चाहिए?
तुम क्या सोच रहे हो, क्या मेरे बारे में?

ये प्रश्न ही हैं जो मैं तुमसे पूछ सकता हूँ,
और मैं सुनता भी हूँ सभी उत्तर जो चले आते हैं।
यदि तुम थके हुए हो, मैं नहीं कर सकता तुम्हारी मदद,
यदि तुम भूखे हो तो नहीं है मेरे पास तुम्हारे लिए भोजन
ये ऐसा है मानो मैं नहीं हूँ दुनिया में,
नहीं है मेरा अस्तित्व, मानो कि मैं भूल चुका हूँ तुम्हें।

## प्रेमी स्त्री का गीत

जब तुम मुझे प्रसन्न रखते हो
तो मैं कभी-कभी सोचती हूँ,
कि मैं मर सकती हूँ अभी।
मैं रहूँगी खुश अपने अंत तक।

फिर जब तुम वृद्ध होगे
और सोचोगे मेरे बारे में
मैं दिखूँगी आज की तरह
तुम्हारी होगी एक प्रियतमा
जो है अभी भी युवा।

११, सूर्या अपार्टमेंट
रिंग रोड, राणाप्रताप नगर,
नागपुर-४४००२२ (महाराष्ट्र)
दूरभाष : ०९४२२८११६७१

# विश्वास में बसा है विश्व

● शिवनंदन कपूर

विश्व में आघात हैं। घात हैं। व्याघात हैं। जीवन-पथ रेत की तपती डगर है। उसमें बस तपना है। पग-पग पर काँटे हैं। फिर भी मानव को एक संबल, एक दैवीय बल ईश्वरीय वर सा प्राप्त है। वह है विश्वास।

विश्वास में ही विश्व बसा है। उसमें ही स्नेह का वास है। विश्वास आग बरसाती किरणों के बीच नीर भरी बदली है। विश्वास से ही चरण में चुभते शूल सुरभित, सरस सुमन बन जाते हैं। जीवन के हर मोड़ पर आड़ बन धैर्य की घनी घन-छाया बन मंजिल तक पहुँचा देता है। लक्ष्य के लिए वह सेतु है, सोपान है। वह कभी व्यर्थ नहीं जाता। कहा है, ''विश्वासो फलदायकः।'' इसे मानव ही नहीं, पशु भी मान देते हैं। ताराबाई विश्वास के दम पर ही शेर के जबड़ों के बीच सिर रख देती थीं।

भक्त विश्वास के बेड़े पर ही अपार भवसागर तर जाता है। तुलसी को भी बस राम का भरोसा, एक वही बल, एक विश्वास था। सूर पुष्टिमार्गी थे। पुष्टि का अर्थ है—'अनुग्रह'। उसकी कृपा तभी होती है, जब आराधक पूरे विश्वास से प्रभु के प्रति समर्पण कर देता है। फिर वह भी उसे वैसे ही सँभालता है, जैसे वानरी नन्हे बच्चे को सँभालती है। विश्वास से ही वह अपनाता है। नाता बनाता है।

कहा जाता है, मानो तो देवता, नहीं तो पत्थर। समर्पण का, पूजा का, भक्ति का आधार आस्था ही है। विश्वास हो तो ईश्वर खंभे से भी प्रकट हो सकते हैं। विश्वास ही वह बीज-मंत्र है, जो पत्थर में भी प्राण-प्रतिष्ठा कर आराधना का आधार देता है। वह शिला है, सिहासन है, जिस पर देवता पधारते हैं। विनोबा भावे की जननी उन्हें बचपन में एक पंक्ति सतत स्मरण कराती थीं, 'औषधं जाह्नवी तोयं, वैद्यो नारायणो हरिः।' एक बार उन्होंने विनोबा से उसका अर्थ पूछा। वे बोले, ''माता! सीधा सा तो अर्थ है कि गंगाजल ही औषधि है। हरि ही रोगहारी वैद्य हैं।'' माँ ने कहा, ''पुत्र, इतना ही नहीं। जीवन में, व्यवहार में इसका व्यापक अर्थ है। चिकित्सक को जीवन-दाता भगवान् मानो। वह जो भी औषधि दे, उसे गंगाजल तुल्य गुणकारी समझो। तभी लाभ होगा।'' विश्वास ही मानव को नीरोग करता है। जिस पर आस्था है, वह राख भी दे दे तो आदमी रोग-रहित हो जाए।

वाणिज्य या व्यापार में विश्वास ही चलता था। एक व्यवसायी दूसरे व्यापारी को 'हुंडी' देता था। नकद रकम के बजाय 'हुंडी' या 'दर्शनी' दे दी जाती थी। एक साधारण पुरजा दस्तखत वाला। वह 'दर्शनी' कहलाता था। उसे देखकर ही लोग उसके बदले उसमें लिखी रकम दे देते थे। उसे उस काल का चेक समझिए। एक रुक्का ही व्यापार का आधार था। उसमें विश्वास का प्रकाश था। विश्वास पर ही सेठ मुनीम को करोड़ों का व्यवसाय सौंप देता था। विश्वास का शिव-धनु टूटता है तो आदमी का अंतर, उसका हृदय दरक जाता है। यदि कोई अपना आघात करे तो वह चोट ज्यादा गहरी होती है। सीजर पर प्रहार हो रहा था। पर उसे दूसरों के निर्मम वार से अधिक आघात नजदीकी ब्रूटस की मार से हुआ। वह कह बैठा, 'यू ब्रूटस टू।' ब्रूटस तुम भी, राम का भरत के त्याग पर दृढ विश्वास था। उन्होंने कहा था—

*भरतहिं होहि न राजमद, विधि हरिहर पद पाइ।*
*कबहुं कि कांजी सीकरनि छीर सिंधु बिनसाइ॥*

भरत का चरित्र वित्त या धन का लोभी नहीं। वह वित्त या धन से विकृत नहीं। वह वृत्त या आचरण से कृत है, संस्कृत है। विश्वास ही वह पारस, वह स्पर्श मणि है, जो लोहे को सोना बना देता है। जीवन को सरस, सुबास दे सार्थक करता है।

दांपत्य में विश्वास ही पककर प्रेम की मिठास लाता है। सुख-दुःख के किनारों को सहलाती, बहलाती विश्वास की जीवन-धारा बहती है। उसके मूल में समर्पण है। समर्पण उसका जीवन है। उसमें अगर कहीं 'कचाई' आ जाए तो अनुराग की सचाई कलई सी उतर जाती है। फिर सारे गुण गुड़ हो जाते हैं। बिहारी ने कहा था—

*सजन सलोने अरु रहे, अति सनेह सों पागि।*
*तनक कचाई देति दुख, सूरन लौं मुख लागि॥*

सजन सुंदर हैं। सलोने हैं। प्रेम-प्रदर्शन भी करते हैं। पर कहीं 'कच्चापन' आ जाए तो करकता है। दांपत्य शीशे का बरतन है। चरित्र से गिरा या 'गिरा' यानी वाणी से तो दरार आएगी। सूरन या जमीकंद को खूब तेल से पागा, पर अगर कसर रह गई तो वह मुँह में लगती है, काटती है। फिर विश्वास विष-वास में बदलकर जीवन का तना तनाव से भर दलने लगता है। नेह भरे नयनों से निहार बैठ जाने से हार भी हो सकती है। गल-हार बनने के लिए, दृगों की देहली पार कर हिये के गेह में उतरना पड़ता है। परस्पर जानना जरूरी है। बिना जाने प्यार के पर न उगें। 'पर' पराया ही रहेगा। लौकिकता से परे बाबा तुलसी ने भी कहा था, ''जब तक भली प्रकार जानोगे नहीं, समर्पण कैसे होगा? पर का

परदा न हटेगा। फिर 'परतीति' या विश्वास होगा। फिर होगी प्रीति, रति, अनुरक्ति। वंचना न रहेगी। दोनों एक चना दो दाल से जुड़ जाएँगे—

*जाने बिनु न होइ परतीती।*
*विनु परतीति होइ नहिं प्रीती॥*

विश्वास की छाया तले ही तो नारी श्रद्धा सी साकार होती है। तब सोने के सुमेरु और चाँदी के कैलास की अपेक्षा पारस के परस सी, परस्पर प्रीति पगी प्रेम की पर्णकुटी कुटिल नहीं रह जाती।''

विश्वास हटने पर एक खूनवाले भाई भी खून के प्यासे हो जाते हैं। कवि-कुल-कलश कवींद्र रवींद्र ने कहा था, ''हमारा सबसे बड़ा सौभाग्य तब है, जब पराये अपने हो जाते हैं। दुर्भाग्य तब है, जब अपने पराये हो जाते हैं!'' इसीलिए 'आतिश' ने दुश्मन का भी मन जीतकर भरोसा पाने की बात कही थी। वह भी आपकी जिंदगी की अँधेरी रात का चिराग बन सकता है—

*मंजिले हस्ती में दुश्मन को भी अपना दोस्त कर।*
*रात हो जाए तो दिखलाए तुझे दुश्मन चिराग॥*

मनुज सत्य को जिस रूप में देखने की कामना करता है, उसी पर विश्रंभ या विश्वास करना चाहता है। टालस्टॉय ने भी विश्रब्ध या विश्वास को ही जीवन की शक्ति कहा था। आदमी जिस पर एतबार करता है, उसके भरोसे की लाज रखने के लिए वह जान भी दे सकता है। विश्वास हिमनग सा अटल होता है। तूफानों से, भूकंप से उसमें कंपन क्या सिहरन भी नहीं होती। वह गलित होनेवाला नहीं। गांधीजी के पास अस्त्र के नाम पर लठिया थी। वह लकुटिया भी बस उन्हीं को सहारा भर देती थी। फौज न थी। एकला चले, पर चल पड़े, जिधर दो पग डगमग में, चल पड़े उधर थे शत-शत पग। उनका कहना था, विश्वास कोई नाजुक फूल नहीं, जो तूफानी मौसम में कुम्हला जाए। बड़े-से-बड़ा तूफान भी उसे नहीं डिगा सकता।''

विश्वास का एक रूप आत्मनिष्ठा में है। दूसरा, विश्वसनीय या विश्वस्त होना है। विवेकानंदजी ने आत्मविश्वास के बल पर, पूँजीरहित होकर भी विदेश की धरती पर अपरिचितों के बीच भारतीय संस्कृति की अमृत-वर्षा की थी। आत्मविश्वासी मृदु व्यवहार, मधुर वाणी एवं अपनत्व से सहज सर्वत्र आत्मीयता पाता है। 'दाग' ने इसीलिए बेदाग होने का रास्ता बताया था—

*मिजाज अच्छा अगर पाया।*
*तो सचमुच उससे भर पाया।*

भर पाने, जिंदगी में उभर पाने के लिए यह जरूरी है।

'सौंदरानंद' में सज्जनों की मित्रता में विश्वास को प्रथम स्थान दिया गया है, 'विश्वासश्चार्थचर्या।' विश्वास युत को विजय के लिए धन या सेना की अपेक्षा नहीं। राम ने नर नहीं वानर-सेना संघटित की। रावण के पास महास्त्र थे। महती वाहिनी थी। वाहन थे। दूसरी ओर ''रावन रथी विरथ रघुबीरा।'' वह कर्ण के समान आत्मबल पर भरोसा करता है।

विश्वास का दंड ही गृहरथी की गाड़ी को, पति-पत्नी रूपी पहियों को जोड़कर राह पर चलाता है। विश्वास की धारा का एक किनारा भी बाह्य ताप से जल, जल से किनारा करता है, फिर सरसता सूखती जाती है। धनुष की कोटियों के समान बाण चलाने के लिए दोनों सिरों को झुकना पड़ता है, तभी लक्ष्य-वेध होता है।

विश्वास दरकता है तो अंतर में बस विष ही बस जाता है। अच्छे काम से भी बस बुरी बास आती हैं। रवींद्रनाथ ने कहा था, 'अपने भी पराये हो जाते हैं। फिर वे विभीषण की तरह अधिक घातक हो जाते हैं। वे घात लगाकर घात करने की चेष्टा में रहते हैं। कभी कोई डाल की तरह तरु से टूट जाता है। टूटी टहनी मूल पेड़ से कोई मतलब नहीं रखती। पर आदमी मन से ऐसा अपंग कि पंगत में न रहकर भी अमन से नहीं रहना चाहता। पंगा करेगा। दाँव लगाकर परिवार के घर में एक कक्ष बिना कौड़ी लगाए। बिना एक बूँद पसीना टपकाए पा गया। पर उसे चैन नहीं। उसके बेचैन नैन यही देखते हैं, अमुक रैन आराम से बिता रहा। उससे भी निकृष्ट और घृणित बात है। जब उससे भिन्न कोई भाई तकलीफ में होता है। कोई बालक चोट खाकर चीत्कार करता है। उस समय कोई अपरिचित भी हाय-हाय कर सकता है। कोई अनजाना हाथ असहाय के लिए अपनी बाँह बढ़ा सकता है। पर जलनेवाला कहेगा, 'यह कर्मों का ही फल भुगत रहे हैं।' दर्द होता है, भाई। पीड़ा होती है, यार। हम उस देश के वासी हैं, जिस देश में गंगा बहती है। हम सदियों से नारा लगाते आ रहे हैं, ''वसुधैव कुटुम्बकम्'', सारी दुनिया एक परिवार है। हम अपने आचरण से मन मथकर सुधा न उपरा सके, न बाँट सके। शाख से अलग साख भी नहीं रहती।

*'होते संवाद' जलती*
*जिंदा मसालें, फिर भी अँधेरा है।*
*बहरा है ऊपरवाला, बार-बार टेरा है॥*
*सूरत औ सीरत का टूटा विश्वास है,*
*चाँदी के रस्से से लटक रही लाश है,*
*भूख से तड़पते को खा रहीं रोटियाँ—*
*राह भूला सूरज, सब कहते सबेरा है॥*
*बहरा है ऊपरवाला, बार-बार टेरा है।*
*खाती-पीती है देह, रंग कुछ काला है;*
*मुँह पर मुहरें सजीं, चाँदी का ताला है।*
*सोने के जाल का घूँघट भी घेरा है॥*
*बाहर है ऊपरवाला, बार-बार टेरा है।*
*अपराधी ऊँचे हैं, छोटी हैं सब जेल,*
*कैसे हो उजाला, इन तिलों में नहीं तेल,*
*राह कहाँ? खाई है, खंदक है।*
*फिसलन हर ओर और भेड़ियों का घेरा है।*
*जिनके लिए देश महज माटी है, पत्थर है,*
*उनकी निगाहों में पैसा ही ईश्वर है॥*

कपूर क्लीनिक, भगतसिंह चौक,
कहारवाड़ी, खंडवा-४५०००१ (म.प्र.)

कहानी

# माँ बनने की चाह

● विजय कुमार सिंह

मीता की कोई संतान नहीं थी। इसलिए वह बहुत उदास रहती थी। हर एक इनसान जन्मजात कुछ संस्कार, मनोवृत्तियाँ और अभिलाषाएँ लेकर पैदा होता है, जिनसे नाता तोड़ना कठिन होता है। मीता की संतान के लिए चाह एक ऐसी ही चाह थी। वह दिन-रात संतति प्राप्ति की कामना में डूबी रहती। माँ-बाप पिछले वर्ष एक दुर्घटना में स्वर्ग सिधार गए थे। घर में भाई-बहन या कोई अन्य संबंधी नहीं था। घर की खामोशी उसे काटने को दौड़ती थी।

मीता बेटे और बेटी दोनों को परमात्मा की बहुमूल्य देन मानती थी, परंतु उसकी दिली आकांक्षा बेटे के लिए नहीं, एक बेटी के लिए थी। वह यह मानती थी कि बेटों की अपेक्षा बेटियाँ माँ-बाप को अधिक प्यार करती हैं और जरूरत पड़ने पर ज्यादा वफादार सिद्ध होती हैं। वह एक ऐसी बेटी चाहती थी, जो श्राद्ध परंपरा को मानती हो, लेकिन उसकी आस्था आजकल की विकृत श्राद्ध परंपरा में नहीं हो, जिसमें पिता की मृत्यु के बाद बेटा या बेटी ब्राह्मणों या रिश्तेदारों को आमंत्रित करके उन्हें भोजन करवाकर पिता के प्रति अपने कर्तव्य की इतिश्री समझ लेते हैं। मीता के दिमाग में श्राद्ध की वह तसवीर थी, जो श्रवण कुमार ने अपने अंधे माता-पिता की जीवनपर्यंत सेवा करके; राजा पुरु ने अपनी जवानी पिता ययाति को देकर और उसका बुढ़ापा स्वयं लेकर; देवव्रत (भीष्म पितामह) ने अपने पिता के यौनसुख के लिए स्वयं जिंदगी भर अविवाहित ब्रह्मचर्य निभाने की शपथ लेकर समाज के सामने पेश की थी। उसके मन में तनिक भी संदेह नहीं था कि वर्तमान समय में ऐसे आदर्शों की पूर्ति का स्वप्न देखना मात्र कल्पना की दुनिया में विचरने के समान है। फिर भी वह एक बेटी या बेटे की माँ बनने के लिए उत्सुक थी।

एक बार उसने लगभग फैसला भी कर लिया था कि वह किसी शिशु या बच्चे को गोद लेकर अपनी इच्छा को शांत कर ले, लेकिन उसी समय उसे अपनी एक सहेली की इसी समस्या से जुड़ी मानसिक पीड़ा का खयाल आया। जिसने अपनी सगी बहन की बेटी गोद लेकर अपनी सामर्थ्यानुसार उसे काबिल बनाया और जब वह कमाने के योग्य हो गई तो उसकी बहन ने अपनी बेटी को उससे वापस छीन लिया था। यह घटना गोद लेने के उसके निर्णय को शिथिल बना रही थी। विवाह के प्रश्न पर विचार करना उसने एक वर्ष पहले ही बंद कर दिया था, क्योंकि जिस प्रकार और जिस स्तर के व्यक्ति को वह अपना जीवनसाथी बनाना चाहती थी, वे बहुत अधिक दहेज माँगते थे, जो उसकी सामर्थ्य से बाहर था। समय गुजरते वह पैंतीस वर्ष की हो गई थी। अब विधुरों को छोड़ और रिश्ते आने बंद हो गए थे।

सुपरिचित लेखक। कादंबिनी, दैनिक जागरण, नवभारत टाइम्स, हिंदुस्तान राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में निरंतर रचनाएँ प्रकाशित।

अब उसके पास केवल दो विकल्प थे या तो वह संतान-सुख के स्वप्न देखना बंद कर दे या फिर जैसे पश्चिम के कुछ देशों में होता है, औपचारिक तौर पर विवाह किए बिना अपनी संतान को जन्म दे। माँ बनने की इच्छा उसके हृदय में इतनी गहराई तक घर कर चुकी थी कि उसके लिए संतान की इच्छा को बहिष्कृत करना असंभव था। अत: उसके पास दूसरा विकल्प ही रह गया था। वह सोचने लगी—इसकी क्या 'गारंटी' है कि अपने गर्भ से जन्मा शिशु जिंदगी भर वफादार रहेगा? क्या ऐसे युवकों और युवतियों की संसार में कमी है, जो जवान होने पर माता-पिता से अलग रहने में खुशी महसूस करते हैं और जिनके माता-पिता अकेलेपन से लड़ने के लिए वृद्धाश्रमों में जा बसते हैं और वहीं पर मृत्यु के इंतजार में अपना बाकी जीवन व्यतीत कर देते हैं? इतिहास के ऐसे उदाहरण उसकी आँखों के सामने घूमने लगे, जहाँ बेटे ने तख्त को हथियाने के लिए बाप को कैद में डाले रखा; जहाँ बेटे ने बाप को मौत के घाट इसलिए उतार दिया, क्योंकि बाप की मृत्यु निकट आती दिखाई नहीं देती थी और बेटा राजगद्दी पर बैठने की जल्दी में था; जहाँ पुत्र ने अपने परिवार को बंदूक की गोलियों से इसलिए भून डाला, क्योंकि उसके और परिवार के बीच किसी मामले पर गहरा मतभेद था; जहाँ बेटी अपने माँ-बाप की मरजी के विरुद्ध अपने प्रेमी के साथ भाग गई और उनकी जायदाद को हासिल करने के लिए उसने उन्हें अदालत में घसीटकर

बुरी तरह से उनकी पगड़ी उछाली। उसकी यह चिंता भी निराधार नहीं थी कि क्या समाज ऐसे नवागंतुक को स्वीकार करेगा? उसे नाजायज संतान कहकर कहीं उसका जीना हराम तो नहीं कर देगा?

ग्लानि से भरी मीता अपने आपसे कह रही थी, 'दुनिया के लोग भी क्या हैं। क्या वेदव्यास पराशर और सत्यवती के वैध विवाह से उत्पन्न हुए थे? वेदव्यास की तो हम पूजा करते हैं और ऐसे महापंडित की पूजा होनी भी चाहिए, लेकिन जब एक साधारण कन्या के यहाँ कोई ऐसा बच्चा जन्म लेता है, तो हम उसे तिरस्कार की नजर से देखते हैं।' उसका कहना था कि संसार के अधिकांश लोग अपनी अक्ल पर परदा डाले रहते हैं। उनसे भला कोई पूछे कि हर एक जीव जब नर और मादा के समागम से जन्म लेता है तो एक शिशु को वैध और दूसरे को अवैध की संज्ञा से संबोधित करना कहाँ का न्याय है, कहाँ की बुद्धिमत्ता है? महाभारतकार का कहना है कि महिला का गर्भ तो संतान के लिए मात्र एक धौंकनी का काम करता है; संतान तो पिता की होती है। जब हर बच्चा किसी पिता के शुक्राणु का प्रजनन है तो उसे पापज कहना पाप नहीं है तो और क्या है? महामुनि व्यास तो एक स्थान पर यहाँ तक कह देते हैं कि यदि (संतान प्राप्ति के लिए) कोई महिला किसी पुरुष से शारीरिक संबंध जोड़ने के लिए प्रार्थना करती है और पुरुष ऐसा कहने से इनकार करता है, तो इसे पुरुष द्वारा अधर्म कृत्य मानना चाहिए। आज के संदर्भ में मीता व्यासजी के परवर्ती विचार के साथ सहमत नहीं थी। उसका सोचना था कि ऐसा विचार आज से हजारों वर्ष पूर्व, जब संतानोत्पत्ति एक धर्म माना जाता था, ठीक था, परंतु समकालीन संदर्भ में इसे स्वीकार करना संभव नहीं। पुराने समय में जहाँ नियोग की इजाजत थी, वहाँ इस प्रावधान के साथ कुछ नियमों का पालन भी अविच्छिन्न था। प्रत्येक जीव को वह भगवान् की सृष्टि मानती थी और उसे 'दोगला', 'नाजायज', 'हरामी' या 'विजात' आदि शब्दों से संबोधित करना अपराध समझती थी। फिर उसे खयाल आया कि वैध और अवैध के वाद-विवाद को यदि वह भुला भी दे तो इस भय का निराकरण कैसे होगा कि जिस व्यक्ति के साथ संतानोत्पत्ति के लिए अस्थायी रिश्ता जोड़ा जाएगा, वह 'एड्स' या किसी अन्य संक्रामक रोग से आक्रांत नहीं होगा? यदि ऐसा हुआ तो जिस जीवन के आनंद के लिए साधन जुटाने का वह प्रयास कर रही है, वह जीवन ही मौत में बदलकर रह जाएगा।

मीता कई दिन तक इन विचारों के भँवर में गोते खाती रही। एक-एक कर मीता ने अपने सामने आए सभी विकल्पों पर विचार कर लिया था। अब या तो उसे समाज के बंधनों के खिलाफ बगावत का परचम हाथ में लिये अविवाहित माँ बनने का रास्ता चुनना था या फिर समाज के नियमों के सामने नतमस्तक होना था।

आज उसका जन्मदिन था। उसने अब अंतिम निर्णय लेने का फैसला कर लिया था। वह घर से सुबह-सुबह निकलकर कहीं चली जा रही थी। लोगों ने उसे नगर के उत्तर में बह रही नदी के पुल पर तेजी से बढ़ते हुए देखा। ये वर्षा के दिन थे, इसलिए नदी जल से भरपूर थी और इसका प्रवाह बहुत तेज था। नगरवासी इस पुल को 'मरण सेतु' कहते थे, क्योंकि निराशा से पराभूत अनेक नर-नारी इस पुल से कूदकर अपनी जीवनलीला समाप्त कर चुके थे।

लेकिन मीता अलग मिट्टी से बनी थी। वह जीना चाहती थी। ईश्वर के दिए अनमोल जीवन की हत्या को वह निकृष्टतम पाप समझती थी। देखते-देखते उसने पुल पार किया और नदी के दूसरी ओर स्थित शिशु-सदन में जा पहुँची। वहाँ उसने उस संस्था की निर्धारित औपचारिकताएँ पूरी कीं और एक कन्या को गोद ले लिया। वह जानती थी कि इस कन्या को माँगने का किसी को अधिकार नहीं होगा, क्योंकि उसकी रिश्तेदारी का न तो उसे कुछ पता था और न किसी और को। घर लौटने पर उसके मन में अब कोई कशमकश नहीं थी, द्वंद्व समाप्त हो चुका था। एक नई और भावभीनी जिंदगी का श्रीगणेश हो चुका था। उसे यह सोचकर भी प्रसन्नता हो रही थी कि अब उस बालिका को 'अनाथ' कहकर कोई नहीं पुकारेगा। आज वह सनाथ थी। आज एक नहीं, दो जिंदगियाँ एक साथ बदल गई थीं।

१३८५/१३, गोविंद पुरी, कालकाजी
नई दिल्ली ११००१९
दूरभाष : ९९७१७२८०४४

## इस अंक के चित्रकार

**(विज्ञान व्रत)**

जाने-माने लेखक एवं चित्रकार। दो काव्य-संग्रह के अलावा तीन सौ से अधिक विविध रचनाएँ प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। दूरदर्शन तथा आकाशवाणी पर रचनाओं, वार्त्ताओं तथा साक्षात्कारों का प्रसारण। चित्र प्रदर्शनी के साथ-साथ सैकड़ों पुस्तकों में रेखांकन। 'अंतरराष्ट्रीय वातायन सम्मान', 'सुरुचि सम्मान', 'परंपरा सम्मान' एवं अन्य कई सम्मानों से सम्मानित।

संपर्क : एन-१३८, सेक्टर-२५,
नोएडा-२०१३०१
दूरभाष : ०९८१०२२४५७१

# मेरे गाँव की अद्‌भुत परंपरा–रासोत्सव

● प्रकाश उद्धव उपासनी

महाराष्ट्र राज्य के नाशिक जिले में बागलान तहसील में मुल्हेर नाम का छोटा सा ग्राम है। यहाँ से ९०-९५ कि.मी. की दूरी पर गुजरात राज्य की सीमा शुरू होती है। प्राचीन काल में मुल्हेर, मयूर नगरी नाम से प्रसिद्ध था, जिसका संबंध राजा मयूरध्वज और ताम्रध्वज से है। गाँव के समीप दूर-दूर तक प्राचीन मंदिर और घरों के अवशेष बिखरे हुए हैं। सीढ़ीवाली बड़ी-बड़ी बावड़ियाँ पेड़ों से ढकी हुई हैं।

ऐसी पौराणिक कथा है कि महाभारत युद्ध के पश्चात् पांडवों ने अश्वमेध यज्ञ किया। स्वयं अर्जुन श्रीकृष्ण के साथ सेना लेकर नर्मदा लाँघकर मयूर नगरी के पास आए। मयूरध्वज और ताम्रध्वज पिता-पुत्र ने अश्वमेध के अश्व को बाँध लिया। श्रीकृष्णजी को अर्जुन का गर्वहरण करना था। मयूरध्वज पिता-पुत्र ने अर्जुन को श्रीकृष्ण के साथ बंदी बनाया। अर्जुन का गर्वहरण हुआ। तब मयूरध्वज राजा ने श्रीकृष्ण भगवान् से वरदान माँगा—''मुझे अपनी दिव्य रासक्रीड़ा दिखाओ।'' श्रीकृष्ण ने मयूरध्वज को रासक्रीड़ा का अनुभव दिया। तब से हमारे गाँव में हर साल आश्विन मास की पूर्णिमा को रासोत्सव का आयोजन होता आ रहा है।

'रासोत्सव' के तीन महत्त्वपूर्ण अंग हैं। एक तांत्रिक, दूसरा सामाजिक और तीसरा आध्यात्मिक। गाँव से दो फर्लांग की दूरी पर पेड़ों से घिरा ९७वीं सदी में जनमे श्रीउद्धव स्वामी का समाधिमंदिर है। मंदिर के चारों ओर तटबंदी और बड़ा प्रवेश-द्वार है। मंदिर के सामने खुली जगह पर नक्षीकाम किया हुआ 92 फीट ऊँचा लकड़ी का मजबूत स्तंभ है। उसके ऊपर ९० इंच का लोहे का आंस (axle) है। रास-उत्सव के दिन आठ फीट व्यास का लकड़ी का मजबूत चक्र खंभे के ऊपर से जमीन पर बिछाया जाता है। दस फीट लंबी बाँस की दंडियाँ चक्र को बाँधकर २८ फीट व्यास का मकड़ी के जाल जैसा बड़ा चक्र बनाया जाता है। उस चक्र को केलों के पत्तों से ढका जाता है। सूर्यास्त के समय सूरज और चंद्रमा को साक्षी रखकर यहाँ बड़ा चक्र लकड़ी के स्तंभ पर चढ़ाया जाता है। बहुत सारे लोग चक्र उठाते हैं और लकड़ियों के सहारे खंभे के आंस पर रखते हैं। चक्र पूरी रात घूमता है। (फिरत मंडल करीयलेत रासमो बिहारी।) चक्र के नीचे रासक्रीड़ा का भजनगान होता है। चक्र का खंभे पर चढ़ाना आह्वानात्मक होता है। दूसरे दिन सुबह रासक्रीड़ा की समाप्ति पर चक्र नीचे उतारा जाता है। यह रासक्रीड़ा का तांत्रिक अंग है।

रासक्रीड़ा का सामाजिक अंग—दस-बारह साल के लड़के को कृष्ण जैसा सजाया जाता है और पच्चीस-तीस लड़के लड़कियों का भेष पहनकर गोपियाँ बन जाते हैं।

रासक्रीड़ा का भजनगान रासोत्सव का महत्त्वपूर्ण अंग है। श्रीव्यासकृत भागवत् ग्रंथ के दशम स्कंध में रासपंचाध्यायी में रासक्रीड़ा का वर्णन है। १७वीं सदी में मयूरनगरी में उद्‌धवस्वामी नाम के महान् संत हुए। उनकी ग्रंथ संपदा और कुछ भजनकाव्य प्रसिद्ध हैं। श्री काशीराज पंडित उनके गुरु थे, जो औरंगजेब बादशाह के बहिरामशहा नाम के सरदार के किले में अमात्य थे। काशीराज महाराज गणेशजी के बड़े भक्त थे। काशीराज महाराज और शिष्य उद्धवस्वामी ने भागवत रासक्रीड़ा पर आधारित १६वीं और १७वीं सदी के ३४ संत कवियों के १०५ भजनकाव्यों का संकलन किया। ये भजनकाव्य २१ संगीत रागों में हैं। अश्विन पूर्णिमा के चंदेरी रातभर इन भजनों का पहाड़ी आवाज में गायन होता है। साथ में काँसे की झाँजें और मृदंग बजाए जाते हैं। बजाने का विशिष्ट तरीका होता है। बहुत सारे भजन ब्रजभाषा में यानी कृष्ण की मैया बोली में और एक-दो भजन गुजराती भाषा में हैं। इन भजनों में राधा-कृष्ण और गोपियों की भक्ति-प्रेम की अमर गाथा उमड़ने लगती है। भजनगान में समाज के सभी अंगों के लोग भाग लेते हैं, इसलिए यह परंपरा सामाजिक परंपरा बन गई है। कुछ भक्तगण भजनगान में विभोर हो जाते हैं। 'ईश्वर देखने गया और ईश्वर ही बन गया' का अनुभव लेते हैं। आनंद सागर में आनंद तरंग बन जाते हैं। क्या है यह रासक्रीड़ा? चुनिंदा भजनों के सहारे रासक्रीड़ा का हम संक्षिप्त में अनुभव लेंगे—

प्रथमत: मयूर ग्राम का उसकी चतु: सीमा के साथ एक मराठी श्लोक में वर्णन है—

*सोमेश, बाबेश, महेश लुंगेश।*
*शेणवंत राहती पवित्र देशे॥*
*श्रीमोक्ष गंगा, तट हौंस भीड़े।*

*व्यक्तं जगत् रक्षति उद्धवेशं॥*

अर्थात् गाँव के दक्षिण और उत्तर दिशा में सोमेश्वर और बाबेश्वर शिवमंदिर; उत्तर-पूर्व में महेश और तुंगेश, ये गिरि शिवस्थान और दिगंबर जैनों का पवित्र स्थान। पवित्र देश में शेष-भगवान् वास करते हैं। मोक्षगंगा नदी तटों को पावन करती है। ऐसी नगरी के उद्धव स्वामी सारे व्यक्त जगत् का रक्षण करते हैं।

*मोर मुगूट कटि काछनी, पितांबर वनमाल।*
*उद्धव की कुलदेवता, सो मदनमोहन नंदलाल॥*

(मयूर पंखों का मुकुट, कटी पर काछनी ओढ़े, पीतांबर पहने और वनमाला धारण किए हुए, मदन को मोहित करनेवाले नंदपुत्र हमारे उद्धव स्वामी के कुलदैवत हैं।)

एक चंदेरी रात में वृंदावन के समीप कुंजवन में कन्हैया बाँसुरी बजाते हैं। बाँसुरी के सुर का सारे वृंदावन पर क्या असर होता है, इसका वर्णन इस भजन में देखिए (राग सोडी)—

*ब्रजबनिता धुनी श्रवण सुनी हो सुनी बाँसुरी।*
*भुवन त्यजे सब काज सुनत बन बाँसुरी॥*
*आभ्रण उलटी-पलटी सजी हो सुनी बाँसुरी।*
*वसन किए विपरीत सुनत बन बाँसुरी॥*
*पति सुत सासू ससुर त्यजे हो सुनी बाँसुरी।*
*मोहन मन हरलीन सुनत बन बाँसुरी॥*
*मृगसुत तृन त्यजी रहे हो सुनी बाँसुरी।*
*मौन धरे खग मोर सुनत बन बाँसुरी॥*
*गोसुत पय पीवे नहीं हो सुनी बाँसुरी।*
*थक्यो जमुना को नीर सुनत बन बाँसुरी॥*
*रवि शशि रथ टेकी रहे हो सुनी बाँसुरी।*
*गगन विमान भई भीर सुनत बन बाँसुरी॥*
*मारुत मंद मगन भए हो सुनी बाँसुरी।*
*चलत नहीं तरुपात सुनत बन बाँसुरी॥*
*शिव गिरिजा संगीत मोहे हो सुनी बाँसुरी।*
*मुनीजन मेट्यो ध्यान सुनत बन बाँसुरी॥*
*निरखी नयन वपु जुगवर के हो सुनी बाँसुरी।*
*मन्मथ मानी हार सुनत ओहो बन बाँसुरी॥*
*तान तरंग रंग उमंगी रहे हो सुनी बाँसुरी।*
*शंकर सुत सुख होय सुनत बन बाँसुरी॥*

कान्हा की बाँसुरी सुनकर निसर्ग का कण-कण चैतन्यमय हो जाता है। वृंदावन की गोप-गोपियाँ, नर-नारी कुंजवन की ओर दौड़ पड़े। गोपियाँ सबसे आगे थीं। कान्हा ने दूर से गोपियों को देखा, बाँसुरी बजाना बंद किया और पास आने पर पूछा (राग-सामेरी)—

''जब हरी देखे, ठिगे ब्रजबाला। तिनसोजु बोले मदन गोपाला॥ १॥ अर्धनिशा तुम क्यों आई, या तो निंदिया वेद श्रुती गाई॥ २॥ निंदिया वधु वेद गावे। कुलवधु क्यों पती त्यजे॥ ३॥ लोक कहत कलंक लागे। पर पुरुख तरुनी भजे॥ ४॥ तुम जाओ भामिनी उल्टी अब ग्रह। जुगत नाही बातियाँ॥ ५॥ पती तुम्हारे पंथ जोवे। जाम जुग गई रातियाँ॥ ६॥ ऐसे गोप धुया धर्म नाही। कहत शाम तमालिया॥ ७॥ ऐसे कठिन वचन गोपाल बोले। देखि ठिग ब्रजबालियाँ॥ ८॥''

कान्हा ने आगे कहा (राग-सामोरी)—

''तुम जाओ सबे ब्रजनारी। तुम मानो सीख हमारी॥ तुम विधि अपनी खद कीजे। ग्रह पती को आदर कीजे॥ तुम धर्म-कर्म संसारी। तुम एक पुरुख भजो नारी॥'' १०-११ साल के कृष्ण परमात्मा ने गोपियों को धर्मोपदेश किया।

कान्हा का उपदेश सुनने के पश्चात् गोपियाँ आगे आईं और कान्हा को एक-एक करके पूछने लगीं—'कान्हा ऐसे कठिन वचन ना बोलो।'

*हम भुलाई निज निगम धुनी, मुरली मधुर बजाय।*
*गोबंधन तोरे मिले तो रुचो रह्यो कित जाय॥*

''हम पतिव्रता कामिनी, सुनो हो जगतपतीनाथ। परपुरुख कू हम ना भजे, हम भजे निजनाथ॥ ये ही अर्थ है वेद को सुनो हो कपटनिधान। येने पर कछु बोली हो, तो अबही अर्पू प्रान॥''

(कान्हा, मुरली की धुन सुनकर हमारा हृदयस्थ परमात्मा जाग उठा। हम पतिव्रता नारियाँ हैं, परपुरुख की ओर हम नेत्रकटाक्ष भी नहीं डालतीं। हमारे हृदयस्थ परमात्मा, जो हमारे सामने अवतीर्ण हुए हैं, उन्हें मिलने आई हैं। वेदों में यही लिखा है।)

उसके बाद, ''कोऊ भटेल, कोऊ पाव परत, कोऊ चितवन हास।''

कान्हा ने गोपियों से कहा—

''भले आई, दरशन कियो, बन देखी, अब गृह जाव।'' लेकिन गोपियाँ वापस जाने को तैयार नहीं। कैसे जाएँगी? मन ही नहीं भरा!

श्रीकृष्ण परमात्मा ने गोपियों के हित के बारे में सोचा। उनकी अगाध भक्ति देखी और रासलीला का अद्‌भुत आयोजन किया। सारे संसार को भूलकर अंतर्यामी परमात्मा के साथ जुड़ जाना, परमात्मा ही बन जाना रासलीला है। ऐसा जाना जाता है कि सारे संतों को परमात्मा ने वचन दिया था—श्रीकृष्ण अवतार में मैं मेरे भक्तों को रासलीला का अनुभव दूँगा। सारे संत गोपियाँ बन गए और उन्होंने रासलीला का अनुभव लिया। अंतरधान के श्लोकों में रासलीला का अलौकिक वर्णन है। सारा निसर्ग रासलीला की तैयारी में जुट गया। रासलीला देखकर सारा ब्रह्मांड अचंभित हो गया। मन लगाकर इस वर्णन का आस्वाद कीजिए—

*चतुर चिंतामणी चितय के, गोपिन के हित जान।*
*अनंत रूप आपन भये, एक गोपी एक कान्ह॥ १॥*
*अद्‌भुत लीला अती धरी, कथी कौन ये जाय।*
*तीनलोक चवदा भुवन रहे अचंबो पाय॥ २॥*
*सोलकला धर की शशी, रह्यो नक्षम बिछाय।*
*ग्रह तारे निशी न चले रवि उगन पाय॥ ३॥*
*महिधर, सागर, अंबर, गिरि सरिता के नीर।*
*पवन परसत भूमि पर, निरखी भकीत भयो तीर॥ ४॥*
*शिव सनकादिक सुरपती, सुरनर रहे सुमोह।*
*सोच परे चतुरानन ब्रह्मा अचंबो पाय॥ ५॥*

रासक्रीड़ा शुरू हुई। गोपियाँ अपने आपको भूलकर ब्रह्मानंद में लीन हो गईं। गोपियों का परमानंद देखकर स्वर्ग की देवांगना अपने स्वर्गीय जीवन को तुच्छ मानने लगीं। स्वर्ग में अटल सुख है; लेकिन वहाँ परमात्मा कहाँ हैं? धरा पर तो बैकुंठ उतरा है।

*अमरपुरी सब इंद्र की देवांगना रहीं देख।*
*गोपिन को सुख निरखी के, निंदती अपुनो भेख॥ ६॥*

रासक्रीड़ा का अनुपम वर्णन देखिए (राग-केदार)—

''सुनिधुनि मुरली बन बाजे, हरिए रास रच्यो अनु हा, हा, हा, हरिए, रास रच्यो॥ कुंज-कुंज द्रुमबेलि, प्रफुल्लित। मंडल कंचन मणी नख च्यौरे॥ हरिये रास रच्यो, अनु हा, हा, हा (धृ) निर्तत जुगलकिशोर जुवती जन। मानुमिली रागकेदार रच्यो हे, हरिये··· ॥ धृ॥

हरिदास के स्वामी शामा कुंज बिहारी।
निके आज गोपाल नचो हे, हरिये रास रच्यो॥ धृ॥''

रासक्रीड़ा की अद्‌भुत लीला देखकर महान् संत कबीरजी अपने आपको उपदेश करते हैं—

*कबिरा कबिरा क्या कहे, जा जमुना के तीर।*
*एक गोपि के प्रेम में बह गए कोटि कबीर॥*

सारी गोपियाँ रासक्रीड़ा में मगन हो गईं। फेर पकड़कर नाचने लगीं। गिरकियाँ लेने लगीं। नाचते-नाचते उन्होंने देखा—सारा ब्रह्मांड विस्मित होकर उनको देख रहा है। उनकी प्रशंसा कर रहा है। और—

*तब अपनो आनंद देखि के गोपिन धर्‌यो गुमान।*
*अविगत ऐसी समज के, तब भए हरि अंतरधान॥*

*गोपियों का अहंकार जाग उठा।*
*रासमंडल गिरिधर रच्यो, दे गोपिन सुखदान।*
*रसिकनि राधा संग लिए, तब भये हरि अंतरधान॥*

(राधाजी के साथ कृष्ण परमात्मा अंतर्धान हुए।)

अचानक यह क्या हो गया। गोपियाँ व्यथित हो गईं। रासक्रीड़ा थम गई। गोपियाँ खुद को दोष देने लगीं। दीन अवस्था में वे कान्हा को, राधा को ढूँढ़ने लगीं।

*कुंज-कुंज खोजत फिरे, पूछति दीनदयाला।*
*प्राणनाथ पावे नहीं, ताथे व्याकुल भई ब्रजबाला॥*

राधाजी के साथ कान्हा वन में चले गए। राधाजी को लगा कि कान्हा सिर्फ मेरे हैं। कुछ अंदर चलने के बाद राधाजी ने कन्हैया से कहा, ''कान्हा और कितने चलोगे। मैं तो थक गई। अब क्या तुम मुझे कंधे पर ले जाओगे?'' महाराष्ट्र में बहुत सारे संत हो गए। संत नामदेव उनमें से एक हैं। वे हमेशा सोचते थे—पंढरपुर के विट्‌ठल परमात्मा सिर्फ मेरे हैं। उनको अच्छा नहीं लगता, यदि दूसरा संत विट्‌ठल परमात्मा के समीप आता। संत नामदेव विट्‌ठल के बहुत लाड़ले थे। वैसा ही हुआ राधाजी के साथ।

*पिया संग एकांत रस, विलसत राधा नार।*
*स्कंध चढ़न प्रभु को कहे, तब त्यज गए मुराद॥*

इस श्लोक का अर्थ है—अंतर्यामी परमात्मा जाग गए। राधा परमात्मा बन गईं। उसके बाद—''न राधा रहीं, न परमात्मा ही। एकांत हो गया। एक का भी अंत हो गया। राधाजी स्थल काल के परे चली गईं। ब्रह्मानंद में डूब गईं।'' लेकिन यह पवित्र अनुभूति क्षणमात्र थी। कान्हा चले गए। (राग-चर्चरी)—

*डार-डार, पात-पात ढूँढ़त बन राधे।*
*हरि को पथ कोउ न कहे, सबनी मौन साधे॥*
*वसुधा जड़ रूप धर्‌यो, काहे नहीं बोले।*
*हरि को पद परसियाय संग लागी डोले॥*
*परमानंद स्वामी दयाल, निठूर भए भाई।*
*हमारो रोग देख जान कीन्ही चतुराई॥*

वन में राधाजी ने हर पत्ते, पौधे में कान्हा को ढूँढ़ा। किसी ने भी हरि की राह नहीं बताई, सब मौन हो गए। धरतीमाता ने कुछ कहा नहीं; कान्हा के हर पदस्पर्श के साथ वह डोलने लगी। कान्हाजी रूठ गए, लेकिन चतुराई से उन्होंने हमारी कमियों की ओर संकेत किया।)

सारी गोपियाँ कान्हा को ढूँढ़ रही थीं। उन्होंने राधाजी को अकेले देखा। वे उनके पास आकर बोलीं, ''राधाजी, आप अकेली क्यों? कहाँ हैं, कान्हा? आप उनको साथ ले गई थीं!'' राधाजी ने कहा (राग-सोरट—आने वाटडियो गयो वनमाली रे, मोरी बेन्हडियो॥

(मेरी बहनो, इसी पगडंडी से गए वनमाली।)

सारी गोपियाँ राधाजी के साथ कान्हा को ढूँढ़ने लगीं। वे थक गईं, लेकिन कान्हा नहीं मिले। अब क्या करें! कान्हा की विविध लीलाओं को वे याद करने लगीं (राग-आर्जा)—

*एक भइजु गोपाल संसारी, जिने दुष्ट पूतना मारी।*
*एक रूप मुकुंदज कीनो, जिने तृनावृत हर लीनो।*
*एक भैरव दामोदर धारी, जिने जमला अर्जुन तारी॥*

(एक गोपी कृष्ण बनी और उसने पूतना बनी गोपी का झूठ-मूठ वध किया। दूसरी ने मुकुंद बनकर तृणावृत का हरण किया। तीसरी ने यमलार्जुन का उद्धार किया।)

इस तरह कृष्ण की लीलाओं में गोपियों ने बहुत समय बिताया। फिर भी कान्हा नहीं आए। बाद में उन्होंने रासक्रीड़ा का आयोजन करने का सोचा, लेकिन कान्हा बिना यह कैसे संभव होगा। तब राधाजी ने मोर-मुकुट धारण किया, गले में कौस्तुभमणि और ओठों पर मुरली। राधाजी खुद कृष्ण (श्याम) बनीं। इसका सुंदर वर्णन इस भजन में देखिए (राग-नट)—

*मुकुट-मणी, शामा (राधा) आज बनी।*
*संग-सखी सब नाचत-गावत। येहि शामधनी॥ धृ॥*
*तब राधाजिय रास बनायो, मुरली मुगुट धरी।*
*थेई-थेई करत ब्रजनारी, कृष्ण चरित्र करी॥१॥*

*निरखत ब्रह्मा, सुरमुनि हरखत नारद सिद्धमुनि।*
*तेहतीस कोटि देख सब हरखत, सबहि सहस्त्र फणि॥२॥*
*रवि-शशी जमुना पुलिन थकित भई सबसे सरस धनी।*
*रासबिलास करत हे सजनी! रामस्वरूप बनी॥३॥*
*गोपी एक पूतना करीके, सोकि पयपान करी।*
*जमला अर्जुन वृक्ष दो उद्धारे, बली सबे उद्धरी॥४॥*
*ब्रह्मालीला किन्ही गोपिका, नटवर भेख धरी।*
*रामदास प्रभु कौतुक देखे, हरखे त्रैलोक्य धनी॥५॥*
*मुगुट-मणी शामा आज बनी॥*

रासलीला बहुत देर चली, लेकिन किसी का मन नहीं लगा। कान्हा के बिना यह कैसे संभव था! फिर गोपियों ने कृष्ण-दर्शन की लालसा में अमर 'गोपीगीत' गाया—

*जयति तेऽधिकं जन्मना व्रजः श्रयत इन्दिरा शश्वदत्रहि।*
*दयित दृश्यतां दिक्षु तावका स्त्वयि धृतासव स्त्वांविचिन्वते॥*

(गोपियाँ कहती हैं—लक्ष्मी से भी हम धन्य हैं, क्योंकि हम व्रज में जनमी हैं।)

यत्ते सुजात चरणाम्बुरुहं स्तनेषु, भीताः शनैः प्रिय दधी महि कर्कशेषु। ते नाटवी मटसि तद् व्यथते न किंस्वित् कूर्पादिभिर्भ्रमति धीर्भवदा युषां नः॥

(भक्तों के लिए सारे संसार में अनवानी घूमनेवाले कृष्ण-परमात्मा के कोमल चरण-कमलों में कितनी वेदना होती होगी, हम गोपियाँ उनके राह की पगडंडी बनकर उनके चरण धूल में समा जाएँगी।) गोपियाँ कृष्ण के चरण-कमलों का ही सदा ध्यान करती थीं। श्रीशुक उवचा—

*इति गोप्यः प्रगायन्त्यः प्रलपन्त्यश्च चित्रधा।*
*रुरुदुः सुस्वरं राजन् कृष्ण दर्शन लालसाः॥*
*तासामाविरभूच्छेरिः स्मयमान मुखाम्बुजः पिताम्बर*
*धरः स्त्रग्वी साक्षात् मन्मथ मन्मथः॥*

(इस तरह गोपियों ने अलग-अलग सुस्वरों में रो-रोकर गोपीगीत गाया। कृष्ण दर्शन की लालसा में वे मन्मथ हो गईं। नतमस्तक हो गईं।)

गोपीगीत के गायन पश्चात् भी कान्हा नहीं आए।

*बारोबन धुंडत फिरी काहु न देखे कान्ह।*
*जन्मचरित्र सब कर थकी, सो करूना कोमल गान॥१॥*
*हारी, सब उपचार करी, अति बिरहातुर बाल।*
*रुदन करत भई सब दुखित, बिलोकी दयाल॥२॥*
*आसूअन भीगे कंचुकी काजर माचो कीच।*
*थेई-थेई करत प्रगटे, वाही मंडल बीच॥३॥*
*सिंधजी छबी रतना सहे निजदासी नंदलाल।*
*बिकल बजावन बेगि मिले, सो भक्तन के प्रतिपाल॥४॥*
*प्रेमप्रीत पहिचान के हरि आए उनके पास।*
*मुदित भइ सब मानुनि छबी कहत कृष्णोदास॥५॥*

वृंदावन के चारों ओर बारह वन थे। गोपियों ने सारे वनों में कान्हा को ढूँढ़ा। उनके चरित्र का करुणामय गान किया। गोपीगीत गाया। ये सारे उपचार करके वे हार गईं। कान्हा के विरह में फूट-फूटकर रोने लगीं। आँसुओं से उनकी कंचुकियाँ भीग गईं। गालों पर आँखों का काजल बहने लगा। ऐसी अवस्था में वे कान्हा को ढूँढ़ती रहीं, ढूँढ़ती रही। आखिर मंडल में धीरे-धीरे प्रगट हुए, भक्तों के प्रतिपालक नंदलाल। वे गोपियों के पास आए। कृष्णदास नाम के संत ने देखा—सब गोपियाँ आनंदविभोर हो गईं।

भक्ति की अत्युच्च सीमा है विनम्रता। सारी गोपियाँ विनम्र हो गईं। महाराष्ट्र के महान् संत तुकारामजी ने कहा है, ''नम्र झाला भुता, तेने कोडियले अनंता,'' विनम्रता से अंतरात्मा जाग जाता है।

गोपियों को कान्हा मिल गए। अब उनसे वे कभी बिछड़ेंगे नहीं, लेकिन राधाजी कहाँ हैं? कौन थीं वह? हरिदास नाम के संत ने देखा—राधाजी श्रीकृष्ण परमात्मा में विलीन हो गईं। राधाजी ब्रजवासियों के भक्ति-प्रेम की अखंड 'धारा' थीं। जो इस धारा में बहेगा, वह कान्हा के पास पहुँचेगा। राधा-श्रीकृष्ण भगवान् के पास जाने का मार्ग है।

*शृंगार उत्तर रंगे, ध्येयं गोपी बल्लभनाथे।*
*वृंदावन तनधारी हरी, नाचे सावकाश चित्ते॥*
(भजन-राग-चर्चरी)—
*कृष्ण साथ हात जोरी बीच-बीच सुंदरी।*
*कलाविलास खेलति निवास शाम गुर्जरी॥ धृ॥*
*चित्तन मिलि अबला सो तीत नीत की कला।*
*अनंत रूप नंद-नंदन नायका सबे भली।*
*स्वेद को प्रसेव बिंदु बेरबेर पूछती।*
*मुखारविंद शाम को चकोजो विलोकती॥*
*सुनि वेणुनाद पूर्ण शाम शर्द ज्योति शर्वरी।*
*कृष्णराय गीत गाय रात हे बड़ी खड़ी॥*

सोलह कला पूर्ण चंद्रमा पश्चिम की ओर ढलता गया। गोपियाँ अपने नीले-साँवरे कान्हा के साथ रासक्रीड़ा में मगन हो गईं। और यह रासलीला नीले आकाश की गहराई में समा गई, फिर कभी प्रगट होने के लिए।

(राग-मालगौडा)—
*धन-धन वृंदाबननी शोभा। धन ते आसो मास रे॥*
*धन-धन कृष्ण कहुलनी लीला, धन गोपी रमे रास रे॥*
*लाल मृदंग बेनने मौहर, बहुबिधी बाजा बाजे रे॥*
*थेई-थेई-थेई कार करंता, नादे अंबर गाजे रे॥*
*कंठ कोकिला शब्द उच्चरे, नोतन तन उपजावे रे॥*
*मगन थईने मोहन पाम्या, गंधर्व गान हराव्या रे॥*
*धन-धन गोपी, धन ये लीला, धन ये रसमा माली रे॥*
*उमया वरनी वाहे वलगी, नरसैयो दिवि झाँकी रे॥॥*
*धन्य हो तुम नीले साँवरे कृष्ण भगवान्!*
*जय हो! जय हो!*

एल.आई.जी. कॉलोनी, ६५/३
सिंधू नगर, सेक्टर-२५ निगडी
पुणे-४११०४४, महाराष्ट्र
दूरभाष : ९९२२८१५८३२

यात्रा-संस्मरण

# रे ना मानेगो! तो जै ले राधाजी की गुलेल!

● स्मिता मिश्र

आज का दिन भी दौड़ा-दौड़ा, भागा-भागा सा है। कॉलेज में स्टाफ एसोसिएशन का होली मिलन है। शाम को उपराष्ट्रपतिजी के घर महिला पत्रकार प्रतिनिधि मंडल में जाना है। फिर अपनी शाम वाली क्लास है। हमने घड़ी देखी और कर दी आज की रेस शुरू।

आज क्या पहनूँ...क्या पहनूँ...इसी उधेड़बुन में थी। उपराष्ट्रपति के यहाँ जाना है तो औपचारिक पोशाक होनी चाहिए, यानी साड़ी। अब संकट यह कि कौन सी पहनूँ। अनेक साड़ियों पर से गुजरते हुए एक साड़ी पर जाकर हाथ रुक गया, जो कि तमाम साड़ियों के पीछे से झाँक रही थी। नीले रंग की हैदराबादी कॉटन साड़ी और बीच में कलमकारी का काम। इस साड़ी पर हाथ भी रुक गया और मन भी थम सा गया। यह साड़ी किसी की खास पसंद थी न! खैर, सिर झटका। देर हो गई है भागो।

शुक्र है 'ड्राइवर साहब' टाइम से आ गए। गाड़ी शुरुआती जाम के बाद हाइवे पर। आज रेड एफ.एम. के 'बउआजी को सुनने का मन नहीं था। कई बार सुबह-सुबह हताश कर देते हैं। आज थोड़ा पुराने गीतों की ओर चलते हैं, यानी एक एफ.एम. स्टेशन पीछे ९२.७, जहाँ गाना बज उठा 'आज बिरज में होली रे रसिया, होली रे रसिया, बरजोरी रे रसिया।' गाना पुराना है और क्लासिक भी, गीत के साथ मैं भी गुनगुनाने लगी।

तभी हमारे जानकार पंडित भानुप्रतान नारायण मिश्रजी (नाम लंबा है और यश भी) का फोन आ गया। मैंने जैसे ही फोन उठाया, उधर से आवाज आई—भाग्यलक्ष्मी! गणेशजी की कृपा से हम वृंदावन में विराज रहे हैं। पंडितजी पत्रकार हैं और ज्योतिषी भी। गणेशजी की भक्ति में सराबोर पंडितजी के राजनीति से भी गहरे संबंध रहे हैं। वे मुझे भाग्यलक्ष्मी बुलाते हैं, क्योंकि उनका मानना है कि मैं जब-जब उनसे मिलती हूँ तो उनके लिए लाभदायक स्थितियाँ बनती हैं। वैसे अनेक लोग मुझसे यह कहते हैं कि मैं उनके लिए भाग्यशाली हूँ। मेरे संपर्क में आने से उन्हें सफलता मिलती है। पता नहीं यह विश्वास कहाँ तक सच है। पर मेरे लिए यह सौभाग्य की बात है कि मैं लोगों की सफलता का निमित्त बनती हूँ।

पंडितजी के फोन और लगातार बजते होली के गीत से मन में खयाल आया और उस खयाल का परिणाम था कि अगले दिन सुबह ५ बजे मेरी कार वृंदावन के लिए निकल पड़ी। हर साल टेलीविजन पर ही ब्रज की होली देखकर आनंद लेती हूँ। इस बार वहीं जाकर आनंद लूँगी।

दिल्ली में पिछली रात जमकर बारिश हुई थी, ओले पड़े थे तो सुबह इतनी सर्दी थी कि मार्च के मौसम में भी कार में हीटर चलाना पड़ा था। रास्ते में अखबार खरीदा, जिसमें दैनिक हिंदुस्तान के पत्रकार और मेरे आत्मीय विद्यार्थियों में से एक अमित कुमार द्वारा खींची गई वृंदावन की

सुपरिचित लेखिका एवं मीडिया विशेषज्ञ। 'छोटे-बड़े रास्ते', भारतीय मीडिया : अंतरंग पहचान, मीडिया और साहित्य, भारतीय गाँव, बदलते संदर्भ, गीत फरोश-संवेदना और शिल्प आदि कृतियाँ। भारतेंदु हरिश्चंद्र मान पुरस्कार एवं अन्य सम्मान। संप्रति दिल्ली के श्री गुरु तेगबहादुर खालसा कॉलेज में मीडिया एवं साहित्य का अध्यापन।

लट्ठमार होली की बहुत आकर्षक फोटो प्रकाशित हुई थी, फोटो में एक औरत लट्ठ लेकर सड़क के बीच चल रही थी और दूसरी ओर पुरुषों की पूरी कतार खड़ी उसे देख रही थी। महिला दिवस पर सार्थक चित्र! यानी इस समय सारी सड़कें वृंदावन ही जा रही हैं।

धीरे-धीरे ब्रज क्षेत्र में होने का एहसास रँगे-पुते चेहरे देखकर होने लगा। दिल्ली से लगभग ३ घंटे में मैं वृंदावन पहुँच गई। सर्वप्रथम दर्शन करने थे बाँके बिहारी मंदिर में। पतली-पतली गलियों से गुजरते हुए भक्ति और फागुन की मस्ती में आह्लादित भक्तों के झुंड के झुंड मिलने लगे। एक ओर गुलाल, पेड़े-मिठाई, प्रसाद-सामग्री बेचनेवालों की दुकानें थीं तो दूसरी ओर साधुओं और विधवाओं की कतार थी। यानी संसार के भीतरवालों की और संसार से परेवालों की।

ज्यों-ज्यों गलियों के भीतर मैं धँसती जा रही थी, त्यों-त्यों फागुनी हवा मेरे भीतर धँसती जा रही थी और एक बेफिक्री सी आ रही थी। फिलहाल अभी तमाम देशी-विदेशी टीवी चैनलों के फोटोग्राफर 'रँगे-पुते' इस समय वृंदावन में छाए उल्लास को कैमरे में कैद कर रहे थे। विदेशी फोटोग्राफर के फोकस के केंद्र में साधु-विधवाएँ ज्यादा थीं। जबकि भारतीय फोटोग्राफर मस्ती के रंग में रँगे जीवन को अधिक कैप्चर कर रहे थे।

पिछले साल भी दोस्तों के साथ वृंदावन आना हुआ था। अब इन्हीं गलियों से दोबारा गुजरना हो रहा है। पिछले साल जब आई थी तो मैं सुबह-सुबह का वृंदावन देखने निकल पड़ी थी। एकदम शांत था शहर, ऐसे में मंदिर जाती विधवाएँ ही दिख रही थीं। टहलते-टहलते चाय पीने की इच्छा हुई। सुबह ५ बजे का समय था, सब दुकानें बंद थीं, पर सड़क के किनारे एक खोखानुमा दुकान खुल रही थी। वहीं जाकर कुरसी खींचकर बैठ गई। तभी एक छोटा सा बंदर मेरी कुरसी के साथ लगे खंभे पर चढ़कर शोर मचाने लगा। शायद कुछ खाने के लिए दुकानदार से माँग रहा था। मैं थोड़ी भयभीत सी हुई और कुरसी इधर-उधर की। चायवाले ने उससे ऐसे बात करते हुए कहा मानो इनसान से बात कर रहा हो—'रे! न मानेगो!' ब्रज शैली में कही गई यह बात मानो बंदर की समझ में आ गई। उसने

मानो शर्मिंदा सा होते हुए मुझसे थोड़ी दूरी बना ली। पर तब तक और बंदर भी आ गए थे। तब दुकानदार ने सहज रूप से उससे कहा, 'न मानेगो? तो जै ले राधाजी की गुलेल!' यह कहते हुए उसने एक गुलेल निकाली और बंदरों को दिखाई। ओहो! गुलेल देखते ही बंदरों में हड़कंप मच गया। सड़क के इधर के बंदर हों या सड़क के उधर के दूसरे बंदर, सबमें भगदड़ मच गई। छोटे बंदर, बड़े बंदर, मोटे बंदर, पतले बंदर, जिसको जहाँ जगह मिली, भागने लगे। बड़े बंदर कूद-कूदकर बिल्डिंग के ऊपर चढ़ बैठे। छोटे-छोटे बचुनिया जैसे बंदर बेचारे भाग नहीं पाए तो सड़क के किनारे खड़ी रेहड़ियों के पीछे छिप गए। एकदम इनसानों जैसे व्यवहार। एक तो गुलेल फिर 'राधाजी' के नाम का माहात्म्य···भगदड़ तो मचनी ही थी। अरे भई! राधाजी जब कृष्ण को नहीं छोड़ती थीं तो फिर ये बेचारे बंदर किस गिनती में हैं। अब मुझे लग रहा था कि जो लोग अभी सो रहे हैं, वे कैसे अद्‌भुत दृश्य से वंचित रह गए।

खैर, इस बार की वृंदावन यात्रा में 'माधवजी' हमारे गाइड थे। १८-१९ साल का लड़का, लेकिन वाक्पटुता खूब भरी हुई। वृंदावन का निधिवन घुमाते-घुमाते कहने लगा, मैडमजी, अपना चश्मा बैग के अंदर रखिए, पाकिस्तानी आतंकवादी और वृंदावन के बंदरों का कुछ पता नहीं कि कब, कहाँ से आ जाएँ। सी.सी.टी.वी. से बच जाओगी, इनसे नहीं। मैंने झट से चश्मा बैग के अंदर रखा, पर बंदरों का चश्मे से लगाव का कारण समझ नहीं पाई।

निधिवन घुमाते हुए गाइड माधव ने बताया कि यह प्रेम का स्थान है। इसलिए ताली बजाओ और हँसो। ताली बजाना और हँसना यानी आनंद महसूस करना। अद्‌भुत स्थान है निधिवन भी। कृष्ण की रासलीला की भूमि, कृष्ण की जितनी गोपियाँ उतने ही वृंदा के पेड़ और वह भी जोड़े में। वृंदा यानी तुलसी। प्रेम भी विचित्र शब्द है। असली दुनिया में कितना 'वर्ज्य' माना जाता है, लेकिन ईश्वर से जुड़कर पूज्य बन जाता है। भक्त आते हैं और भगवान् की रासलीला के स्थान की धूल माथे पर लगाते हैं।

धर्म एक ओर जहाँ 'अर्थ और काम' से मोक्ष की ओर जोड़ता है वहीं धर्म के प्रतीक ये मंदिर न जाने कितनों के जीवन के आर्थिक आधार बनते हैं। तमाम भक्तों के आने से धार्मिक पर्यटन बढ़ता है। पूजा-सामग्री, प्रसाद, फूल, मूर्तियाँ, स्मृति-चिह्न, खाना-पीना, होटल, धर्मशालाएँ, गाइड, यातायात, रियल-स्टेट और न जाने कितनी-कितनी जीविकाएँ आम लोगों के लिए खुलती जाती हैं। धर्म से जहाँ एक ओर दुनिया से परे ले जाने का कार्य सधता है, वहीं इस दुनिया में जीने के लिए भी साधन धर्म जुटाता है। यानी आध्यात्मिकता और भौतिकता दोनों का कार्य धर्म से सधता है। वाह! हालाँकि यही शब्द दुनिया में तमाम उठापटक का भी कारण है। दरअसल, धर्म जीवन-पद्धति है, कर्तव्य है। इससे परे कोई तीसरा अर्थ कम से कम मुझे समझ नहीं आता है। परहित सरिस धरम नहीं भाई/पर पीड़ी सम नहिं अधमाई। तुलसीदास ने कितने सहज रूप में धर्म को व्याख्यायित कर दिया, फिर भी दुनिया धर्म को लेकर लड़े जा रही है। जो चीज जितनी सहज दिखती है, उसे अपनाना उतना ही कठिन होता है। देखा वृंदावन का प्रताप! मेरे जैसी घुमक्कड़-फक्कड़ व्यक्ति भी दार्शनिक हो गई।

अभी बाँके बिहारीजी के शाम के दर्शन में दो घंटे की प्रतीक्षा थी। तय किया कि मंदिर के प्रांगण में बैठकर ही शाम के ४:३० बजे की प्रतीक्षा की जाए। मंदिर के मुख्य द्वार के सामने ही बैठकर लोगों को देखने का आनंद लेने लगी। तभी याद आया कि लोगों के फोन और एस.एम.एस. आ रहे थे, जिनका जवाब नहीं दे पा रही थी। अभी समय है, चलो स्टेटस अपडेट कर दूँ फेसबुक पर। ताकि लोगों को पता चल जाए कि मैं दिल्ली में नहीं हूँ। कुछ फोटो फेसबुक पर डाल दीं। अभी लंबा-चौड़ा लिखने का समय नहीं था, तो दो-तीन फुटकर लाइनें लिखकर कुछ फोटो डाल दीं। तब तक राधे-राधे करते भक्त मंडली मस्ती में झूमने लगी। सामूहिकता में कितना आनंद होता है। यह सुरीला और बेसुरा होने का प्रश्न नहीं था, बस सामूहिकता की लय थी। और उसी में आनंद था। ढोल, नगाड़ेवाले भी मस्त और मैं भी मस्त। सबसे खूबसूरत बात यह कि इतनी भीड इतनी मस्ती थी, पर कहीं भी बेहूदगी नहीं देखी। गुलाल ही गुलाल, मस्ती ही मस्ती। राधा-कृष्ण की नगरी जो है।

अभी एक घंटा बचा था कपाट खुलने में। बाहर भक्तों के घोष ऊँचे से ऊँचे होते जा रहे थे। 'बोल बाँके बिहारी महाराज की जय'। ऐसा लगा, भक्तों के घोष से बाँके बिहारीजी भी स्थिर न रह सके और कपाट पहले ही खोल दिए गए। कपाट खुलते ही भक्तों का समुद्र भीतर बह चला—अंदर जैसे ही पहुँचे तो अद्‌भुत, अवर्णनीय दृश्य देखा। लाल-गुलाबी गुलाल आसमान पर छाए हुए। सब बाँके बिहारी के साथ होली खेलना चाह रहे थे। और बाँके बिहारीजी की काले रंग की मूर्ति गुलाबी गुलाल से सराबोर होकर गुलाबी आभा से दमक रही थी। जीवन का सार, ध्येय, लक्ष्य आदि शब्द यहीं आकर समाप्त हो जा रहे थे। मोक्ष और क्या होता है। शायद यही···यही···यही···। मैं तो आनंद से छक ली। आने से पहले तो बहुत कुछ था मन में, पर अब मन में केवल आनंद! अपनी होली तो हो ली, भई!

अब कुल्हड़ की चाय पी जाए और चाट खाई जाए। अहा! चाय पीते-पीते फोन पर फेसबुक नोटीफिकेशन आने लगे, देखा कि मेरी पोस्ट पर बहुत प्रतिक्रियाएँ आ गई हैं, कुछ ने आश्चर्य जाहिर किया था तो कुछ ने शिकायत की थी कि मैं उन्हें नहीं लेकर गई। कुछ ऐसे थे, जिन्होंने पढ़ा तो, कुछ कहना भी चाहा होगा, पर लाइक करके ही छोड़ दिया!

दरअसल, 'यात्रा' करना तो सब चाहते हैं, पर यात्रा की चुनौती लेना सबके बस की बात नहीं। कुछ लोग यात्रा की इतनी प्लानिंग करते हैं कि वह यात्रा होती ही नहीं। मेरे लिए जीवन हो या यात्रा, बहुत 'इफ' और 'बट' नहीं हैं। बहुत सीधा और सहज सोचनेवाली व्यक्ति हूँ। इसलिए तमाम लोगों के 'इफ' और 'बट' की पूछताछ से जूझने का माद्‌दा नहीं है मुझमें। उसमें यात्रा का आनंद ही समाप्त हो जाता है। यात्रा शुरू होने से पहले ही खत्म हो जाती है।

मेरे तो मन में आया, विचार बनाया, थोड़ा गूगल किया और निकल पड़े। इस उद्‌देश्य के साथ लेट्स एक्सप्लोर···।

आर-३८, वाणी विहार
उत्तम नगर
नई दिल्ली-११००५९

# धरती के सितारे, अंतरिक्ष में उतारे

बाल-कथा

● प्रेमकिशोर पटाखा

आज बेटी अमला की १५वीं सालगिरह थी। अतिथियों से हॉल खचाखच भरा था। रात के दस बज चुके थे, लेकिन अभी तक अमला के पिता 'गोल्डन ऐरो' घर नहीं आए थे। सभी उनके इंतजार में थे। बेटा राजीव और उनकी पत्नी संध्या ने कई बार फोन मिलाया, लेकिन हर बार यही उत्तर मिलता था कि उन्हें निकले हुए कई घंटे बीत गए।

ठीक दस बजकर चालीस मिनट पर टेलीफोन की घंटी बजी। लपककर रिसीवर उठाया, आवाज आई, ''मैं पुलिस स्टेशन से इंस्पेक्टर रावत बोल रहा हूँ, हमें अत्यंत खेद के साथ यह सूचना मिली है कि अभी-अभी किसी अज्ञात लोक से आई उड़नतश्तरी के द्वारा वैज्ञानिक 'गोल्डन ऐरो' का अपहरण कर लिया गया।''

सुनते ही सभी के चेहरे उदास हो गए। उड़नतश्तरी द्वारा इस वर्ष की यह एक और अपहरण की घटना थी। इससे पहले देश के प्रसिद्ध संगीतकार, अनेक राजनेताओं का उड़नतश्तरी के द्वारा अपहरण किया जा चुका था। टेलीविजन के परदे पर 'वैज्ञानिक गोल्डन ऐरो' की विज्ञान के क्षेत्र में दी गई उपलब्धियों को बताया जाने लगा। उनके अपहरण की रिपोर्ट चित्रों के साथ दिखाई जाने लगी।

'वैज्ञानिक गोल्डन ऐरो' का अपहरण एक तरह से हमारी वैज्ञानिक शक्तियों का अपहरण था। 'गोल्डन ऐरो' देश के गिने-चुने वैज्ञानिकों में से एक थे। उन्होंने हवा विहीन क्षेत्रों के लिए ऑक्सीजन यंत्र की खोज की, इस उपलब्धि के कारण उन्हें 'गोल्डन ऐरो' की उपाधि से विभूषित किया गया था।

अब टी.वी. कैमरा चंद्रमा की धरती की तसवीर दिखाने लगा। हमारे पड़ोसी उपग्रह चंद्रलोक की धरती के लिए ऑक्सीसन यंत्र की खोज किसी वरदान से कम नहीं थी। चाँद की धरती पर रहनेवालों को अपनी पीठ पर ऑक्सीजन से भरे थैले लटकाकर रखने पड़ते हैं, ऑक्सीजन यंत्र की नई खोज से उनके थैले उतरनेवाले थे।

वैज्ञानिक गोल्डन ऐरो का संक्षिप्त परिचय दिया गया—परिवार में उनकी पत्नी, एक बेटी अमला और बेटा राजीव। बेटी की सालगिरह पर यह अपहरण किसी बड़ी दुर्घटना से कम नहीं था।

आइए, अब हम आपको वैज्ञानिक 'गोल्डन ऐरो' के बँगले में उनके वैज्ञानिक कक्ष की ओर ले चलते हैं। वैज्ञानिक कक्ष एक लोहे की बंद अलमारी में था, जिसे केवल कंप्यूटर द्वारा ही खोला जा सकता था। कंप्यूटर भी एक तरह से रोबोट की तरह ही बनाया गया था। जिसमें दो छोटे-छोटे हाथ-पैर, एक बड़ा सिर, जिसमें अनगिनत छोटे-छोटे रंग-बिरंगे बल्ब, पुरजे थे, इसी में वैज्ञानिक के अनेक नए-पुराने रिकॉर्ड बंद थे। वैज्ञानिक गोल्डन ऐरो की हर दिन की डायरी भी इसी में रिकॉर्ड की जाती। तरंगों द्वारा वे अपनी आवाज में हर बात इसमें जब चाहते रिकॉर्ड करा सकते थे।

जाने-माने बाल रचनाकार। दर्जनों बालगीत की पुस्तकें, कहानियाँ, कॉमिक्स, हास्य-व्यंग्य के अलावा गद्य-पद्य दोनों में विपुल लेखन। पत्र-पत्रिकाओं में विविध रचनाएँ निरंतर प्रकाशित होती रहती हैं।

बेटी अमला और राजीव कंप्यूटर से रिकॉर्ड की गई डायरी में वैज्ञानिक गोल्डन ऐरो की आवाज साफ सुन रहे थे। मेरे बच्चो! मैं जानता हूँ, आज मेरी बेटी की सालगिरह है। उसी के लिए मैं समय से आधा घंटे पहले अपने ऑफिस से निकला ही था कि सुनसान रास्ते पर अचानक तेज हवाओं का तूफान सा आया। सड़क की लाइटें एक साथ बुझ गईं। मेरी कार की लाइट भी नहीं थी। अँधेरे में मैंने अपनी कार रोक दी। रोकते ही कार का दरवाजा तेजी से खुला। मुझे पकड़कर बाहर खींचा और सामने घूमती हुई उड़नतश्तरी में ले जाकर बंद कर दिया। तश्तरी हवा में उठी और घूमती हुई आकाश में दौड़ने लगी। मुझे एक कुरसी पर बिठाकर बाँध दिया है। साथ आए हुए प्राणी मुझे किसी नए लोक के प्राणी मालूम होते हैं। इनकी आवाज और ताकत का अंदाजा नहीं है। मेरे बालों में छिपा कंप्यूटर ही मुझे मेरे कंप्यूटर में रिकॉर्ड कराने में मेरी मदद कर रहा है।

उड़नतश्तरी किसी हाई इलेक्ट्रिक पावर से संचालित है। यह शक्ति उसे सूर्य की किरणों से मिलती है। तीन सुनहरे रंग के लंबे प्राणी इसके चालक हैं। बचाव के लिए बाहर की ओर 'रॉकेट बम' है। इसके तेज घूमने के कारण कोई भी वस्तु इनसे टकराकर दूर छिटक जाती है इसीलिए इन तश्तरियों पर किसी बाहरी वस्तु से हमला सफल नहीं होता है। सुनहरे लंबुओं ने मुझे चमकती पोशाक पहनने को दी है, इसके आगे कंप्यूटर में उनकी बातें रिकॉर्ड नहीं थीं।

उड़नतश्तरियों का रहस्य रहस्य ही बना हुआ था। इस गुत्थी को सुलझाने के लिए सरकार की ओर से एक नई योजना तैयार की गई। एक नए वैज्ञानिक राजेश का नाम उछाला गया, जो असल में जासूस राजेश था। यह भी घोषणा हो गई कि वैज्ञानिक राजेश उड़नतश्तरियों के

लोक का पता लगाएँगे, इसके लिए उन्हें तैयार किया जा रहा है। और सचमुच एक दिन उड़नतश्तरियों द्वारा जासूस राजेश का भी अपहरण कर लिया गया। जासूस राजेश की अँगूठी में दिशासूचक ट्रांसमीटर था, इसी ट्रांसमीटर के द्वारा पृथ्वी पर नियंत्रण-कक्ष में अपना संदेश भी भेजा जा सकता है।

पोशाक में लगे बटन एक तरह से टाइम बम हैं। बटन खींचकर सामनेवाले के ऊपर फेंकते ही बिना धमाके के जलकर वहीं ढेर। सिगरेट की पॉकेट में सिगरेट की तरह रिवॉल्वर से चलनेवाली गोली, सिगरेट सुलगाई नहीं कि सामनेवाले के ऊपर फायर हो गया। उड़नतश्तरी जासूस राजेश को उड़ाकर अंतरिक्ष में ले गई। अंतरिक्ष में घूमते हुए ग्रहों की ओर से वैज्ञानिक शक्तियों के एक-दूसरे पर प्रहार और अपहरण की घटनाएँ भी पृथ्वीवासियों के सुनने में आने लगीं। जासूस राजेश ने इस बात का संकेत दिया कि उड़नतश्तरी को किसी दूसरे ग्रह ने अपने जाल में फँसा लिया है।

जासूस राजेश को उड़नतश्तरी में से बाहर निकाला। तश्तरी के सुनहरे लंबुओं को उस लोक के सैनिकों ने पूरी तरह जकड़ रखा था। जबकि राजेश के साथ ऐसा कुछ नहीं किया गया। सम्मान के साथ उसे बाहर निकाला और तेज यान जैसी काली लंबी कार में बिठाकर गगनचुंबी इमारतों के बीच में ले जाया गया। जासूस राजेश ने अपने संदेश में बताया—ऐसा लगता है कि यह ग्रह पृथ्वी लोक की तरह ही संपन्न, हवादार लोक है। यहाँ की वैज्ञानिक ताकत भी किसी से कम नहीं। यहाँ के रक्षकों ने मेरे साथ पूरी हमदर्दी दिखाई है। उनके ही इशारे पर मैं सीधे पृथ्वी लोक वार्त्तालाप कर सका हूँ।

मुझे बताया गया है कि यह मंगल ग्रह का ही एक विकसित हिस्सा है। मंगल ग्रह की ओर से शीघ्र ही पृथ्वी लोक के नन्हे-मुन्नों के लिए पर्यटन की एक नई योजना शुरू होनेवाली है। इस योजना में यहाँ के रॉकेटनुमा तेज यान पृथ्वी लोक के बच्चों को बिठाकर लाएँगे और अपने लोक की सैर कराएँगे। यहाँ किसी महारानी का शासन है। महारानी बच्चों से बेहद प्यार करती है।

मंगल ग्रह की ओर से पर्यटन योजना में शामिल पृथ्वी लोक के बच्चों को पहले रॉकेट स्टेशन लाया गया। सभी के अंतरिक्ष में जाने के लिए विशेष पोशाकें दी गईं। इन बच्चों में अंतरिक्ष गोल्डन ऐरो की बेटी अमला और बेटा राजीव भी था। वैज्ञानिक के बेटे और बेटी का संपर्क सीधे पृथ्वीलोक में अपने कक्ष में लगे कंप्यूटर से तो था ही, साथ में उनके कंधों पर ऑक्सीजन के थैले भी नहीं थे। उनके पास थे अपने डैडी के ऑक्सीजन यंत्र।

सायरन की आवाज के साथ ही रॉकेट स्टेशन से बच्चों को अंतरिक्ष में ले जानेवाले रॉकेट की पूरी तरह जाँच करके बस कुछ सेकेंड में छूटने का संकेत मिल चुका था। एक धमाके के साथ रॉकेट सफेद धुआँ छोड़ता हुआ, ऊपर हवा में बढ़ता, आकाश की ओर जाता हुआ दिखाई दिया।

टेलीविजन के परदे पर उनकी तसवीर आनी शुरू हो गई। रॉकेट में लगे ऑटोमैटिक कैमरे पृथ्वी पर अपने चित्र भेजने लगे। टेलीविजन के परदे पर कभी बच्चों के मुसकारते हुए चेहरे नजर आते तो कभी रॉकेट का आगे का नुकीला भाग। अब तक बच्चों ने मंगल गृह की महारानी और उसकी राजकुमारी की कहानियाँ सुनी थीं। कहानी में महारानी और उसकी राजकुमारी को बच्चों से प्यार करनेवाली बताया गया था। आज बच्चे उसी मंगल लोक की ओर जा रहे थे। मंगल लोक की धरती के चित्र आने शुरू हो गए। संदेश सुनाई देने लगा—'बच्चो! हम जल्दी ही मंगल लोक की धरती पर पहुँचनेवाले हैं। बच्चों के स्वागत के लिए इस लोक की महारानी अपने परिवार के साथ रॉकेट स्टेशन पर मौजूद रहेंगी।'

मंगल ग्रह पर पृथ्वी लोक की तरह ही जीवन है। यहाँ भी समय पर सूरज निकलता है, चाँद छिपता है और रात में तारे चमकते हैं, मुसकारते फूल हैं, उनमें खुशबू हैं, खुशबू ऐसी है कि सभी एक-दूसरे से प्यार करते हैं। सबसे मजेदार बात यह थी कि यहाँ के निवासी आकार में बौने हैं—दो फीट से बड़ा यहाँ कोई नहीं है, लेकिन उनमें ताकत कमाल की है। क्या कोई मशीन इतनी फुरतीली हो सकती है। यहाँ के निवासी जन्म नहीं लेते बल्कि उन्हें साँचों में ढाला जाता है, तभी इनके शरीर लोहे की तरह मजबूत हैं। राजीव ने उनका स्पर्श किया, 'अरे, यह तो सचमुच फौलाद का बना है।'

'हाँ, हमारा शरीर भी फौलाद का है और हमारी खोपड़ी में संसार की सभी भाषाएँ हैं। हम तुम्हारी तरह बोल भी सकते हैं।' लोहे के बौने आदमी ने कहा।

बच्चों ने देखा, आकाश में दूर जाल सा फैला हुआ है। पूछा, यह जाल कैसा है?

लोहे के बौने आदमी ने जबाव दिया, 'यह हमारे लोक का माया जाल है। जब भी कोई बिना अनुमति के हमारी सरहद में प्रवेश करता है, तो इसी जाल में उलझ जाता है। पिछले दिनों एक उड़नतश्तरी इस जाल में फँस गई थी, जिसमें पृथ्वी लोक का वैज्ञानिक जासूस राजेश था।'

राजीव ने कहा, 'हाँ, वही उड़नतश्तरी होगी, जिसमें हमारे लोक के जासूस राजेश का अपहरण किया गया था।'

'हाँ, अब यह उड़नतश्तरी हमारे कब्जे में है और जासूस राजेश हमारे अतिथि हैं। हम जानते हैं कि पृथ्वी लोक के निवासी सभी से प्रेम करते हैं और प्रेम करनेवालों को हम भी बहुत चाहते हैं। हमसे किसी के मन की बातें छिपी नहीं रह सकतीं। हमारे स्पर्श से ही हमें सब जानकारी तुरंत मिल जाती है।'

'क्या हम अंकल राजेश से मिल सकते हैं?' अमला ने पूछा।

'क्यों नहीं, मिल सकते हैं। इन दिनों हमारे वैज्ञानिक ट्रेनिंग कक्ष में नई वैज्ञानिक उपलब्धियों के बारे में उन्हें नई और सही जानकारियाँ दे रहे हैं।' मंगल लोक में उतरते ही ऑक्सीजन से लदे थैले अलग कर दिए गए। तेज हवा का झोंका आया और यान की खिड़कियाँ तुरंत खुल गईं। दरवाजे खुलते ही बच्चों का दल मंगल लोक की धरती पर उतर गया। मंगल ग्रह की रंग-बिरंगी धरती, छोटे-छोटे रंगीन पक्षियों के झुंड, पक्षियों

पर वहाँ के बौने निवासी बैठकर यात्रा करते और हवा में उड़ते हुए नजर आते। हवा में बहती हुई सुगंध से मन और प्राण खिल उठे। बच्चों ने मंगल ग्रह पर दूध की बहती हुई नदियाँ देखीं।

अब राजीव ने लोहे के बौने आदमी से पूछा, 'मिस्टर जासूस हमें यह बताओ कि यहाँ किसी राजा का शासन क्यों नहीं है? यह राजकुमारी कौन है?'

लोहे के बौने आदमी ने बताया, 'शासन करनेवाली राजकुमारी हमारे ग्रह की देवी है। राजकुमारी सौंदर्य में अद्वितीय है और आकार में भी पाँच फुट से कम है। हमें यह आकार और जीवित रहनेवाली शक्तियाँ प्राप्त हैं। राजकुमारी का जन्म नहीं हुआ, यह हमें शक्ति से प्राप्त हुई हैं, इसलिए जन्म और मृत्यु से भी अलग हैं।'

'आयरनमैन, हमने सुना है, तुम्हारे शरीर को ढालने के लिए ढाँचे होते हैं।'

'हाँ, उसी ढाँचे में छोटे-छोटे पुरजों से हमारे शरीर की रचना होती है। हमारा जन्म नहीं होता, इसलिए मृत्यु भी नहीं होती। जब कोई पुरजा खराब हो जाता है, उसे बदल दिया जाता है। हमारी ताकत भी लोहे के समान शक्तिशाली होती है। हम कुछ भी कर सकते हैं। चल सकते हैं, दौड़ सकते हैं और हवा में उड़ भी सकते हैं।'

'लेकिन हवा में उड़ते पक्षियों पर यहाँ के निवासी बैठ यात्रा करते नजर आ रहे हैं। इनके बारे में हमें कुछ बताइए।' एक बच्चे ने पूछा।

'यहाँ के पक्षी, दूसरे जानवर और यहाँ के निवासी पृथ्वी लोक की तरह ही जन्म लेते हैं। अपनी आयु पूरी करने के बाद उन्हें अपना शरीर छोड़ना पड़ता है, इनके शरीर हल्के होते हैं, तभी ये उड़ते पक्षियों की पीठ पर बैठकर कहीं भी यात्रा कर सकते हैं।'

बच्चों के लिए भेजी गई विशेष रंग की लंबी कार सामने आकर रुक गई। बच्चों की टोली उसमें सवार हो गई। लंबी कार में बैठते ही गाइड ने बताया, 'पृथ्वी लोक से आए बच्चों का हमारे ग्रह की राजकुमारी सच्चे हृदय से स्वागत करती हैं और सबसे पहले हम बच्चों को राजकुमारी के महल की ओर ले चलते हैं।'

कार में बैठे बच्चे महसूस कर रहे थे, कार पहियों पर नहीं बल्कि बर्फ पर तेजी से फिसलती हुई चली जा रही है। सफेद संगमरमर से ढका राजकुमारी का महल दूर से नजर आ रहा था। महल के ऊपर प्रकाश की किरणें पड़तीं और महल की दीवारें रंग-बिरंगी नजर आने लगीं।

गाइड ने बताया, 'राजकुमारी के महल के पास ही एक सतरंगी मीनार है। इस में से प्रकाश की किरणें निकलती हैं, यही प्रकाश की किरणें राजकुमारी के महल को रंग-बिरंगा चमका देती हैं।' सन्न से करती हुई बच्चों को लेकर जानेवाली लंबी कार महल के अंदर प्रवेश कर गई। राजकुमारी ने फूलों के गुलदस्तों से बच्चों का स्वागत किया। राजकुमारी चाँदनी जैसी सफेद पोशाक में थीं। उनके एक हाथ में गोल चमकदार सितारे की तरह चाँदी की छड़ी थी, जिस पर मोतियों से जड़ा मुकुट था। राजकुमारी मुसकारती तो फूल झरने लगते।

एक बच्चे ने पूछा, 'राजकुमारीजी! आपके हाथ में चमकती हुई छड़ी क्या है?'

'यह जादू की छड़ी है, इस छड़ी से हम जो चाहे पा सकते हैं।'

'क्या मैं अपनी मम्मी के पास पृथ्वी लोक जा सकता हूँ।' राजीव ने पूछा।

'हाँ, क्यों नहीं।' इतना कहते ही जादू की छड़ी का स्पर्श करते ही राजीव अचानक गायब हो गया, बच्चों ने जादू देखा। कुछ ही पल बीते होंगे कि राजीव उनके बीच में था।

'अरे हाँ, मैं तो अभी अपनी मम्मी से बातें कर रहा था।'

मम्मी ने पूछा, 'क्यों बेटा राजीव, अपनी मंगल लोक की यात्रा से वापस लौट आया।' मैं जबाव देता कि यहाँ आ गया। 'इसलिए कि तुम्हारी मंगल लोक की यात्रा अब यहाँ से शुरू हुई है।' राजकुमारी ने कहा।

रात्रि विश्राम के लिए बच्चों को फूलों के गद्दों पर सुला दिया गया, बच्चों की रात मीठे सपनों में बीती। सुबह की किरणों ने बच्चों का स्वागत किया। महल की पारदर्शी दीवारों में से सूरज की किरणें सोये हुए बच्चों के ऊपर पड़ीं।

आँखें खुलते ही महल के पास दासियाँ उनकी सेवा में लग गईं। गुलाब कुंड में ले जाकर उन्हें स्नान कराया। सभी को मंगल लोक के निवासियों की तरह पोशाकें पहनने को दीं। दूध की नदी से गरमागरम दूध पीने को मिला। नीली सड़कों पर बिना पहियों की तेजी से रपटनेवाली गाड़ी में बिठाकर उन्हें हंस स्टेशन लाया गया। मंगल लोक के हंसों पर बैठकर बच्चे हवा में उड़ गए। बच्चों ने उड़ते हुए हंसों पर सवार होकर मंगल लोक की रंग-बिरंगी धरती का आनंद लिया।

सुनहरी झील मंगल लोक का बिजली-उत्पादन केंद्र है। झील में चाँदी के रंगवाली छोटी-छोटी मछलियाँ तेजी से इधर से उधर तैरती नजर आतीं, मछलियों के रूप में ये झील की लहरें थीं, जिनसे बिजली तैयार की जाती थी। हंसों का दल एक बाग में उतर गया। बाग में इनसानों की जगह जानवरों के झुंड थे। जानवरों की भाषा ऐसी कि बच्चे ताली बजाने लगे। बच्चों के सम्मान में मंगल लोक के जानवरों ने भोज का आयोजन किया है।

लंबी गरदन के जिराफ अपनी गरदन पर अंगूरों के गुच्छे लटकाए नजर आ रहे थे। सफेद, काली और लंबी पूँछवाले लंगूर रसगुल्ले जैसा कोई स्वादिष्ट व्यंजन बच्चों में बाँटने लगा। शुतुरमुर्ग की चोंच में फल की टोकरी थी। रीछ काजू और किसमिस की बनी खीर बच्चों में परोस रहा था। शेर और बकरी भी बच्चों के मनोरंजन के लिए वहाँ मौजूद थे।

राजकुमारी ने सफेद मोतियों की माला सभी बच्चों को उपहार में दीं।

सफेद मोतियों की माला यहाँ के वासियों की ओर से दिया जाने वाला प्रेम और शांति का उपहार था। यहाँ के निवासी किसी से युद्ध करना नहीं चाहते। हाँ, यदि कोई युद्ध जैसी हरकतें शुरू कर देता है, तो उसे छोड़ते भी नहीं। जैसा कि पिछले दिनों उनके मायाजाल में फँसी उड़नतश्तरी और उसमें पृथ्वी लोक के जासूस राजेश सकुशल अपने लोक में उतारकर यहाँ के वैज्ञानिकों के बीच नए वैज्ञानिक यंत्रों और उनकी जानकारी के लिए अतिथि के रूप में सम्मान के साथ रहने की अनुमति मिल चुकी थी।

लोहे के ढाँचों के बीच राजेश और बच्चों की भेंट हो गई। राजीव ने ही सवाल किया, 'अंकल, क्या तुम्हें मेरे डैडी और दूसरे अपहरण किए गए लोगों के बारे में कुछ जानकारी मिली?'

'हाँ, बेटे राजीव, मंगल लोक और चंद्रलोक के बीच में उड़नतश्तरी की दुनिया है। अपहरण करने के बाद वे उन्हें अपने लोक ले लाती हैं। मैं उसी लोक में जाने की तैयारी कर रहा हूँ।'

राजेश के साथ बच्चों का दल अब राजकुमारी के महल में था बच्चे चाहते थे कि उन्हें भी अंकल राजेश के साथ उड़नतश्तरी के लोक में पहुँचाया जाए।

सभी बच्चों को सफेद चमकते मोतियों की माला दी गई, जो अँधेरे में भी प्रकाश के बल्बों के समान प्रकाश फैलाती। अब बच्चों का दल राजेश अंकल के साथ उड़नतश्तरियों की दुनिया में जाने के लिए रॉकेट स्टेशन तैयार था। रॉकेट छूटने का सिग्नल मिल चुका था। पहले रॉकेट स्टेशन के ऊपर छतरीनुमा चट्टान को मशीनों के द्वारा एक ओर खिसकाया गया। ऊपर का रास्ता साफ था। एक-दो-तीन धमाकों के साथ रॉकेट सफेद धुआँ छोड़ता हुआ आकाश की ओर जाने लगा। उडनतश्तरी लोक में इसकी खबर पहुँच गई। मंगल लोक की राजकुमारी ने पृथ्वी लोक से आए बच्चों के दल को उड़नतश्तरी लोक रवाना कर दिया गया है। इन बच्चों की पूरे सम्मान के साथ आवभगत की जाए।

उड़नतश्तरी लोक सचमुच दूर से देखने पर उड़नतश्तरी जैसा गोल और चपटा नजर आता था। सबसे विचित्र बात यह थी कि जब भी किसी ने उनके लोक पर हमला किया, तो पूरा लोक उड़नतश्तरी के समान घूमने लगता। आक्रमण करनेवालों के सभी हथियार बेकार हो जाते।

उड़नतश्तरी लोक पीली, गोल-चपटी डिबिया के समान नजर आ रहा था। मंगल लोक का रॉकेट धीरे-धीरे उड़न तश्तरी लोक की ओर बढ़ता जा रहा था। रॉकेट ने अपनी रफ्तार कम की और सीधे रॉकेट स्टैंड पर जाकर खड़ा हो गया। सभी बच्चे चट्टान पर फिसलनेवाली एक विशेष प्रकार की गाड़ी में सवार हो गए। चुंबक शक्ति से चलने वाली वह गाड़ी चट्टानों के बीच से फिसलते हुए सन्न से आगे निकल गई।

उड़नतश्तरी लोक चाँदी के समान चमक रहा था। बड़ी-बड़ी आलीशान गगनचुंबी इमारतें नजर आ रही थीं। इन्हीं फिसलनेवाली गाड़ियों में सुनहरे लंबुओं की कतारें भी थीं, यही इस लोक के रक्षक थे।

रक्षक दल के साथ राजेश अंकल और पृथ्वी लोक के बच्चे गाड़ियों के रुकते ही एक साथ स्टेशन की स्वचालित सीढ़ियों के ऊपर एक बड़े कक्ष में लाए गए। कमरे के मध्य बड़ी घूमनेवाली कुरसी पर एक सुनहरा लंबू बैठा था, जो कान पर सुननेवाला यंत्र लगाए किसी से बातचीत कर रहा था।

अब उसने पृथ्वी लोक से आए इस दल की ओर नजर डाली। लंबू बोला, 'हैलो जासूस अंकल, पृथ्वी लोक से सभी बच्चे कुशलता से यहाँ तक आ गए, किसी को रास्ते में कोई कष्ट तो नहीं हुआ। बेटे राजीव और बेटी अमला तुम्हारे आने की सूचना तुम्हारे डैडी को दे दी गई है। वे जल्दी ही तुम्हारे बीच में होंगे।'

अब जासूस राजेश ने अपना मुहँ खोला, 'उड़नतश्तरी लोक को देखकर हमें बड़ी खुशी हुई। यहाँ तो सबकुछ वैज्ञानिक ताकतों से जुड़ते हैं। इतनी वैज्ञानिक उपलब्धियों के बाद भी आए दिन पृथ्वी लोक की विशिष्ट हस्तियों का अपहरण करके तुमने हमारे लोकवासियों को असमंजस में डाल दिया है।'

लंबू सुनहरे गंजे व्यक्ति ने कहा, 'हाँ, तुम ठीक कहते हो, हम पृथ्वी लोक ही नहीं, हर लोक से ऐसी हस्तियों का अपहरण करके यहाँ ले आते हैं, जिससे हम उस लोक की ताकत और वैज्ञानिक खोजों की जानकारी हासिल कर सकें। आखिर हमें भी अपने लोक को शक्तिशाली बनाना है।'

'वैज्ञानिक ताकत से बढ़कर होती है हमारे प्रेम की ताकत। यदि आज यह ताकत तुम्हारे पास होती तो बात ही कुछ और थी।' राजीव ने कहा।

'हम तुम्हारी बात समझते हैं, लेकिन हमारे पास तुम्हारी तरह दिल नहीं है। सभी के ढाँचे मशीनों में ढलते हैं, इसलिए हम प्यार की भाषा नहीं समझते। यह प्यार क्या होता है।' लंबू सुनहरे व्यक्ति ने कहा।

'प्यार एक ऐसी ताकत है, जिसके आगे संसार की सभी शक्तियाँ बेकार हैं। हम पृथ्वीलोकवासियों के पास यह ताकत सबसे अधिक है।' राजीव ने बताया।

इसी बीच राजीव के पिता वैज्ञानिक गोल्डन ऐरो आ चुके थे। उनके आते ही सभी के चेहरे खिल गए। बच्चों ने तालियाँ बजाईं, राजीव और अमला दौड़कर उनके गले लिपट गए। अब सुनहरे लंबू ने वैज्ञानिक गोल्डन ऐरो की ओर नजर दौड़ाई, 'मिस्टर गोल्डन ऐरो, हम प्यार की ताकत में बड़ा होना चाहते हैं। बताइए, उसके लिए हमें क्या करना होगा?'

'उसके लिए तुम्हें दिल की रचना करनी होगी। धड़कते हुए दिल की रचना, तभी तुम्हें प्यार की भाषा समझ में आ जाएगी।' गोल्डन ऐरो ने बताया।

सुनहरे लंबू ने कहा, 'हाँ, हम जरूर दिल की रचना करेंगे। धड़कते हुए दिल की रचना, ताकि हम भी पृथ्वी लोक की तरह वैज्ञानिक ताकत में सबसे बढ़कर हों। लेकिन उसके लिए तुम्हें हमारी मदद करनी होगी।'

'जरूर मदद करेंगे, मैं ही नहीं, पृथ्वी लोक की संपूर्ण ताकत इसमें

तुम्हारे साथ है।' वैज्ञानिक गोल्डन ऐरो ने कहा।

यह सुनते ही सभी बच्चे एक साथ बोल पड़े, 'हाँ, इसमें हम तुम्हारी मदद जरूर करेंगे।'

अब सुनहरे लंबू ने अपने सैनिक लंबुओं को हुक्म दिया, 'पृथ्वीलोक से आए सभी बच्चे वैज्ञानिक गोल्डन ऐरो और जासूस राजेश को पूरी मदद दी जाए, ताकि इनके द्वारा धड़कते हुए दिल की रचना की जाए, पूरा उड़नतश्तरी लोक इनका स्वागत करता है।'

चारों ओर से तालियों का शोर सुनाई दिया और देखते-ही-देखते एक पल में सभी बच्चे उड़नतश्तरी लोक के बीचोबीच एक खुले मैदान में थे, जहाँ सुंदर रंग-बिरंगी पोशाकों में सजे युवक और युवतियाँ मुसकराते हुए उनका स्वागत कर रहे थे।

असंख्य स्त्री-पुरुष और बच्चों के बीच पृथ्वी लोक से आए बच्चों का दल खुश नजर आ रहा था। सामने एक भव्य मंच था, मंच पर एक सुनहरा लंबू सभी को अपनी भाषा में पृथ्वी लोक से आए मेहमानों का परिचय दे रहा था, भाषा भी इतनी साफ-सुथरी थी कि सभी को समझ में आ रही थी। घोषणा की गई, 'पृथ्वी लोक से आए बच्चे उड़नतश्तरी लोकवासियों को अपना प्यार का संदेश देंगे।'

बच्चों के दल में राजीव और अमला सबसे आगे थे। उनकी आवाज के साथ सभी की आवाजें साफ सुनाई दे रही थीं। 'उड़नतश्तरी लोक के निवासियों का पृथ्वी लोकवासी हृदय से स्वागत करते हैं। हमें बताया गया कि यहाँ के निवासियों के पास धड़कता हुआ दिल नहीं होता। आज हम वही दिल तुम्हारे पास छोड़ने के लिए आए हैं, क्योंकि हमारे पास एक नहीं अनेक दिल हैं, जो सभी में बाँट देंगे। आप सभी हमारे साथ यह प्रार्थना दोहराएँ—

'हे परमात्मा! तुम्हारी शक्तियाँ अनंत हैं।

अनंत शक्तियों से हमें भी धड़कते दिल का आभास हो जाए, हमें भी धड़कता दिल मिल जाए, जिस दिल में परमात्मा का निवास हो, परमात्मा जो प्रेम में निवास करता है। हम उसी प्रेमस्वरूप धड़कते दिल का अपने शरीर में प्रवेश चाहते हैं। संपूर्ण लोकों के परमात्मा हमारे ऊपर कृपा करो।'

ये बातें उड़नतश्तरी लोकवासियों ने बार-बार दोहराईं, जैसे वे आकाश से कुछ माँग रहे हैं, उनके हाथ ऊपर उठे हुए थे। सभी ने देखा आकाश मार्ग से दिल की शक्ल की किरणें प्रकाशवान होकर नीचे की ओर आने लगीं, उनके चेहरे खुशी से चमकने लगे।

देखते-ही-देखते संपूर्ण उड़नतश्तरी लोक प्रकाशवान किरणों के सागर में घिर गया। प्रेम की भाषावाला दिल सभी को मिल गया। दिल के मिलते ही सभी खुशी से उछलने लगे, उन्हें लगा कि आज उनकी ताकत पहले से कई गुना बढ़ चुकी है। उड़नतश्तरी लोक तश्तरी के रूप में ही चारों ओर घूमने लगा। सन्न की आवाज के साथ आकाश से तेजी से घूमते हुए तश्तरी पृथ्वी लोक की ओर आने लगी। पृथ्वी लोकवासियों ने भी खुले दिल से उनका स्वागत किया। उड़नतश्तरी लोकवासियों के आगमन पर खूब उत्सव मनाया गया।

अब हमारी आँखों में थी कल्पना लोक की अनंत कल्पनाएँ, उन कल्पनाओं में थी प्रेम की भाषा, जो हमें एक-दूसरे से मिल-जुलकर रहना सिखाती थी। खिलते रहे कल्पनाओं के अनेक इंद्रधनुष, होंठों पर नाचने लगी मुसकराहटें और बिखरने लगा हृदय में अनंत किरणोंवाला प्रकाश, जो हमें अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाता है।

इस तरह बच्चों का मंगल लोक का यह सफर पूरा हुआ।

लक्ष्मीपुरी, सराय हकीम
अलीगढ़-२०२००१
दूरभाष : ०९८९७०६७२७६

कविता

# सूरत नानी की लगे भली

● राजेंद्र निशेश

### नानी का गाँव

लो, नानीजी के गाँव चली।
नाव चली, भाई नाव चली।

कोयल वहाँ कूकती काली,
खेतों की है बात निराली।
बूढ़ा बरगद जाग्रत् रहता,
छाया उसकी है मतवाली।

कैसे चप्पू के पाँव चली,
नाव चली, भाई नाव चली।

दूध-दही का वहाँ खजाना,
मिल जाता है सात्त्विक खाना।

मेल-जोल से सब हैं रहते,
ऊँच-नीच का नहीं ठिकाना।

थी माँ बचपन में वहीं पली,
नाव चली, भाई नाव चली।

छाछ-मक्खन भरपेट पाते,
गुड़-धानी के खुलते खाते।
मौज-मजे से खाना-पीना,
भूल न पाते सारी बातें।

सूरत नानी की लगे भली,
नाव चली, भाई नाव चली।
लो नानीजी के गाँव चली।

### छाया भी छाया को माँगे

प्यासी चिड़िया चाहे पानी
गरमी के दिन आए।

कंठ सूखता कोयल का अब
सुर में गा ना पाए।

ताल-तलैया सारे सूखे।
कमल खड़े मुरझाए।

छाया भी छाया को माँगे
तपते दिन जो आए।

खेल-कूद सब छूट गया है
कैसे बाहर जाएँ!

बादल मामा, आओ जल्दी,
थोड़ी राहत पाएँ।

२६९८, सेक्टर-४०-सी
चंडीगढ़-१६००३६
दूरभाष : ९४१७१०८६३२

# मन में कोई गाँठ न पालो

● ओमप्रकाश बजाज

### किंतु-परंतु

मत करो तुम किंतु-परंतु
अगर-मगर भी छोड़ो।

सीधी-सरल बात करो
इफ और बट न जोड़ो।

घुमा-फिराकर बात न करो
पहेलियाँ न बुझवाओ।
स्पष्ट कहो जो भी कहना हो
बात को न उलझाओ।

मन में कोई गाँठ न पालो
जो है दिल में वह कह डालो।

### पेड़

पेड़ हमें क्या-क्या नहीं देते
हमारी झोली भर-भर देते।
इनसे हमें ऑक्सीजन मिलती
जो हम सबको जीवन देती।

रंग-बिरंगे फूल मीठे-मीठे रसीले फल
पक्षियों के घोंसले पशुओं को विश्राम,
इनसे मिलती अनेक जड़ी-बूटियाँ
जिनसे बनती भिन्न-भिन्न ओषधियाँ।
वर्षा लाने में यह सहायक होते
वर्षा के जल को सुरक्षित रखते।
तपती गरमी में आते-जाते यात्रियों को
छाया देते धूप से बचाते।
फिर भी हम इन्हें काटते जाते
पर्यावरण को हानि पहुँचाते।
नए पेड़ लगाना पेड़ों को बचाना
परम कर्तव्य हम सबका बनता।

### वहम

मन में बेकार के वहम न पालो
अंधविश्वासों से पिंड छुड़ा लो।
बिल्ली के रास्ता काट जाने से
कोई अपशगुन नहीं होता है।
तेरह की संख्या से किसी का
कभी कोई बुरा नहीं होता है।
फटा पोस्टकार्ड बेचारा भला
किसी का क्या अहित करेगा?
सिर पर कौआ बैठ जाने से भला
कोई क्यों बिन आई मौत मरेगा?
नजर लगने नजर उतारने के काम
कमजोर मानसिकता की निशानी हैं।
वहम अंधविश्वास शगुन-अपशगुन
मात्र मनगढ़ंत नानी की कहानी हैं।

### फल

हर फल के अपने-अपने
गुण और लाभ होते हैं।
फल ऊर्जा के साथ-साथ
विटामिन-खनिज भी देते हैं।

फलों के नियमित सेवन से
हम चुस्त-दुरुस्त बने रहते हैं।
आम आँखों की रोशनी बढ़ाता है
और हृदय को स्वस्थ बनाता है।

संतरा त्वचा के लिए लाभकारी है
पपीता पाचनक्रिया बढ़ाता है।
केला पोषक तत्त्व प्रदान करता है
सेब दाँतों को चमकदार बनाता है।

### बिजली

बिजली आज की बड़ी जरूरत है
बिना बिजली जीवन मुश्किल है।
घर दुकान दफ्तर कल-कारखाने
बिजली के बिना सब ठप हैं।

टी.वी. फ्रिज वॉशिंग मशीन कंप्यूटर
बिजली से ही सब चलते हैं।
मोबाइल फोन भी तो बिना बिजली
चार्ज नहीं होते हैं।
बिजली से रात भी दिन हो जाती है
अब तो रेलें भी बिजली से आती-जाती हैं।

बिजली का अपव्यय रोकना जरूरी है
यह हम सबकी पहली जिम्मेदारी है।

### घोंसला

कभी सोचा है क्या कि
चिड़िया घोंसला कैसे बनाती है?
किसी पेड़ की ऊँची शाखा पर
पहले वह सुरक्षित स्थान चुनती है।
फिर दूर-दूर से तिनके-धागे
कपड़े की चिंदी बीनकर लाती है।
एक-एक करके धीरे-धीरे वह
इन्हें रखती जमाती जाती है।
किसी अच्छे दरजी से भी अच्छा
काम वह करके दिखाती है।
धीरे-धीरे उसका घोंसला
आकार लेने लग जाता है।
छोटी सी एक चिड़िया का
सारा परिश्रम साकार हो जाता है।

पोस्ट बाक्स नं. ५९५
जी.पी.ओ. इंदौर-४५२००१ (म.प्र.)
दूरभाष : ०९८२६४९६९७५

## पाठकों की प्रतिक्रियाएँ

'साहित्य अमृत' का होली पर्व पर विशेष रंग-रंगीला अंक प्राप्त हुआ। संपादकीय में पूर्व की भाँति सटीक विषयों के बारे में जानकारी प्रशंसनीय रही। भारत रत्न बिस्मिल्ला खाँ तथा एम.एस. सुब्बलक्ष्मीजी की जन्मशताब्दी के अवसर का उल्लेख करते हुए खाँ साहब की वह शहनाई और लक्ष्मीजी के शास्त्रीय गायन का मानो आँखों के समक्ष चित्रांकन किया गया। अबकी बार राहिला रईस की कहानी 'आखिर वो मर्द है' के माध्यम से वर्तमान पर कटाक्ष किया गया। सबीहा के पात्र द्वारा 'नारी' के स्वाभिमानी चेहरों को उजागर किया गया है। मुसलिम तुष्टिकरण से हटकर वास्तविकताओं को सामने ले आने के लिए ऐसी कहानियाँ मील का पत्थर साबित होंगी।

***—जमालपुरकर गंगाधर, हैदराबाद (तेलंगाना)***

'साहित्य अमृत' का मार्च अंक पढ़ा। संपादकीय खूब पसंद आया। सारा अंक होलिका की महक लिये पठनीय रहा। समस्त सामग्री पठनीय, ज्ञानवर्धक, मनोरंजक थी।

***—रामकिशन पंवार, बीबीपुर (राज.)***

मेरे तीन प्रिय विषय हैं—राष्ट्र, राष्ट्रभाषा और राष्ट्रपिता। 'साहित्य अमृत' के अप्रैल अंक में 'अंग्रेजी के सामने हिंदी : रावण रथी विरथ रघुवीरा' (जयकुमार जलज) सच्चाई से ओतप्रोत सराहनीय आलेख है। 'विश्व का सबसे सहिष्णु देश—भारतवर्ष' (योगेंद्र शर्मा) चिंतन-मंथन योग्य प्रशंसनीय आलेख है। ऐसी खोजपूर्ण, तथ्यपूर्ण रचनाओं को लिखनेवाले और प्रकाशित करनेवाले दोनों बधाई के पात्र हैं। लघुकथा 'जीत की हार' (बिर्ख खडका डुवर्सेली) में प्यासे को पानी पिलानेवाले पवित्र कार्य का सुंदर संदेश है। 'चलो, चलें लालकिला मैदान' (हरीश नवल) के करारे कटाक्ष ने गुदगुदाया, हँसाया। पूरा अंक पठनीय रहा।

***—अशोक वाधवाणी, गांधीनगर (महा.)***

'साहित्य अमृत' का अप्रैल अंक प्राप्त हुआ। सभी रचनाएँ स्तरीय लगीं। साहब सिंह गिल की कहानी 'पिंजर' ने आश्चर्यचकित कर दिया। योगेंद्र शर्मा का आलेख 'विश्व का सबसे सहिष्णु देश—भारतवर्ष' एक सामयिक रचना लगी। कुछ बुद्धिजीवी ऐसी सहिष्णुता को नकारते हुए असहिष्णुता का राग आलाप रहे हैं। अपने सम्मान लौटाकर मानो वे 'मानवाधिकार' का पालन कर रहे हैं। ऐसी दूषित विचारधारा को जनता ने करारा जवाब दिया है।

***—बी.डी. बजाज, दिल्ली***

'साहित्य अमृत' का मार्च अंक 'वसंत' के समान मन-मस्तिष्क पर छा गया। संपादकीय में उस्ताद बिस्मिल्ला खाँ के बारे में नवीन जानकारी उपलब्ध करवाई है; यह श्रेयस्कर है। मनोहर पुरी की 'देहदान' मार्मिक कहानी है। देवकीनंदन शुक्ल की कहानी 'प्रेम की जीत' जीवन को सार्थक दिशा देती है। सर्वाधिक प्रभावित किया राहिला रईस की कहानी 'आखिर वो मर्द है' ने। गुजराती कहानी 'अगला जन्म' भी बहुत पसंद आई। प्रेमपाल शर्मा का यात्रा-संस्मरण 'लाला फिर आइयो खेलन होरी' इस अंक का प्रमुख आकर्षण है। लेखक ने मनोहारी शैली में यात्रा का, दृश्यों का, मंदिरों का सजीव वर्णन किया है।

***—चितरंजन भारती, पंचग्राम (असम)***

'साहित्य अमृत' के मार्च अंक का मुखपृष्ठ होली के मनमोहक वातावरण को आनंदित कर देनेवाला है। संजय पंकज की कविता 'फागुन आ गया' मर्मस्पर्शी है। दयाशंकर शुक्ल ने 'डॉ. रामशंकर शुक्ल 'रसाल' : हिंदी साहित्य का एक अनूठा व्यक्तित्व' में हिंदी साहित्य के महत्त्वपूर्ण विलुप्त होते अध्याय की सुखद चर्चा की है। राहिला रईस की कहानी 'आखिर वो मर्द है' बहुत ही संवेदनात्मक है। नारी भावनाओं का इतना तलस्पर्शी वर्णन बहुत कम कहानियों में मिलता है। प्रेमपाल शर्मा ने 'लला फिर आइयो खेलन होरी' के माध्यम से वृंदावनधाम का यात्रा संस्मरण प्रस्तुत किया है, जिसकी शाब्दिक जीवंतता और भावनात्मक सचित्रता मुग्धकारी है। मरुफ उर रहमान ने 'पौराणिक साहित्य में संस्कृति का चिंतन' आलेख प्रस्तुत कर सफलतापूर्वक सिद्ध कर दिया है कि पौराणिक साहित्य में ज्ञान-विज्ञान का अमूल्य भंडार है, आवश्यकता है उनके उपयोग की। फरवरी अंक भी साथ में ही प्राप्त हुआ, जिसने मुझे बहुत प्रभावित किया। जगदीश खरे जीवमित्र ने 'सांप्रदायिक सौहार्द के प्रतीक पुरुष बाबू वृंदावनलाल वर्मा' नामक लेख में वर्माजी की इतिहास मिश्रित साहित्यिक दृष्टि की तथ्यपरक विवेचना की है। इंदु शुक्ला का आलेख 'कथाकार गंगाप्रसाद मिश्र : एक सफल आयोजक' पठनीय है। वहीं नवीन साहित्यकारों और साहित्य-प्रेमियों के लिए प्रेरणास्रोत भी है। मालती शर्मा ने 'घी के बिना होम-हवन नहीं, बेटी के बिना संसार नहीं' के माध्यम से 'बेटी की जुदाई' के अवसर पर लोकमन की अनुभूति का मार्मिक चित्रण किया है। एम.डी. मिश्रा 'आनंद' का यात्रा-संस्मरण 'उत्तराखंड के चारों धाम की यात्रा' भारत की भौगोलिक एवं सांस्कृतिक एकता के साथ ही 'आनंद' का भी स्रोत उपस्थित करता है। शकुंतला शर्मा की बाल कहानी वसंत-पंचमी बालमन की समर्थ मनोवैज्ञानिक प्रस्तुति है।

***—डॉ. सुशील कुमार पांडेय 'साहित्येंदु', सुलतानपुर (उ.प्र.)***

'साहित्य अमृत' के मार्च अंक का मुखपृष्ठ होली की दस्तक देता आया। कलाकृति अति सुंदर कि 'बार-बार देखो, हजार बार देखो।' संपादकीय में आदरणीय चतुर्वेदीजी ने राजस्थान राज्य अभिलेखागार की जानकारी देकर एक महान् कार्य किया है। शहनाई के शहंशाह भारत रत्न उस्ताद बिस्मिल्ला खाँ के विषय में कुछ भी कहना सूर्य को दीया दिखाना होगा—'आसमान में उड़े नहीं, जमीन कभी छोड़ी नहीं।' 'देहदान', 'विमला', 'प्रेम की जीत' कहानियाँ पसंद आईं। 'आखिर वो मर्द है' में कहानीकार राहिला रईस ने माहौल के अनुरूप भाषा शैली द्वारा बहुविवाह का मुद्दा भी उठाया। यह मार्च माह में पड़नेवाले अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस पर साहित्य अमृत की सौगात है। प्रेमपाल शर्मा के यात्रा-संस्मरण

इतने सहज होते हैं कि इन्हें पढ़कर आनंदानुभूति होती है। बाँके बिहारीजी के मंदिर से उनके गायब होने की कथा बड़ी रोचक है। बाल-कहानी 'बिन दिमाग' (कोमल वाधवानी 'प्रेरणा') पढ़ते-पढ़ते पिल्ले मानो सजीव होकर दृष्टिगोचर होने लगते हैं। 'पैसे का डिब्बा' में जयकिशोर बटेरिया ने सकारात्मक सोच को स्थापित किया है। आलेख 'पाठालोचन' से हमें नई जानकारियाँ मिलीं। नरेंद्र दीपक के दोहे भाए और सुनीता बहल की रचना 'बस यूँ ही' अच्छी बन पड़ी है। नलिनी मिश्र के रेखांकन पसंद आए।

***—आशागंगा प्रमोद शिरढोणकर, उज्जैन (म.प्र.)***

'साहित्य अमृत' का अप्रैल अंक प्राप्त हुआ। बालमुकुंद गुप्त की प्रतिस्मृति पसंद आई। बिर्ख खडका डुवर्सेली की लघुकथा 'प्रोफेशन', बटुक चतुर्वेदी की कहानी 'मँझले' पसंद आईं। सीमा हरि शर्मा की कविता 'धनाक्षरी' रोचक है। जयकुमार जलज का आलेख 'अंग्रेजी के सामने हिंदी : रावण रथी विरथ रघुवीरा' हकीकत बयान करता है। अभिराज राजेंद्र मिश्र की कहानी 'कहाँ जाऊँ' पठनीय है। राहुल का आलेख 'सपनों का प्रतीकात्मक अर्थ' ज्ञानवर्धक है। व्यास कुमार वाजपेयी का आलेख 'कबीर वाणी की प्रासंगिकता' निस्संदेह आज भी प्रासंगिक है। तुलसी देवी तिवारी की कहानी 'अंतत:' पंसद आई। गोपाल चतुर्वेदी का व्यंग्य 'बाबू की बीमारी' बेहद पसंद आया। राजेश माहेश्वरी की लघुकथा 'प्रायश्चित्त' शिक्षाप्रद है। राकेश भ्रमर की कहानी 'मौत के बाद' बेहद तल्ख है। हरीश नवल का व्यंग्य 'चलो, चलें लालकिला मैदान' भी मनोरंजन से पूर्ण है। श्रद्धा थवाईत की कहानी 'एक कहानी मेरी भी' पसंद आई। विनय मिश्र की गजलें 'उमड़ता है खयालों में समंदर' भी रोचक हैं। फूलचंद मानव ने साहिब सिंह गिल की पंजाबी कहानी 'पिंजर' का अनुवाद काफी सही किया है। श्रीकृष्ण कुमार त्रिवेदी का ललित निबंध भी पठनीय है। ललित शर्मा का लेख 'संत पीपाजी की सामाजिक चेतना' ज्ञानवर्धक है। मंजुरानी जैन की कहानी 'तिनका-तिनका घरौंदा' भी अच्छी लगी। रुक्मणी संगल का यात्रा-वृत्तांत 'एक तीर्थयात्रा सुवर्णपुर (पर्सा) व जनकपुर' भी पसंद आया। साहित्यिक गतिविधियाँ परंपरानुसार पठनीय होती हैं। मैं साहित्य अमृत को एक ऐसी पत्रिका समझता हूँ कि जिसका प्रत्येक अंक संग्रह योग्य है।

***—बलराज बहत, रायपुर (छ.ग.)***

'साहित्य अमृत' का अप्रैल अंक प्राप्त हआ। साहित्य की अधिकांश विधाएँ पठनीय हैं। संपादकीय बहुत ही प्रासंगिक लगा। डॉ. मालती शर्मा का लेख 'महाराष्ट्र का नव संवत्सर उत्सव : गुड़ी पड़वा' लोक संस्कृति की भावभूमि पर आधारित है, जिसका प्रतिपादन गौरवशाली जीवन-दृष्टि से किया गया है। वेदांती है यह दृष्टि, जो अभाव में भी भाव देखती है। लेखिका ने 'गुड़ी' शब्द की विशद व्याख्या की है। 'गुड़ी' को विजयध्वजा के रूप में स्थापित किया गया है। 'पड़वा' को सृजन की प्रस्थान तिथि के रूप में देखा गया है। 'पड़वा' 'प्रतिपदा' शब्द का मराठी तद्भव रूप है, जो चैत्र शुक्ल प्रतिपदा के लिए प्रतिष्ठापित हो गया है। हिंदी की अवधी में प्रतिपदा को 'परिवा' बोला जाता है, लेकिन अवधी की 'परिवा' किसी भी पाख (पक्ष) की प्रतिपदा हो सकती है। महाराष्ट्र के 'पड़वा' की महिमा ही न्यारी है।

***—श्रीकांत उपाध्याय, बावधन (पुणे)***

'साहित्य अमृत' का अप्रैल अंक मिला। पाँचों राज्यों की दिग्विजय गाथा पर केंद्रित संपादकीय मन को भा गई। कविता 'उषा गीत' व 'जीवों से नेह लगाएँ' काव्य प्रेमियों को आकर्षित करती हुई सी प्रतीत हो रही है। इस अंक के कहानी, आलेख, लघुकथा, ललित निबंध व यात्रा-वृत्तांत प्रेरक, शिक्षाप्रद तथा संग्रहणीय हैं। मेरे परममित्र कृष्ण कुमार 'अजनबी' को सुंदर चित्रकारी के लिए बधाई।

***—डॉ. प्रमोद 'पुष्प', रायगढ़ (छ.ग.)***

'साहित्य अमृत' का अप्रैल अंक प्राप्त हुआ। नवसंवत्सर पर 'नवदुर्गा' पुस्तक अंश में माँ भगवती दुर्गा की पूजा-आराधना में उनकी अन्य शक्तियों का वर्णन पढ़ने को मिला और महाराष्ट्र का नवसंवत् उत्सव : गुड़ी पड़वा पर मालती शर्मा के आलेख से गुड़ी पड़वा के विषय में जानने को मिला। 'अंग्रेजी के सामने हिंदी : रावण रथी विरथ रघुवीरा' आलेख में जयकुमार जलज ने बहुत सही लिखा है, 'यह सच्चाई ही अपमानजनक और पीड़ादायक क्यों न हो, पर अब इसे स्वीकार कर लेना चाहिए कि स्वतंत्र भारत में हिंदी अंग्रेजी से पराजित हो गई।' 'कहाँ जाऊँ' में झुल्लाराम और उसके परिवार की बहुत अच्छी कहानी है, जो दलित बस्ती में रहते थे। कहानी 'अंतत:' भी बहुत अच्छी लगी। कहानी 'मौत के बाद' में राकेश भ्रमरजी ने बहुत अच्छा व्यंग्य लिखा है और यह सच्चाई भी है लोगों को इनसान से ज्यादा धन-दौलत प्यारी है। श्री हरीश नवलजी का व्यंग्य लेख 'चलो, चलें लाल किला मैदान' बहुत अच्छा लगा, यह १५ अगस्त या २६ जनवरी पर छपता तो अच्छा रहता। लघुकथा 'प्रोफेशन' तथा 'प्रायश्चित्त' दोनों ही बहुत अच्छी है। 'एक कहानी मेरी भी' श्रद्धा थवाईत जी की कहानी नक्सली समस्या को लेकर है, वह भी बहुत अच्छी है। अंत में यही कहना है कि साहित्य अमृत में सभी रचनाएँ उत्तम हैं और इसका श्रेय संपादक महोदय को जाता है, जो केवल वहीं रचनाएँ छापते हैं, जो उच्च कोटि की होती हैं।

***—विनोद शंकर गुप्त, हिसार***

'साहित्य अमृत' का अप्रैल अंक प्राप्त हुआ। साहित्य अमृत वास्तव में साहित्य का अमृत प्रदान करती है। संपादकीय पढ़ने से समसामयिकी के दर्शन होते हैं। उसी तरह विभिन्न विधाओं से साक्षात्कार होने के पश्चात् हृदय गद्गद हो जाता है। पत्रिका को हाथ में लेने पर कुछ नकारात्मक पहलू भी मन में उठे। आपको पत्रिका के कागज की गुणवत्ता पर ध्यान अवश्य देना चाहिए। नवसंवत्सर पर सिर्फ एक रचना 'नवदुर्गा' अच्छी थी, लेकिन आपको अन्य रचनाओं को भी स्थान देना चाहिए। संपादक मंडल को नवसंवत्सर की हार्दिक शुभकामनाएँ।

***—रामनिवास सुथार, बीकानेर (राज.)***

# वर्ग पहेली (१४०)

अगस्त २००५ अंक से हमने **'वर्ग पहेली'** प्रारंभ की, जिसे सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं ज्ञान–विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक **श्री विजय खंडूरी** तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा—

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ ३१ मई, २०१७ तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड्रॉ द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें दो सौ रुपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम–पते जुलाई २०१७ अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर **'वर्ग पहेली', साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२** के पते पर भेजें।

# वर्ग पहेली (१३८) का शुद्ध हल

| | | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| १ न | २ पुं | स | ३ क | ■ | ४ मु | सा | ५ फि | ६ र |
| ७ र | ज | ■ | ८ पा | ९ दु | का | ■ | १० दा | स |
| ब | ■ | ११ अ | स | ह | म | १२ त | ■ | ही |
| १३ लि | १४ हा | फ | ■ | ना | ■ | १५ ह | १६ व | न |
| ■ | १७ सि | ला | ई | ■ | १८ व | बा | ल | ■ |
| १९ फा | ल | तू | ■ | २० अ | ■ | २१ जा | य | २२ का |
| का | ■ | २३ न | २४ र | के | २५ स | री | ■ | र्य |
| २६ क | २७ ल | ■ | २८ स | ला | म | ■ | २९ ना | का |
| ३० शी | त | ल | मा | ■ | ३१ य | त्न | शी | ल |

## ★ पुरस्कार विजेता ★

१. **डॉ. महेश्वरी रंगनाथन**
वरिष्ठ राजभाषा अधिकारी
पाँचवाँ तल, मूर मार्केट कॉम्प्लेक्स
चेन्नई-६०००२३ (तमिलनाडु)

२. **सुश्री मिथलेश कुमारी**
श्री जगदीप स्वरूप एडवोकेट
मोहल्ला-आनंदीदास, कन्नौज
जिला-कन्नौज (उ.प्र.)

***पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई !***

**वर्ग-पहेली १३८ के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं—**सर्वश्री ब्रह्मानंद 'खिच्ची', विजयपाल सेहलंगिया (महेंद्रगढ़), सी.आर. नाहड़िया (नारनौल), फकीरचंद ढुल (कैथल), सरिता दशोत्तर (रतलाम), सुनीता वर्मा (दुर्ग), अवनीश कुमार दुबे (कटनी), वाई.के. श्रीवास्तव (जबलपुर), ओम प्रकाश चौधरी (नीमच), रामकिशन पंवार (हनुमानगढ़), मोहन उपाध्याय (अजमेर), रुक्मणी संगल (पटियाला), ए. श्रीनिवासन (मदुरै), मधु रानी (बेंगलुरु), विनीता सहल (मुंबई), सुशील कुमार सिंहल (पिलखुवा), ओमप्रकाश गुप्त (मुरादाबाद), शिवानंद सिंह 'सहयोगी' (मेरठ), पुखराज वार्ष्णेय, सुभाष शर्मा, राजेंद्र कुमार सिंह, दिनकर सहल, निर्मला गुजराती (दिल्ली)।

**बाएँ से दाएँ—**

१. जिस पर किसी अन्य का शासन हो (४)
४. जो हाल ही में उत्पन्न हुआ हो (४)
७. सम्मान (२)
८. विगत रूसी बादशाह की पदवी (२)
९. विरक्त (२)
११. थोड़े से (१-२)
१२. शरीर (२)
१३. ऊष्णता (४)
१५. कष्ट (४)
१७. कारागार (४)
२०. देख-रेख करनेवाला (४)
२३. परत, तह (२)
२४. धोबी (३)
२५. शरीर पर काले रंग का छोटा धब्बा (२)
२६. चाची (२)
२७. बुरी आदत (२)
२९. बेमिसाल (४)
३०. राजा (४)

**ऊपर से नीचे—**

१. अपना ओहदा छोड़ने की क्रिया (४)
२. मंद (२)
३. पति का बहनोई (४)
४. कोमलता (४)
५. दूल्हा (२)
६. वेश्या (४)
१०. वाणी (२)
१२. श्याम-वर्ण वाली (२)
१४. विवाद की बात (३)
१६. पालकी ढोनेवाला (३)
१७. दस्तकारी (४)
१८. सप्ताह का कोई दिन (२)
१९. युक्ति (४)
२०. संग्रह (४)
२१. नुकसान (२)
२२. मधुर शब्द (४)
२६. कहवा (२)
२८. भीगा हुआ (२)

***वर्ग पहेली (१३९) का हल अगले अंक में।***

# वर्ग पहेली (१४०)

| | | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| १ | | २ | ३ | ■ | ४ | ५ | | ६ |
| | ■ | ७ | | ■ | ८ | | ■ | |
| ९ | १० | ■ | ११ | | | ■ | १२ | |
| १३ | | १४ | | ■ | १५ | १६ | | |
| ■ | ■ | | ■ | ■ | ■ | | ■ | ■ |
| १७ | १८ | | १९ | ■ | २० | | २१ | २२ |
| २३ | | ■ | २४ | | | ■ | २५ | |
| | ■ | २६ | | ■ | २७ | २८ | ■ | |
| २९ | | | | ■ | ३० | | | |

प्रेषक का नाम : .....

पता : .....

.....

.....

दूरभाष : .....

## 'जयपाल सिंह' कृति लोकार्पित

२ अप्रैल को राँची के चैंबर भवन में झारखंड सरकार के ग्रामीण विकास मंत्री मान. श्री नीलकंठ सिंह मुंडा की अध्यक्षता में प्रसिद्ध लेखक-पत्रकार श्री बलबीर दत्त द्वारा लिखित झारखंड आंदोलन के सूत्रधार जयपाल सिंह पर केंद्रित पुस्तक 'जयपाल सिंह : एक रोमांचक अनकही कहानी' का लोकार्पण मुख्य अतिथि झारखंड विधानसभा अध्यक्ष मान. श्री दिनेश उराँव के करकमलों से संपन्न हुआ। विशिष्ट अतिथि राँची विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ. रमेश कुमार पांडेय एवं वरिष्ठ लेखक व पूर्व प्रति कुलपति श्री वी.पी. शरण थे। इस अवसर पर सांसद एवं वरिष्ठ पत्रकार श्री हरिवंश ने अपने विचार व्यक्त किए। ☐

## 'धूप का टुकड़ा तेरा है' कृति लोकार्पित

१४ अप्रैल को नई दिल्ली के ऑक्सफोर्ड बुक स्टोर में श्रीमती शिखा गुप्ता की पुस्तक 'धूप का टुकड़ा तेरा है' का लोकार्पण सुप्रसिद्ध लेखक, फिल्मकार एवं कवि डॉ. अशोक चक्रधर के करकमलों द्वारा संपन्न हुआ। ☐

## 'शब्दध्वज' पत्रिका विमोचित

विगत दिनों मानसरोवर साहित्य समिति, इटारसी और ठा. मनोहर सिंह स्मृति समिति, माखननगर के संयुक्त तत्त्वावधान में इटारसी में पत्रकार श्री पंकज पटेरिया द्वारा संपादित पत्रिका 'शब्दध्वज' का विमोचन किया गया। शब्दध्वज का यह अंक डॉ. प्रतिभा सिंह राठौर पर विशेष केंद्रित है। ☐

## 'समरसता के अग्रदूत' स्मारिका विमोचित

विगत दिनों कोलकाता में राजस्थान परिषद् की ओर से ओसवाल भवन में त्रिपुरा के राज्यपाल श्री तथागत राय की अध्यक्षता में भारत रत्न डॉ. अंबेडकर, पं. दीनदयाल उपाध्याय, कर्मयोगी जुगलकिशोर जैथलिया के जीवन पर केंद्रित स्मारिका 'समरसता के अग्रदूत' का विमोचन किया गया। इस अवसर पर सर्वश्री अरुण चतुर्वेदी, नवीन व्यास, पदमचंद भूतोड़िया, मोहनलाल पारीक, नंदलाल शाह, परशुराम मूंधड़ा, महावीर प्रसाद बजाज ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री बंशीधर शर्मा ने किया तथा धन्यवाद श्री अरुण प्रकाश मल्लावत ने ज्ञापित किया। ☐

## दो पुस्तकें विमोचित

१ अप्रैल को नई दिल्ली के सनातन धर्म मंदिर में साहित्यकार आचार्य मायाराम 'पतंग' की दो पुस्तकों 'विद्यार्थियों के लिए गीता' और 'पंचदेव पूजा' का विमोचन पूर्व महापौर श्री पृथ्वीराज साहनी द्वारा किया गया। ☐

## तीन पुस्तकें लोकार्पित

१२ अप्रैल को महुवा (गुजरात) के श्री चित्रकूट धाम में हनुमान जयंती के अवसर पर प्रख्यात मानस-मर्मज्ञ पूज्य मोरारि बापू ने प्रभात प्रकाशन द्वारा प्रकाशित अपनी तीन पुस्तकों 'मानस-मंत्र', 'गुरु-दर्शन' तथा 'क्वचिदन्यतोऽपि' का लोकार्पण किया। ☐

## 'सिमटते दायरे' कृति लोकार्पित

विगत दिनों साहित्यिक संस्था युगधारा के तत्त्वावधान में थियोसोफिकल सोसायटी के सभागार में श्री तरुण कुमार दाधीच की नाट्य कृति 'सिमटते दायरे' का लोकार्पण अध्यक्ष श्री विलास जानवे, मुख्य अतिथि डॉ. प्रीता भार्गव एवं विशिष्ट अतिथि श्री मनमोहन भटनागर के करकमलों से संपन्न हुआ। श्री खुर्शीद नवाब ने अपने विचार व्यक्त किए। इस अवसर पर आयोजित मासिक रचना-गोष्ठी में सर्वश्री महेंद्र साहू, अनुश्री राठौड़, चेतन औदिच्य, दीपक नगायच, रामदयाल मेहरा, राजगोपाल, रेणु सिरोया, मनमोहन मधुकर, श्रेणीदान चारण, गौरीकांत शर्मा, मनोहर श्रीमाली, लालदास पर्जन्य ने अपनी रचनाएँ प्रस्तुत कीं। संचालन श्री अरुण तिवारी ने किया। ☐

## डॉ. राम गोपाल सिंह सम्मानित

११-१३ फरवरी को अहमदाबाद में गुजरात विद्यापीठ के हिंदी विभाग में 'अनुवाद' विषय पर तीन दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन डॉ. विनय कुमार पाठक के मुख्य आतिथ्य में किया गया। इस अवसर पर डॉ. राम गोपाल सिंह को अनुवाद के क्षेत्र में राष्ट्रीय फलक पर उनके उल्लेखनीय योगदान हेतु छत्तीसगढ़ के 'पंडित सुंदरलाल पाठक सम्मान' से सम्मानित किया गया। ☐

## श्री हरीश पाठक सम्मानित

विगत दिनों मुंबई के चर्चगेट स्थित के.सी. कॉलेज के सभागार में महाराष्ट्र के शिक्षा मंत्री श्री विनोद तावड़े और पूर्व मंत्री श्री राज पुरोहित की उपस्थिति में डॉ. नंदलाल पाठक व डॉ. सुनील कुमार लवटे द्वारा श्री हरीश पाठक को 'छत्रपति शिवाजी राष्ट्रीय एकता पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। सम्मान के अंतर्गत नकद राशि, सम्मान-पत्र व प्रतीक चिह्न भेंट स्वरूप दिया गया। ☐

## श्री विश्वनाथ प्रसाद तिवारी सम्मानित

विगत दिनों भारतीय भाषा परिषद्, कोलकाता द्वारा भारतीय साहित्य की सारस्वत साधना में निरंतर सक्रिय श्री विश्वनाथ प्रसाद तिवारी और श्री रामकुमार मुखोपाध्याय को 'कृतित्व समग्र सम्मान' से सम्मानित करने की घोषणा की गई। इस वर्ष बालसुधार मौजि, संजीव पाल डेका, उम्मेद धनियां आशुतोष को प्रतिष्ठित युवा पुरस्कार प्रदान किया जाएगा। ☐

## श्री प्रताप सहगल सम्मानित

विगत दिनों दिल्ली के मुक्तधारा ऑडिटोरियम में प्रसिद्ध नाटककार श्री प्रताप सहगल को सर्वश्रेष्ठ नाटककार सम्मान रंग निर्देशक श्री भानुभारती द्वारा प्रदान किया गया। चयन समीति के सदस्य सर्वश्री दयाप्रकाश सिन्हा, जयदेव तनेजा, सुरेश भारद्वाज और जे.पी. सिंह थे। श्री प्रताप सहगल लगभग आधी शताब्दी से रंग-कर्म और नाटकों की दुनिया से सक्रिय रूप से जुड़े हुए हैं। ☐

## डॉ. नरेंद्र मोहन सम्मानित

विगत दिनों हरियाणा साहित्य अकादमी का पंचकूला में २०१५ का सर्वोच्च राष्ट्रीय सम्मान, आजीवन साहित्य साधना पुरस्कार डॉ. नरेंद्र मोहन को विभिन्न विधाओं में उनके बहुमूल्य योगदान और महत्त्वपूर्ण सर्जनात्मकता के लिए एक भव्य समारोह में प्रदान किया गया। ☐

## श्री महाबालेश्वर सरस्वती सम्मान से सम्मानित

कोंकणी भाषा के वरिष्ठ साहित्यकार श्री महाबालेश्वर सैल को के.के. बिड़ला फाउंडेशन द्वारा प्रवर्तित 'सरस्वती सम्मान' देने की घोषणा की गई।

सैल को यह पुरस्कार उनके उपन्यास 'हाउटन' के लिए प्रदान किया जाएगा। इसमें १५ लाख रुपए की पुरस्कार राशि के साथ प्रशस्ति-पत्र और प्रतीक-चिह्न भेंट किया जाएगा। ☐

## श्री सुरेशचंद्र शुक्ल 'शरद आलोक' सम्मानित

विगत दिनों ओस्लो, नॉर्वे में मध्य प्रदेश के संस्कृति विभाग द्वारा भाषा के लिए दिया जानेवाला 'निर्मल वर्मा पुरस्कार' संस्कृति मंत्री श्री सुरेंद्र पटवा तथा सर्वश्री मनोज श्रीवास्तव व राजेश मिश्र द्वारा श्री सुरेशचंद्र शुक्ल 'शरद आलोक' को प्रदान किया गया। ☐

## डॉ. शिव आम अंबर को सम्मान

८ अप्रैल को कोलकाता में सुप्रसिद्ध साहित्यिक-सामाजिक संस्था श्री बड़ाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय द्वारा 'डॉ. हेडगेवार प्रज्ञा सम्मान' डॉ. शिव ओम अंबर को देने की घोषणा की गई है। सम्मानस्वरूप उन्हें एक लाख रुपए की राशि एवं मानपत्र भेंट किया जाएगा। ☐

## डॉ. ऋषभदेव शर्मा सम्मानित

विगत दिनों रूसी-भारतीय मैत्री संघ 'दिशा', हिंदी संस्थान-कुरुनेगल, सामाजिक संस्था—पहल और साहित्यिक-सांस्कृतिक शोध संस्था के संयुक्त तत्त्वावधान में दिल्ली में 'अंतरराष्ट्रीय सम्मान समारोह' का आयोजन हुआ। समारोह की अध्यक्षता प्रो. हरिमोहन ने की तथा संचालन प्रो. ऋषभदेव शर्मा ने किया, जिन्हें अंतरराष्ट्रीय साहित्य गौरव सम्मान प्रदान किया गया। ☐

## डॉ. श्याम सिंह शशि सम्मानित

१९ मार्च को शिलांग में हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग का ६९वाँ अधिवेशन परिसंवाद पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय, नेहू में आयोजित किया गया, जिसमें हिंदी-अंग्रेजी के प्रसिद्ध लेखक पद्मश्री डॉ. श्यामसिंह शशि को सम्मेलन की सर्वोच्च उपाधि 'साहित्य वाचस्पति' से समलंकृत किया गया। इस अवसर पर प्रो. नंदकिशोर पांडेय तथा श्री गोविंद मिश्र को भी सम्मानित किया गया। ☐

## ६वाँ शताब्दी सम्मान समारोह संपन्न

२६ मार्च को इंदौर में शिवाजी भवन सभागार में डॉ. कैलाशचंद्र पंत की अध्यक्षता में आयोजित सम्मान समारोह के प्रथम सत्र में 'स्त्री विमर्श की प्रासंगिकता' विषय पर सर्वश्री राजेंद्र मिश्र, उर्मिला शिरीष, सूर्यप्रकाश चतुर्वेदी ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. पद्मा सिंह ने किया तथा आभार श्री अरविंद जवलेकर ने किया। द्वितीय सत्र श्री वीरेंद्र दत्त ज्ञानी की अध्यक्षता एवं प्रो. सूर्यप्रसाद दीक्षित के मुख्य आतिथ्य में आयोजित हुआ, जिसमें डॉ. कमलकिशोर गोयनका को 'राष्ट्रीय सम्मान' के अंतर्गत एक लाख रुपए की राशि, प्रशस्ति-पत्र, शॉल, श्रीफल, पुष्पहार प्रदान कर सम्मानित किया गया। साहित्यकार डॉ. जयकुमार जलज को 'प्रांतीय सम्मान' स्वरूप पचास हजार रुपए की राशि, प्रशस्ति-पत्र, शॉल-श्रीफल, पुष्पहार प्रदान कर सम्मानित किया गया। संचालन श्री संजय पटेल ने किया। ☐

## दो विद्वान् सम्मानित

५ अप्रैल को भोपाल के माधवराव सप्रे स्मृति समाचार-पत्र संग्रहालय एवं शोध संस्थान द्वारा 'माधवराव सप्रे राष्ट्रीय पत्रकारिता पुरस्कार' के लिए श्री विजय मनोहर तिवारी का चयन किया गया। सम्मानस्वरूप उन्हें २१ हजार रुपए की राशि, प्रशस्ति-पत्र, शॉल एवं लेखनी भेंट की जाएगी। सांस्कृतिक पत्रकारिता के लिए श्री विनय उपाध्याय को 'महेश सृजन सम्मान' प्रदान किया जाएगा। सम्मानस्वरूप उन्हें ११ हजार रुपए की राशि, प्रशस्ति-पत्र, शॉल एवं लेखनी भेंट की जाएगी। ☐

## सम्मान समारोह संपन्न

२४ मार्च को लंदन के नेहरू सेंटर में आयोजित सम्मान समारोह में श्री केशरीनाथ त्रिपाठी को 'अंतरराष्ट्रीय वातायन शिखर सम्मान', श्री अरुण माहेश्वरी को 'प्रथम अंतरराष्ट्रीय वातायन प्रकाशन सम्मान', डॉ. हरिओम को 'अंतरराष्ट्रीय वातायन कविता सम्मान' एवं सुश्री स्मिता परिख को 'अंतरराष्ट्रीय वातायन संस्कृति सम्मान' से सम्मानित किया गया। ☐

## श्री ललित शर्मा सम्मानित

५ मार्च को उदयपुर के राजसी सिटी पैलेस में आयोजित ३५वें वार्षिक सम्मान समारोह में महाराणा मेवाड़ चेरिटेबल फाउंडेशन द्वारा अंतरराष्ट्रीय, राष्ट्रीय एवं राज्य स्तर पर इतिहास लेखन के क्षेत्र में दिए जानेवाले 'राज्य स्तरीय महाराणा कुंभा इतिहास सम्मान' से श्री ललित शर्मा को सम्मानित किया गया। सम्मानस्वरूप उन्हें रजत तोरण, शॉल, सम्मान-पत्र व ५१ हजार रुपए की राशि प्रदान की गई। ☐

## श्री सुदर्शन वशिष्ठ सम्मानित

२८ मार्च को शिमला हॉलीडे होम सभागार में हिमाचल कला-संस्कृति-भाषा अकादमी द्वारा साहित्य के क्षेत्र में आजीवन उत्कृष्ट योगदान के लिए श्री सुदर्शन वशिष्ठ को 'शिखर सम्मान २०१६' से मुख्यमंत्री श्री वीरभद्र सिंह द्वारा सम्मानित किया गया। सम्मानस्वरूप उन्हें शॉल, टोपी, प्रतीक-चिह्न तथा एक लाख रुपए की राशि भेंट की गई। ☐

## श्री बालकवि बैरागी सम्मानित

२ अप्रैल को चंडीगढ़ में साहित्य में उल्लेखनीय योगदान के लिए 'बाबा बंदा बहादुर इंटरनेशनल फाउंडेशन' द्वारा दिए जानेवाले 'स्वामी रामानंद साहित्य सम्मान' से प्रख्यात कवि व पूर्व सांसद श्री बालकवि बैरागी को सम्मानित किया गया। सम्मानस्वरूप उन्हें एक लाख ग्यारह हजार एक सौ ग्यारह रुपए की राशि भेंट की गई। ☐

## डॉ. मालती शर्मा सम्मानित

विगत दिनों डॉ. मालती शर्मा को उनके लोक साहित्यिक ग्रंथ 'परंपरा का लोक' के लिए महाराष्ट्र राज्य हिंदी साहित्य अकादमी के 'फणीश्वरनाथ रेणु पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। ☐

## सम्मान समारोह संपन्न

२१ मार्च को नई दिल्ली के नागरी लिपि परिषद् कार्यालय में डॉ. परमानंद पांचाल की अध्यक्षता में श्री सरदार कादरी द्वारा श्रेष्ठ सूफी साहित्य की रचना के लिए डॉ. पांचाल को सम्मानित किया गया। इस अवसर पर श्री बालेंदु शर्मा दधीच को 'विनोबा नागरी पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। सम्मानस्वरूप उन्हें प्रशस्ति-पत्र, १० हजार रुपए की राशि, अंगवस्त्र भेंट किए गए। संचालन डॉ. हरिसिंह पाल ने किया। ☐

## हिंदी सेवी सम्मान घोषित

१० अप्रैल को केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा के उपाध्यक्ष डॉ. कमलकिशोर गोयनका की अध्यक्षता में हिंदी सेवी सम्मान योजना के अंतर्गत सर्वश्री एस. शेषारत्नम्, एम. गोविंद राजन, हरमहेंद्र सिंह बेदी, एच. सुबदनी देवी को 'गंगाशरण सिंह पुरस्कार'; श्री बल्देव भाई शर्मा, श्री राहुल देव को 'गणेश शंकर विद्यार्थी पुरस्कार'; डॉ. गिरीश चंद सक्सेना, डॉ. फणी भूषण दास को 'आत्माराम पुरस्कार'; प्रो. सूर्यप्रसाद दीक्षित, श्रीमती चंद्रकांता को 'सुब्रह्मण्य भारती पुरस्कार'; श्रीमती चित्रा मुद्गल, डॉ. जयप्रकाश कर्दम को 'महापंडित राहुल सांकृत्यायन पुरस्कार'; प्रो. ताकेश फुजिइ, प्रो. गब्रिइलानिक इलिएवा को 'डॉ. जॉर्ज ग्रियर्सन पुरस्कार'; डॉ. पुष्पिता अवस्थी, डॉ. पद्मेश गुप्त को 'पद्मभूषण डॉ. मोटूरि सत्यनारायण पुरस्कार'; डॉ. बी.आर. छीपा, श्री दयाप्रकाश सिन्हा को 'सरदार वल्लभ भाई पटेल पुरस्कार'; डॉ. महेश चंद्र शर्मा, डॉ. राकेश सिन्हा को 'दीनदयाल उपाध्याय पुरस्कार'; श्री श्रीधर गोविंद पराड़कर, डॉ. श्रीरंजन सूरिदेव को 'स्वामी विवेकानंद पुरस्कार'; प्रो. नित्यानंद पांडेय, प्रो. जे.पी. सिंघल को 'पंडित मदन मोहन मालवीय पुरस्कार' एवं प्रो. शिवदत्त शर्मा, प्रो. अशोक कुमार शर्मा को 'राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन पुरस्कार' से सम्मानित करने की घोषणा की गई। ☐

## सम्मान घोषित

५ अप्रैल को नई दिल्ली में रवींद्र भवन, साहित्य अकादेमी सभागार में देवीशंकर अवस्थी की जयंती पर डॉ. कमलेश अवस्थी द्वारा आयोजित समारोह में श्री पंकज पराशर को '२२वाँ देवीशंकर अवस्थी सम्मान' देने की घोषणा की गई। ☐

## 'लता : सुर गाथा' पुरस्कृत

राष्ट्रीय फिल्म समारोह निदेशालय (सूचना प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार) द्वारा लोकप्रिय कवि श्री यतींद्र मिश्र की वाणी प्रकाशन द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'लता : सुर गाथा' के लिए प्रथम पुरस्कार स्वरूप 'स्वर्ण कमल' पुरस्कार देने की घोषणा की गई। इसके अंतर्गत स्वर्ण कमल व ७५,०००/- रु. की राशि लेखक तथा प्रकाशक को दी जाएगी। ☐

## राष्ट्रीय संगोष्ठी संपन्न

२४-२५ मार्च को वर्धा में महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय के हिंदी एवं तुलनात्मक साहित्य विभाग की ओर से विश्वविद्यालय के गालिब सभागार में प्रो. गिरीश्वर मिश्र की अध्यक्षता में 'हिंदी कविता के बदले तेवर : मुक्तिबोध और शमशेर' विषय पर दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी आयोजित की गई, जिसमें सर्वश्री लीलाधर मंडलोई, रंजना अरगड़े, कृष्ण कुमार, ज्योति गिरी ने अपने विचार व्यक्त किए। इस अवसर पर 'अभिव्यक्ति' पत्रिका का लोकार्पण प्रो. सरजू प्रसाद मिश्र ने किया। सत्र का संचालन डॉ. प्रीति सागर ने किया। द्वितीय दिवस 'कवि शमशेर की वैचारिक भूमि' विषय पर प्रो. रंजना अरगड़े की अध्यक्षता में संगोष्ठी आयोजित हुई, जिसमें सर्वश्री जयलक्ष्मी, नवल किशोर दुबे, मनोज तिवारी ने विचार व्यक्त किए। सत्र का संचालन डॉ. अशोक नाथ त्रिपाठी ने किया तथा आभार डॉ. आशा मेहता ने व्यक्त किया। एक अन्य सत्र में प्रो. आनंद वर्धन शर्मा की अध्यक्षता में 'शमशेर की कविता और चित्रकला का अंत:संबंध एवं इंद्रिय बोध' विषय पर संगोष्ठी आयोजित हुई, जिसमें सर्वश्री लीलाधर मंडलोई, भारती गोरे व योगेश कुमार ने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. रामानुज अस्थाना ने किया तथा आभार प्रो. वशिष्ठ अनूप ने व्यक्त किया। ☐

## काव्य गोष्ठी संपन्न

१५ मार्च को अलीगढ़ के 'सार्थक संवाद' के तत्त्वावधान में होली के अवसर पर डॉ. नरेंद्र तिवारी की अध्यक्षता में काव्य गोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसमें सर्वश्री द्विवेंद्र शर्मा, मुरारी लाल शर्मा 'मयंक', अशोक अंजुम, राजेश कुमार शर्मा, यादराम शर्मा, योगेंद्र शर्मा, प्रेमकिशोर 'पटाखा', वेदप्रकाश अमिताभ, नरेंद्र तिवारी ने काव्य पाठ किया। संचालन डॉ. वेद प्रकाश अमिताभ ने किया। ☐

## संगोष्ठी संपन्न

२६ मार्च को लखनऊ में भारतीय भाषा प्रतिष्ठापन राष्ट्रीय परिषद् का आठवाँ वार्षिकोत्सव बीरबल साहनी पुरावनस्पति विज्ञान संस्थान के सभागार में श्री महेश चंद्र द्विवेदी की अध्यक्षता में आयोजित किया गया। मुख्य अतिथि श्री के. विक्रम राव तथा विशिष्ट अतिथि सर्वश्री सुनील बाजपेयी व उषा चौधरी थे। इस अवसर पर 'महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय स्तर पर हिंदी में शिक्षण—वर्तमान एवं भविष्य' विषय पर संगोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसमें सर्वश्री मोहनलाल अग्रवाल, उषा सिन्हा तथा अन्य मंचस्थ अतिथियों ने अपने विचार व्यक्त किए। परिषद् द्वारा प्रकाशित 'स्मारिका' का लोकार्पण किया गया। इस अवसर पर हिंदी में लेखन हेतु सर्वश्री के. वनजा, एन. मोहनन, रामपाल शर्मा, विनोद चंद्र पांडे 'विनोद' को सम्मानित किया गया। विभिन्न विद्यालयों के छात्रों की सुलेख/अंताक्षरी, वाद-विवाद एवं निबंध प्रतियोगिताएँ आयोजित की गईं, जिनमें क्रमश: मुसकान सोनी/अनुष्का दीक्षित, अंशिका चतुर्वेदी, सुप्रिया राज एवं आस्था दुबे को प्रथम पुरस्कार से पुरस्कृत किया गया। इसके अतिरिक्त विभिन्न कार्यालयों में कार्यरत हिंदी में उत्तम कार्य करनेवाले कर्मचारियों को भी सम्मानित किया गया। धन्यवाद ज्ञापन श्री राजेश शर्मा ने किया। ☐

## श्री अमृतलाल नागर पर संगोष्ठी

विगत दिनों हिंदी विभाग, मुंबई विश्वविद्यालय ने विद्यानगरी परिसर मुंबई में प्रसिद्ध साहित्यकार-कथाकार स्व. श्री अमृतलाल नागर की जन्मशती पर द्वि-दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया। प्रतिभागियों का स्वागत प्रो. विष्णु सरवदेजी ने किया। डॉ. सचिन गपाट ने अमृतलाल नागर के साहित्य को आधुनिक संदर्भ के रूप में प्रस्तुत किया। डॉ. भगवानदास मोरवाल ने कहा कि अमृतलाल नागर प्रेमचंद और शरत्चंद्र की परंपरा के लेखक हैं। अध्यक्षता करते हुए श्री पंकज सुबीर ने नागर की कथा परंपरा को रेखांकित किया। श्रीमती सूर्यबाला ने नागरजी को अपने संस्मरणों में याद किया। ☐

## हिंदी अकादमी के पुरस्कार घोषित

हिंदी अकादमी, दिल्ली द्वारा इस वर्ष का शलाका सम्मान वरिष्ठ आलोचक प्रो. मैनेजर पांडेय को दिया जाएगा। उन्हें पुरस्कार-स्वरूप पाँच लाख रुपए की सम्मान राशि के साथ ही प्रशस्ति-पत्र प्रदान किया जाएगा। श्री संतोष कोली स्मृति सम्मान श्री जनमति सांगवान को, हिंदी अकादमी विशिष्ट योगदान सम्मान श्री जयप्रकाश कर्दम को, हिंदी अकादमी काव्य

सम्मान श्रीमती सविता सिंह को, हिंदी अकादमी गद्य विद्या सम्मान श्री रमेश उपाध्याय को, ज्ञान-प्रौद्योगिकी सम्मान श्री राजेश जैन को, बाल साहित्य सम्मान डॉ. प्रभाकिरण जैन को, इलेक्ट्रॉनिक मीडिया पत्रकारिता सम्मान श्री नवीन कुमार को, प्रिंट मीडिया पत्रकारिता सम्मान श्री मधुसूदन आनंद को, हिंदी सेवा सम्मान डॉ. जानकी प्रसाद शर्मा को व हिंदी सहभाषा सम्मान श्री महेश कटारे सुगम को दिया जाएगा। □

## राष्ट्रीय संगोष्ठी संपन्न

२४-२५ मार्च को अमरकंटक में इंदिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, भाषा विज्ञान विभाग, लुप्तप्राय भाषा केंद्र, हिंदी विभाग एवं विद्याश्री न्यास के संयुक्त तत्त्वावधान में प्रो. टी.वी. कट्टीमनी की अध्यक्षता में 'परंपरा और आधुनिकता के प्रतीक : पं. विद्यानिवास मिश्र' विषय पर दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसमें मुख्य अतिथि प्रो. माहेश्वर मिश्र व श्री उमापति दीक्षित तथा विशिष्ट अतिथि सर्वश्री खेम सिंह डहेरिया, आलोक श्रोत्रिय एवं प्रमोद कुमार ने अपने विचार व्यक्त किए। इस अवसर पर प्रो. दिलीप सिंह को नारियल, उत्तरीय, पंचमाल, पंचपुस्तक, प्रतीक-चिह्न से सम्मानित किया गया। धन्यवाद प्रो. प्रसन्न कुमार सामल ने किया। प्रथम सत्र में 'पं. विद्यानिवास मिश्र : व्यक्तित्व एवं कृतित्व' विषय पर सर्वश्री सत्यदेव त्रिपाठी, रविकेश मिश्र, त्रिभुवननाथ शुक्ल, उमापति दीक्षित, अरुणेश नीरन ने अपने विचार व्यक्त किए। प्रो. अनंत मिश्र की अध्यक्षता में आयोजित द्वितीय सत्र में 'परंपरा और आधुनिकता का समन्वय : ललित एवं वैचारिक निबंध का संदर्भ' विषय पर सर्वश्री रामप्रकाश कुशवाहा, सुनील कुमार, प्रभाकर मिश्र, आरती स्मित, उमेश प्रसाद सिंह ने अपने विचार व्यक्त किए। प्रो. अनंत मिश्र की अध्यक्षता में सर्वश्री विजेंद्र पांडेय, आरती स्मित, अवधेश प्रधान, आशुतोष सिंह, रविकेश मिश्र, सुनील कुमार मानस, रितेश कुमार के काव्य-पाठ से समापन किया गया। संचालन श्री प्रकाश उदय ने किया। द्वितीय दिवस के तृतीय सत्र में प्रो. रामबख्श मिश्र की अध्यक्षता में 'भाषा वैज्ञानिक एवं व्याकरणिक चिंतन का परंपरागत एवं आधुनिक संदर्भ' विषय पर सर्वश्री राजकुमार उपाध्याय 'मणि', श्रद्धानंद, दिलीप सिंह ने अपने विचार व्यक्त किए। प्रो. अवधेश प्रधान की अध्यक्षता में आयोजित चतुर्थ सत्र में 'भाषा, संस्कृति और भारतीयता के चिंतन-बिंदु' विषय पर सर्वश्री बृजेंद्र त्रिपाठी, श्रीराम परिहार, प्रेमशीला शुक्ल, सुभद्रा राठौर, नर्मदा प्रसाद उपाध्याय ने अपने विचार व्यक्त किए। समापन सत्र में सुश्री साध्वी मिश्रा एवं प्रगति जैन ने स्वागत गान तथा डॉ. उमापति दीक्षित ने 'शिव तांडव' स्तुति प्रस्तुत की। सर्वश्री दिलीप सिंह, प्रभाकर मिश्र, अवधेश प्रधान, अनंत मिश्र, टी.वी. कट्टीमनी के वक्तव्यों द्वारा समारोह का समापन किया गया। संचालन डॉ. आशुतोष सिंह ने किया तथा आभार प्रो. खेम सिंह डहेरिया ने प्रदर्शित किया। □

## अंबिका प्रसाद दिव्य पुरस्कार घोषित

१६ मार्च को भोपाल स्थित साहित्य सदन में श्री जगदीश किंजल्क द्वारा दिए जानेवाले अंबिका प्रसाद दिव्य पुरस्कारों के अंतर्गत उपन्यास के लिए श्रीमती राधा जनार्दन, कहानी के लिए श्रीमती नीता श्रीवास्तव, काव्य के लिए श्रीमती श्रीति एवं श्री संदीप राशिनकर, निबंध के लिए प्रो. वरुण कुमार तिवारी, व्यंग्य के लिए डॉ. रवि शर्मा, बाल साहित्य के लिए श्री घमंडीलाल अग्रवाल को तथा गुणवत्ता के लिए सर्वश्री रामबाबू नीरव, सुदर्शन प्रियदर्शनी, देवेंद्र कुमार, शिवानंद सिंह सहयोगी, बैकुंठ नाथ, मोहन सगोरिया, आशीष कंधवे, शांतिलाल जैन, सुदर्शन सोनी, राकेश चंद्रा, आशारानी, अनघा जोगलेकर, अरविंद जैन, कमल चंद्र वर्मा, अलका अग्रवाल को सम्मानित किया जाएगा। □

## व्यंग्य महोत्सव संपन्न

१७-१८ मार्च को गोवा स्थित पार्वती बाई चैगुले कॉलेज ऑफ आर्ट एंड साइंस में प्रसिद्ध व्यंग्यकार श्री प्रेम जनमेजय की अध्यक्षता में व्यंग्य महोत्सव का आयोजन किया गया, जिसमें सर्वश्री वागीश सारस्वत, लालित्य ललित, ओम प्रकाश त्रिपाठी एवं ऋषिकेश मिश्र ने मुख्य भूमिका निभाई। विशिष्ट अतिथि श्री विवेक मिश्र एवं श्री राजेंद्र सहगल थे। समापन सत्र में मुख्य अतिथि गोवा की राज्यपाल श्रीमती मृदुला सिन्हा एवं विशिष्ट अतिथि सर्वश्री सूर्यबाला, वागीश सारस्वत, प्रेम जनमेजय थे। इस सत्र में श्री मनमोहन सरल को 'वाग्धारा जीवन गौरव सम्मान' से सम्मानित किया गया। इसके साथ ही व्यंग्य विशेषांकों का लोकार्पण किया गया। संचालन श्री लालित्य ललित ने किया तथा आभार डॉ. नंद कुमार सावंत ने ज्ञापित किया। □

## संवाद संगोष्ठी संपन्न

३० मार्च को नई दिल्ली में प्रख्यात चिंतक-विचारक प्रो. देवेंद्र स्वरूप के ९२वें जन्मदिवस पर एक संवाद संगोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसमें पूर्व केंद्रीय मंत्री डॉ. मुरली मनोहर जोशी, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सह-सरकार्यवाह डॉ. कृष्ण गोपाल तथा इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र के अध्यक्ष श्री रामबहादुर राय ने अपने विचार व्यक्त किए। इस अवसर पर प्रभात प्रकाशन द्वारा प्रकाशित प्रसिद्ध पत्रकार श्री जीतेंद्र तिवारी द्वारा संपादित प्रो. देवेंद्र स्वरूप के जीवन पर आधारित पुस्तक 'संवाद पुरुष : प्रो. देवेंद्र स्वरूप' का लोकार्पण भी किया गया। डॉ. बजरंगलाल गुप्त की अध्यक्षता में 'संस्कृति के बदलते आयाम और जीवन दर्शन' विषय पर आयोजित संगोष्ठी में सर्वश्री आर.के. सिन्हा, महेश चंद्र शर्मा, बल्देव भाई शर्मा, बनवारी ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री अशोक श्रीवास्तव ने किया। कार्यक्रम के द्वितीय सत्र में श्री बी.बी. कुमार की अध्यक्षता में 'राष्ट्रीयता के स्वर' विषय पर आयोजित संगोष्ठी में सर्वश्री के.एन. गोविंदाचार्य, जितेंद्र बजाज, मीनाक्षी जैन, चंद्रपाल ने अपने विचार व्यक्त किए। इस समारोह में विश्व हिंदू परिषद् के अंतरराष्ट्रीय महामंत्री श्री चंपत राय, संविधान विशेषज्ञ श्री सुभाष कश्यप, प्रसार भारती के अध्यक्ष श्री ए. सूर्यप्रकाश, वरिष्ठ पत्रकार श्री अच्युतानंद मिश्र सहित अनेक गणमान्य जन उपस्थित रहे। अंतिम सत्र में प्रो. देवेंद्र स्वरूप पर केंद्रित एक लघुफिल्म का प्रदर्शन भी हुआ। □

## प्रो. नामवर सिंह को महत्तर सदस्यता प्राप्त

२७ मार्च को साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली में महत्तर सदस्यता अर्पण समारोह में साहित्य अकादेमी के अध्यक्ष श्री विश्वनाथ प्रसाद तिवारी की अध्यक्षता में प्रसिद्ध आलोचक प्रो. नामवर सिंह को अंगवस्त्र एवं ताम्रफलक देकर महत्तर सदस्यता प्रदान की गई। इस अवसर पर सर्वश्री विश्वनाथ त्रिपाठी, निर्मला जैन, लीलाधर मंडलोई एवं सूर्यप्रसाद दीक्षित ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री अनुपम कुमार ने किया। □